अपनी बात

'ये कथाएँ' मे बारह विदेशी, एक दर्जन [illegible] व नौ हिन्दी की कहानियाँ सकलित हैं।

एक दूसरे से बतियाने के तरीकों का अंत नही और न ही अंत है उन बातों का जो कहने और सुनने-पढ़ने के घेरे मे सिमट आती हैं तदपि जो सब कुछ कहा जाता है वह "कहानी" की सज्ञा ग्रहण नही कर सकता। कहानी कहने अथवा अभिव्यक्ति को लेकर किये गये विभिन्न आन्दोलनों के बावजूद आज भी कहानी का कथ्य मानव के वे सघर्ष-पूर्ण प्रयत्न हैं जो उसे जीने के लिये प्रकृति, समाज और स्वयं से करने होते हैं। आग को अधिक तेज करने के लिये कोयलो पर चढ़ आई राख की परत को उतार देना होता है, इसी तरह मानव की 'जीने की यात्रा' मे आ गये ठहराव व प्रकृति-समाज-स्वयं-से सघर्षरत मानव नियति को जानने-भोगने-समझने व सम्वेदना के स्तर पर उसे झेलने के लिये आवश्यक होता है कि बार-बार उसे कथ्य और अभिव्यक्ति की सीमा मे समेटा जाये, अमर या शाश्वत कहानी —क्लैसिक स्टोरी—कही जाय।

'ये कथाएँ' की विदेशी भाषाओ की कहानियों के सकलन की पृष्ठ भूमि मे यही दृष्टि रही है। विदेशी भाषाओ की हिन्दी में अनूदित कहानियो की कमी नहीं— अलग-अलग कहानीकारों, अलग-अलग भाषाओ की कहानियों के सकलन है। लेकिन इस सकलन की कहानियां हिन्दी पाठकों के समक्ष पहली बार ही इस रूप मे सामने आ रही है। हर कहानी अपने देशी तत्व मे सिमटी हुयी है तदपि यदि पात्रों के नामों पर से दृष्टि हटाकर पढ़ा जाये तो ये कहानियाँ सर्वकालिक व सर्वदेशी होने का प्रमाण देती हैं क्योंकि इनका कथ्य केवल मानव है, उसका बाह्य-आभ्यान्तरिक शक्तियों से संघर्ष है जो उसके जीने की अनिवार्यता का अभिन्न अङ्ग है।

एक ओर जहा ये सङ्कलन विदेशी कहानियो की अधुनातन प्रवृत्तियो का दिग्दर्शन कराता है वहा दूसरी ओर इस सङ्कलन की अन्तर्भारतीय भाषाओ की कहानियाँ अपनी विविधता में सजीव हैं। एक ही देश मे विभिन्न क्षेत्रों मे जिये जा रहे विभिन्न स्तरीय जीवन की सर्वाङ्गीणता को इन कहानियो के माध्यम मे पहचाना जा सकता है। प्रयत्न यह रहा था कि यथासम्भव कहानीकार अपनी कहानी [illegible] अनुवाद करे। इस सङ्कलन की ऐसी कहानी लेखिका इना

असोव्स्काया इनाक्षी ही अपनी कहानी के अनुवाद की व्यवस्था कर पाई जबकि अधिकांश अन्तर्भारतीय कहानीकारों ने अपनी कहानियों के हिन्दी अनुवाद स्वयं किये हैं। यह इसलिये भी अभीष्ट था क्योंकि अनुवाद में यह सीमा हमेशा रही है कि मूल वैसा-का-वैसा मुश्किल से उतर पाता है। मूल लेखक यदि स्वयं अनुवादक है तो निश्चय ही यह गारंटी नहीं हो सकती कि वह अनुवाद में मूल को वैसा का वैसा उतार लेगा, लेकिन यदि अनुवाद में की भाषा पर भी उसका अधिकार है तो वह मूल से अधिक उसे उतार पायेगा। इसीलिये ये कहानियां अनुवाद होते हुये भी मूल की जीवन्तता लिये हैं।

हिन्दी की इन नौ कहानियों के कहानीकार सातवें दशक के कहानीकार हैं जिनमें कुछ तो इस संज्ञा से विभूषित हैं और कुछ उस प्रक्रिया में हैं। प्रश्न सम्भावनाओं का नहीं, उपलब्धियों का है। हिन्दी में आज कहानी के नाम पर जो छप रहा है, उनसे ये परे हैं। क्यों हैं ? किन पक्षों को लेकर हैं ? यह पाठक व आलोचक स्वयं निर्णय लें। मेरी सम्पादकीय दृष्टि का चश्मा वे (पाठक-आलोचक) चढ़ायें इसका मैं क्या आग्रह करूं ! हां एक बात अवश्य है। हिन्दी कहानियों के सङ्कलन के प्रस्तुत कहानीकार आज की हिन्दी कहानीकार पीढ़ी में नवीनतम कड़ियाँ हैं। एक साथ कई स्तरों पर जिये जा रहे समकालीन भारतीय जीवन को जैसा उन्होंने अनुभव किया है उसे अभिव्यक्त करने का प्रयत्न किया है। प्रयत्न इसलिये कि उनका संवेदनशील मानस सामाजिक संचेतना को पकड़ता अवश्य है और उतनी तीव्रता में शब्दों में उतारने का प्रयत्न भी करता है। लेकिन शब्दों की सीमाएं होती हैं जिनका अतिक्रमण कला को, शिल्प-प्रयत्नों को जन्म देता है जिसे समग्रता में जीने की अनुभूति के धनी प्रस्तुत कहानीकारों ने चुनौती के स्तर पर स्वीकारा है। अभिव्यक्ति की अक्षमता को पार करने का प्रयत्न प्रस्तुत विदेशी, अन्तर्भारतीय व हिन्दी कहानीकारों ने किया है। अतएव शिल्प के दृष्टिकोण से 'ये कथाएँ' अभिव्यक्ति के उत्कृष्ट नमूने हैं तो दूसरी ओर इन कहानियों की ताजगी का कारण है समग्र जीवन को अनुभूति की तीव्रता में उतारने का प्रयत्न ! इत्यलम्।

सभी कहानीकारों, अनुवादकों व वातायन प्रकाशन के प्रति कृतज्ञ—

बीकानेर

ये कथाएं

अन्तर्राष्ट्रीय

अनुक्रम

अमरीकी	डोरोथी पार्कर	काले गोरे	९
फ्रेंच	आल्फोंसे दाउदे	घर बिकाऊ है	१४
अंग्रेजी	एच ई बेट्स	समय	१९
रसियन	इनाअसोल्स्काया इनाश्ती	कौन हूं मैं ?	२५
नार्वेजियन	नूट हैमसन	जीवन की पुकार	३१
स्वीडिश	एलिन वागनर	हाथ कटी लड़की	३६
जर्मन	मागदा केलबर	इतनी सरल बात	४३
बुलगारियाई	एलिन पेलिन	वकील साहब	४८
चेकोस्लोवाक	योन्द्रिस्का स्मेतानोवा	वर्षा	५२
इथोपियन		इन्साफ	५६
नाइजीरियाई	आई एन. सी. अनीवो	दुविधा	६१
नेपाली	सुश्री पारिजात	मेंहदी के फूल और पाइरिया की गंध	६७

ये कथाएं

अनुक्रम

अन्तर्राष्ट्रीय

अमरीकी	डोरोथी पार्कर	काले गोरे	६
फ्रेंच	अल्फोंसे दाउदे	घर बिकाऊ है	१४
अंग्रेजी	एच. ई. बेट्स	समय	१६
रसियन	इनाकमोव्स्काया इनाक्षी	कौन हूं मैं ?	२५
नार्वेजियन	नूट हैमसन	जीवन की पुकार	३१
स्वीडिश	एलिन वागनर	हाथ कटी लड़की	३६
जर्मन	मागदा केलवर	इतनी सरल बात	४३
बुलगारियाई	एलिन पेलिन	वकील साहब	४८
चेकोस्लोवाक	थीन्द्रिस्का स्मेतानोवा	वर्षा	५२
इथोपियन		इन्साफ	५६
नाइजीरियाई	आई एन. सी. अनीवो	दुविधा	६१
नेपाली	सुश्री पारिजात	मेंहदी के फूल और पाइरिया की गंध	६७

अन्तर्भारतीय

बंगला	जरासंध	मुन्नी की मेम साब	७७
असमीया	लक्ष्मीनाथ बेजबरुवा	जल-अप्सरा	८३
उड़िया	बसन्तकुमारी पट्टनायक	समाधान	८५
गुजराती	सुरेश ह० जोशी	चकली	६०
मराठी	मंगेश पदकी	कमली और चन्द्र	६७
पंजाबी	कुलवन्तसिंह विरक	बन्द खिड़कियां	१०५
सिन्धी	सुन्दरी उत्तमचन्दानी	काश्मीरी साड़ी, ताजमहल और कुतुबमीनार	१०६

अनुक्रम

अन्तर्राष्ट्रीय

अमरीकी	डोरोथी पार्कर	काले गोरे	९
फ्रेंच	आल्फोंसे दाउदे	घर बिकाऊ है	१४
अंग्रेजी	एच. ई. बेट्स	समय	१९
रसियन	इनाक्मोल्स्काया इनाक्षी	कौन हूं मैं ?	२५
नार्वेजियन	नूट हैमसन	जीवन की पुकार	३१
स्वीडिश	एलिन वागनर	हाथ कटी लड़की	३६
जर्मन	मागदा केलबर	इतनी सरल बात	४३
बुलगारियाई	एलिन पेलिन	वकील साहब	४८
चेकोस्लोवाक	योन्द्रिस्का स्मेतानोवा	वर्षा	५२
इथोपियन		इन्साफ	५६
नाइजीरियाई	भाई एन. सी. मनीबो	दुविधा	६१
नेपाली	सुश्री पारिजात	मेंहदी के फूल और पाइरिया की गंध	६७

अन्तर्भारतीय

बंगला	जरासंध	मुन्नो की मेम साब	७७
असमीया	लक्ष्मीनाथ बेजबरुवा	जल-अप्सरा	८३
उड़िया	बसन्तकुमारी पट्टनायक	समाधान	८५
गुजराती	सुरेश ह० जोशी	चकती	९०
मराठी	मंगेश पदकी	कमली और चन्द्र	९७
पंजाबी	कुलवन्तसिंह विरक	बन्द खिड़कियां	१०५
सिन्धी	सुन्दरी उत्तमचन्दानी	काश्मीरी साड़ी, ताजमहल और कुतुबमीनार	१०९

काले गोरे

• डोरोथी पार्कर

गुलाबी मखमल पर बड़े चौड़े फूलों की पोशाक पहने, कृत्रिम सुनहरे बाल, महिला ने दिलचस्प फुदकती फिरकनी सी चाल से मेहमानों से भरे कमरे को पार किया और अपने आतिथेय की पतली बांह जा पकड़ी .

"अच्छा तुम्हें खोज तो लिया", उसने कहा । "अब तुम्हें नहीं खिसकने दूंगी".

"हलो", उसके आतिथेय ने कहा . "अच्छी हो".

'हां खूब मजे में.' उसने कहा अच्छी हूं "बहुत अच्छी हूं, सुनो. तुम्हें एक बड़ी कृपा करनी होगी . करोगे ना . प्लीज, प्लीज"

"कहिये, क्या है ?" उसके आतिथेय ने कहा

"सुनो," उसने कहा 'मैं वाल्टर विलियम से मिलना चाहती हूं. सच, मैं उस पर दीवानी हो रही हूं. आह ... जब वह गाता है. जब वह भजन गाता है मैंने बर्टन से कहा... 'तुम्हारे लिए अच्छा है कि वह नीग्रो है' मैंने कहा ..."नहीं तो तुम्हें ईर्ष्यालु होने के बहुत से कारण होते' सच मैं उससे मिलना चाहती हूं. मैं उसे बताना चाहती कि मैंने उसे गाते सुना है क्या तुम अच्छे फरिश्ते होकर उससे मेरा परिचय करवा दोगे .

'क्यों नहीं, जरूर', उसके आतिथेय ने कहा, मेरा ख्याल था, तुम उससे मिल चुकी हो यह पार्टी उसी के ही सम्मान में तो है पर वह है कहां देखें".

'वहां है, उस ओर, किताबों की अलमारी के पास' उसने कहा. जरा ठहरें जब तक ये सब लोग उससे बातें कर चुके हां, तुमने कमाल कर दिया, उसको यह शानदार पार्टी देकर, इन सब श्वेत लोगों से मिला कर . बहुत कृतज्ञ होगा वह तो.

"मैं आशा करता था, कि न हो", उसके आतिथेय ने कहा.

'पर मैं सोचती हूँ, यह बहुत अच्छा हुआ, मेरी समझ नहीं आता, काले लोगों से मिलने में आखिर बुराई क्या है. मुझे तो जरा भी झिझक नहीं होती—जरा-सी भी नहीं. मगर बर्टन, वह बिल्कुल दूसरे ख्याल का है जानते हो न वह है वर्जीनिया का रहने वाला, और तुम्हें मालूम ही है वहां के लोग इस मामले में कैसे हैं ?'

"बर्टन आज यहां आया है कि नहीं ?" आतिथेय ने पूछा .

'नहीं, नहीं आ सका', उसने कहा. 'मेरी स्थिति तो यहां विरहिणी विधवा की सी है. आते वक्त उससे यह कह आई थी 'आज रात मैं क्या कर बैठूं, कहा नहीं जा सकता'. वह

[illegible]

'हूं", [illegible]

[illegible]

नया क्या ?

बस, इतना वह कहता है एक [illegible] के लिए भी किसी गोरे के साथ एक मेज पर बैठ कर वह खा नहीं सकता और मैं कहती हूं—उससे 'बस करो जी तुम्हारी इन बातों से मुझे चिढ़ आती है. बुरी तरह पेश आती हूं उनसे. क्यों खूब सुनाती हूं ना" .

'ओह, नहीं, नहीं, आतिथेय ने कहा. 'नहीं, नहीं",

'आती हूं जानती हूं, बुरी तरह पेश आती हूं ."

बेचारा . बर्टन . और मैं, मेरी भावनाएं ऐसी नहीं है . मुझ में जातीय पक्षपात नाम को भी नहीं . कुछ काले लोग तो मुझे हैं ही बेहद पसंद . वे तो बच्चों से हैं— सदा मस्त मौला, हमेशा हंसते गाते ! है ना वे लोग संसार में सबसे मौजी लोग . सच, उनकी बोली सुनते ही मुझे हंसी आती है, मजा आता है, . मेरी काली धोबिन है, सालों से मेरे पास है, और मुझे उसका कितना लिहाज है, है भी वह एक चरित्र और मैं तुम्हे बताना चाहूंगी, मैं उसे मित्र की तरह मानती हूं. समझे ऐसा मानती हूं उसे और बर्टन से मैं कहती हूं. 'अच्छा भगवान के लिए समझो तो हम सब इंसान हैं. है कि नहीं ?

"हैं" आतिथेय ने कहा—, हां जरूर है"

"अब इस वाल्टर विलियम को ही लो", उसने कहा, मैं समझती हूं, वो आदमी सच्चा कलाकार है. सोचती हूं उसे तो बहुत प्रेम मिलना चाहिए. हे भगवान, संगीत के पीछे मैं तो इतनी दीवानी हूं. रत्ती भर परवाह नहीं की कि उसका रंग कैसा है. सच्च मैंसोचती हूं. अगर कोई कलाकार है तो उससे मिलने में किसी को संकोच न होना चाहिए

ठीक यही बर्टन से कहती हू. है न मेरी बात ठीक ?"
,,हां, उसके आतिथेय ने कहा." "ओह, हां".
"मेरी तो यही भावना है," उसने कहा, "समझ मे नही आता लोग संकीर्णमना क्यों होते हैं ? मैं, मैं तो यकीनन सोचती हू वाल्टर विलियम जैसे आदमी से मिलना तो एक सौभाग्य है. हां, यही मेरा विचार है. मुझ मे पक्षपात है ही नहीं. आखिर सोचो, ईश्वर ने ही उसे बनाया है, जैसे और हम सब है. क्यो बनाया है. ना उसीने ?"
"अवश्य", उसके आतिथेय ने कहा, हां, निश्चय ही",
"यही तो मैं कहती हू", उसने कहा "ओह मुझे कितना क्रोध आता है, जब लोग कालों के प्रति संकीर्णमना होते हैं बडी मुश्किल से अपने पर काबू करके चुप रह पाती है हां, यह मैं मानती हू कि सीवदमाश नीग्रो से सबका पाला पड़ जाय तो वह भयंकर होता है पर जैसा बर्टन से कहती हू, इस दुनिया मे गोरे लोगों मे भी तो बदमाश है. है कि नही ?"
"मेरे अनुमान से है", उसके आतिथेय ने कहा.
"मैं तो बहुत खुश हू यदि वाल्टर विलियम सा आदमी कभी कभी हमारे घर आये, गाना सुनाये" उसने कहा. यह ठीक है, बर्टन की वजह से मैं उसे निमन्त्रण नहीं दे सकती. मगर मेरी तरफ से कोई रुकावट नही. आह क्या गाता है ? है न चमत्कार, कैसे इन लोगो के मन मे संगीत बसा हुआ है. और उनमें ऐसा होना मुझे पूर्णतया उचित लगता है. चलो, उसके पास चलकर बातें करें. सुनो, परिचय के समय मुझे क्या करना चाहिए. हाथ मिलाना या कुछ और ?"
"क्यों, जैसा तुम चाहो," उसके आतिथेय ने कहा ?
"सोचती हू हाथ मिलाना ही ठीक रहेगा," उसने कहा ! "कभी नहीं चाहूंगी कि वह सोचे मुझ मे पक्षपात है . सोचती हू अच्छा यही रहेगा कि हाथ मिलाऊँ ठीक जैसे और सभी से मिलाती हू . मैं ठीक ऐसा ही करूंगी ."
वे किताबों की अलमारी के पास खड़े लम्बे युवा नीग्रो के पास पहुंचे. आतिथेय ने परिचय कराया, नीग्रो ने आदर पूर्ण झुक कर अभिवादन किया .
"मिजाज शरीफ," उसने कहा .
गुलाबी मखमल पर पोस्त के फूलो वाली महिला ने पूरी बाँह बढ़ाकर हाथ आगे फैलाये रखा जिससे सारी दुनिया देख सके—और नीग्रो ने हाथ मिलाकर मानो उसे लौटा दिया .
"ओह, अच्छे है आप, मिस्टर विलियम" उसने कहा .
"मिजाज खुश है . मैं अभी अभी कह रही थी, आपका गाना कितना अच्छा लगा. मैं आपके संगीत के आयोजनों में गई हू . आपके रेकार्ड भी हैं हमारे हां . है आह कितना आनन्द आता है मुझे ."

वह बहुत स्पष्टता से बोली, अपने होंठ सावधानी से हिलाते हुए, मानो किसी बहरे से बात करने की कोशिश में हो .

"मुझे बड़ी खुशी है," उसने कहा .

'आपके उस "वॉटर बेबी" वाले गाने पर तो मैं कुर्बान हो जाती हूँ', उसने कहा, "सच मन से वो गाना तो निकलता ही नहीं. हर समय उसे ही गुनगुनाते रहने से मेरे पति तो तंग आ जाते हैं. बिल्कुल हूबहू के टक्कर से काले–गोरे, जाने दीजिये. हां, बताइये, आखिर ऐसे प्यारे-प्यारे गाने आप लाते कहां से हैं ? कैसे मिल जाते हैं आपको ?"

"जी", उसने कहा 'कितने ही सुन्दर गाने ....".

'मेरा ख्याल है उन्हें गाने में आपको बड़ा आनन्द मिलता होगा, वे प्यारे-प्यारे पुराने भजन. आह, मुझे अतिप्रिय हैं वे. और आजकल क्या कर रहे हैं आप. अभ्यास जारी है ? कोई और आयोजन क्यों नहीं करते."

'इस महीने की सोलह को दे रहा हूँ एक प्रोग्राम," उसने कहा.

'अच्छा, मैं आऊँगी," उसने कहा, आ सकी तो जरूर आऊँगी. आप भरोसा रखें, अरे लो लोगों का रेला का रेला यह चला आ रहा आपसे मिलने. वाह आप तो आज बाकायदा मुख्य आदरणीय अतिथि हो रहे हैं. अरे! वो सफेद कपड़ों में लड़की कौन है ? मैंने कहीं न कहीं देखा है उसे .

'वह कैथरीन बर्क हैं", उसके आतिथेय ने कहा .

"हे भगवान", उसने कहा यह है कैथरीन बर्क ?

वाह,मंच से हटकर तो बिल्कुल भिन्न दीखती है. मैं सोचती थी वह कहीं अधिक सुन्दर होगी जरा भी ख्याल नहीं था वह इतनी काली होगी. अरे ! वह तो बिल्कुल नी ... लगती है. ओह. मेरे ख्याल से वह बेहद अच्छी अभिनेत्री है. मिस्टर विलियम, मैं समझती हूँ वह कमाल करती है . आप क्या सोचते हैं ?

'जी हाँ मेरे ख्याल से भी", उसने कहा .

'हां मैं भी यही सोचता हूँ. कमाल की. अरे हां आदरणीय अतिथि से बात करने का हमें औरों को भी तो अवसर देना चाहिये. अच्छा मिस्टर विलियम भूलियेगा नहीं. हो सका तो आपके संगीत आयोजन में जरूर आऊँगी. आऊँगी और खूब तालियां बजाकर प्रशंसा करूँगी. और मैं नहीं भी आ सकी तो सारे जान पहचान वालों से कहूँगी–जरूर जायें. आप भूलियेगा नहीं ."

'नहीं भूलूँगा", उसने कहा . 'बहुत बहुत शुक्रिया".

आतिथेय ने उसकी कोट सम्भाली और उसके पास के कमरे में ले गया .

'ओह हो, प्रियवर उसने कहा, "मैं तो मर-सी गई. सच, ईमान से कहती हूँ, मुझे तो गश आ गया . तुमने गौर किया कितनी बेतुकी बात मैं कह गई . बस मेरे मुँह से निकलते निकलते रह गया—बैंधरीन वर्क तो हब्शिन-सी लगती है ऐन वक्त पर आगे किसी तरह रोक ही लिया . ओह, तुम्हारे ख्याल से वाल्टर विलियम ने भी गौर किया क्या ?

'मैं समझता हूँ नहीं," उसके आतिथेय ने कहा .

'तब शुक्र है, उसने कहा वह लज्जित हो, उसे बुरा लगे, मैं कभी नहीं चाह सकती . कितना भला आदमी है ? कितना तमीजदार ! जानते हो, इतने सारे काले लोग ऐसे है, बस जरा अच्छी तरह बात करलो तो सर पर चढ़ने लगते हैं . पर उसमें ऐसी बात जरा भी नहीं है सोचती हूँ, वह काफी समझदार है वाकई अच्छा आदमी है, क्यों, है ना" .

"हाँ", उसके आतिथेय ने कहा .

"मुझे पसंद आया ", उसने कहा . 'वह काला है इसका मुझे जरा भी ख्याल नहीं उसके साथ मैं ऐसी ही स्वाभाविक रही जैसे औरों के ऐसी ही स्वाभाविकता से बातचीत की मैंने . मगर सच, चेहरा दुरुस्त रखने में बड़ा जोर पड़ा . बस मैं बर्टन की ही बात सोचती रही देखना क्या मजा होता है—जब मैं बर्टन को बताऊँगी कि मैंने उससे 'मिस्टर' कहा .

—अनुवादक विमान सिन्हा

गुजराती कहानी

चकती

• सुरेश ह. जोशी

पश्चिमी क्षितिज पर बादल छाये हुए थे, इससे ढ़लते हुए सूर्य की रक्तिम आभा नज़र नहीं आ रही थी. जहां बादल कुछ छितरे थे, वहां से रक्तिमा की एकाध छोटी-सी लकीर दिखी-न-दिखी कि पसरते हुए अंधकार में विलीन हो गई; मानो किसी नागिन ने सूंघकर अंधकार के ज़हर की थैली को उड़ेल दिया हो. उस उड़ेले हुए अंधकार ने प्रभाशंकर को भी चारों ओर से घेर लिया.

प्रभाशंकर ने आले से पनौटी ली, उसे खोल कर, आँख मिचो कर देखा तो अन्दर मुरझाया हुआ आधा पान ही था. हंसमुख को दो दिनों से पान ले आने का बारबार स्मरण दिखलाने पर भी वह भूल जाता था. प्रभाशंकर ने सावधानी से आधे पान के दो टुकड़े किये. उनमें से एक टुकड़ा बड़ी हिफ़ाज़त के साथ पनौटी में रख दिया और दूसरे पर चूना-कत्था पोतने लगे. पान मुँह में रखा और साथ में तम्बाखू की चुटकी भी.

बाहर की गली के रोशनदान से एक तेज रेखा आगे वाले कमरे में पड़ती थी, उसी रोशनी में खूँटी पर लटकाया हुआ कोट लेकर प्रभाशंकर ने पहना. सर पर टोपी पहनी. एकाध घूंट पानी पीकर ही बाहर निकलने की उनकी आदत थी. जब तक उनकी बूढ़ी पारबती जीवित थीं तब तक तो बाहर जाने का समय होने पर तुरन्त पानी का प्याला लेकर उपस्थित रहती थीं. ऐसे कई छोटे मोटे काम पिछले एक वर्ष से उन्हें खुद ही कर लेने पड़ते थे.

पानी के लिए प्रभाशंकर पनसाल के पास गये. एकाध घूँट पानी पीकर लौटने ही वाले थे कि एकाएक मानों किसी ने पीछे से उनके कोट की आस्तीन पकड़ कर उन्हें रोका. हठात् उनके मुँह से निकल गया: 'क्या है हंसमुख की मां ?'

निःस्तब्ध अंधकार में वह प्रश्न भटकने लगा. प्रभाशंकर आंख खींचकर अंधकार में एक टक देखते रहे. सुँघनी का एक सटाका लेकर, फिर ज़रा खखारा. 'हमने कहा' कहकर, पारवती को बात करने की आदत थी. बड़े लड़के मणिशंकर की मृत्यु के बाद प्रभाशंकर कई बार अन्यमनस्क हो जाते थे, तब पारबती को बहुधा उनकी आस्तीन खींचकर बुलाने की आदत बन गई थी. प्रभाशंकर को स्मरण हुआ. शादी किये दो वर्ष हुए होंगे शायद. तब तो उनके बूढ़े मां-बाप भी घर में मौजूद थे. खाना खाकर प्रभाशंकर नौकरी के लिए रवाना होने को थे. अपनी आदत के

मनुसार घूँट पानी पीकर रसोई से बाहर पांव धरने वाले ही थे कि ऐसे ही कोट की आस्तीन खींचकर, उन्हें रोक कर पारवती ने 'वह मां होने वाली है' ऐसा शुभ सम्वाद सुनाया था. संयुक्त कुटुम्ब में मर्यादा का पालन करके रहना होता है, इसलिए एकाध क्षण तनहाई प्राप्त करके दो-एक शब्द बोलने का सौभाग्य क्वचित ही नसीब होता था. रात में मां-बाप को भागवत-कथा सुनाकर प्रभाशंकर सोने के लिए जाते तब पारवती सारे दिवस के काम-काज से श्रान्त, चढ़ी हुई आंखों से, जागने का प्रयत्न करते हुए बिछौने के छोर पर बैठी नज़र आती. वैसे भी प्रभाशंकर उन आदमियों में से थे, जो चार शब्दों के स्थान पर एक ही बोलते हैं.

आंखें पथराने वाली थी, उसी दिन पारवती ने ऐसे ही हाथ थाम कर, सानुनय रोकते हुए कहा था: 'आज न जायें तो नहीं चल सकता ?' लेकिन दूसरे ही क्षण, प्रभाशंकर नित्यनियम में कोई व्याघात बर्दाश्त नहीं करने वालों में से है, उसका स्मरण होते ही बात को बदलते हुए कहा था . 'ना, ना यह तो जाने मुझे, क्यों ऐसा हो गया, यों ही---लो, एकाध घूँट पानी पीकर ही फिर चलना.'

और, दरवाज़े की अरगनी में कोहनी परसे फटा हुआ कोट फँस जाने से रुके तो हठात् मुंह से निकल गया. 'क्या है हमसुखी की मां ?' लेकिन वह मुँधनी के सटाके की आवाज़ और 'हमने कहा' की पुकार नहीं सुनाई दी इसलिए प्रभाशंकर स्वगत ही बड़बड़ाने लगे: 'क्या है ? कोट फट गया है यहां कहनी हो ना ? तो क्या चकती लगाऊँ ? लेकिन सूई-धागा है कहां जो—?'

फिर प्रभाशंकर कुछ देर बेचैन-से, हाथ मलते हुए ज्यों-के-त्यों खड़े रह गये. फिर जाते पारवती का उतरा हुआ चेहरा देखकर बोले 'पर तू ही बता न, क्या करूँ मैं ? मैं बहू को बार बार कह सकता. खैर, लगाता हूँ चकती; बस, फिर है कुछ ?' 'चकती शब्द तीन-चार बार बारबार बोले और उन्हें कुछ स्मरण हो आया : लगातार तीन-चार साल अच्छे नहीं गुज़रे. घरघराना सब आग की लौ में —भस्म हो गया. ज़मीन तो कसम खाने भर को भी थी नहीं. पिता ग्रामयाजी थे. बहनों के विवाह-शादी का प्रश्न था. इसलिए पन्द्रह की आयु से ही प्रभाशंकर एक व्यापारी के यहां तम्बाखू की पुड़िया लपेटने बैठ गये. वर्नाक्युलर फाईनल तो पास कर लिया था; इसमें पाच साल की प्रतीक्षा के बाद आखिर बहुत दूर के एक अनजाने गांव में, पन्द्रह रुपया महीना प्राथमिक शाला के अध्यापक की नौकरी मिल गई. घर-गिरस्ती, बहनों की शादी-विवाह आदि का खर्च उठाते उठाते पैंतीस तक तो पहुँच गये. अन्ततः प्रभाशंकर को अपना घर बसाने की अनुकूलता भी प्राप्त हुई. विवाहोपरान्त गौने के लिए जब ससुराल गये तब पारवती के साथ जो बात हुई थी उसका प्रभाशंकर को स्मरण हो आया. उन्होंने कहा था. —

"मेरी तो उम्र अब ढलने को है , संसार का बोझ ढ़ोते–ढ़ोते मैं तो रंग भी गंवा चुका हूँ . मेरे साथ रहना तुम्हें कैसे गवारा होगा ?"

तब पारवती ने अपनी सखियों से पढ़ा हुआ उत्तर दिया था . "मेरे लिए तो आप ही सब कुछ हैं, फिर मुझे और कुछ क्या चाहिए ?"

प्रभाशंकर ने जिरह करते हुए कहा था .

"लेकिन हमारे यहाँ तो 'अस्सी की आमद और चौरासी का खर्च' जैसा हाल है . संसार–सुख भोगने की अपेक्षा चकतियां टांकने का ही कार्य तुझे ज्यादा करना होगा ."

पारवती ने सोत्साह कहा था : 'कोई हर्ज नहीं. आप कहेंगे इतनी थिगलियां लगा दूँगी . थिगलियाँ लगाने में मैं थकान का अनुभव नहीं करूँगी .'

परन्तु आज है कहाँ वह ! आखिर वह भी थक गई ना ?

देव के सम्मुख दीया जलाने और लालटेन सुलगाने के लिए प्रभाशंकर ने दीया–सलाई की खोज की, पर नहीं मिली. लेकिन दीयासलाई को टटोलते हुए एक डिब्बे में से सूई–तागा हाथ लग गया . उसे लेकर प्रभाशंकर उसारे में गये. गली के दीये की रोशनी में उन्होंने कितनी चकती लगानी होगी उसका अन्दाजा निकाला . अपनी बैठने की गद्दी के नीचे एकत्रित लत्तों–चीथड़ों से ठीक नाप का एक टुकड़ा निकाला . उसका रंग कोट के रंग का सा नहीं था; लेकिन ऐसा कपड़ा लाए कहाँ से ? इस कोट को भी उतने ही वर्ष हुए थे, जितने हंसमुख को . मणिशंकर इसे मिलिटरी के रद्द किये हुए नीलामी कपड़ों से सस्ते दामों में ले आया था .

प्रभाशंकर ने आंख गड़ाकर, दीये के प्रकाश में सूई पिरोने का प्रयत्न किया . धागे को थूक से गीला कर छोर को गेंठा . लेकिन लाखों कोशिश करते हुए भी सूई का नाका (छेद) दिखे तब न .

तभी गली के दीये से टपकते उजाले में खेलते हुए एक किशोर की दृष्टि उधर पहुँची . कुछ देर तक तो वह कौतूहल से प्रभाशंकर के निष्फल प्रयासों को देखता रहा, फिर समीप आकर बैठा और दीवार की परतें उखाड़ता हुआ प्रभाशंकर की [illegible] को निरखता रहा .

[illegible] उन्होंने कहा . 'कौन है बेटा ? दा- [illegible] किशोर ने कहा . 'हाँ, दादा !'

[illegible] किशोर के [illegible] सम्बोधन से प्रोत्साहित होकर कहा : 'भाई [illegible] ."

मनु ने कहा : "अवश्य दादा, लेकिन एक शर्त . आपको एक कहानी सुनानी होगी ."

प्रभाशंकर ने हँसते हुए कहा : 'कहानियां सुनाना तो तेरी दादी को आता था . मैं तो ....'

उनकी बात को बीच ही में काटते हुए मनु बोला . "ना दादा, ऐसे बहाने बनाने से नहीं चल सकता . दादी ने आपको तो बहुत-सी कहानियाँ सुनाई होंगी . उनमें से ही एकाध सही ."

प्रभाशंकर पराजित हुए . उन्होंने कहा 'खैर, तू सुई पिरो दे, फिर कहानी सुनाता हूँ .'

मनु ने झट से सुई पिरो दी . प्रभाशंकर कपड़े का वह टुकड़ा ओट कर जैसे बन पड़े बखियाने लगे . मनु कौतूहल से विस्फारित नेत्र लिये, सरक कर उनकी बगल में जा बैठा .

प्रभाशंकर ने कहानी का आरंभ किया 'बहुत ·····बरसों पहले की बात है ....'

मनु ने पूछा : 'कितने ? सौ, दो सौ ·······?'

प्रभाशंकर ने कहा : 'ना, एकाध हजार साल पहले की बात है तब एक राजा था . उसके एक राजकुमार था उसका नाम था चिरायु बचपन से ही वह खूब सुन्दर था . उसे जो देखता, उस पर सौ जान से बलिहारी हो जाता . वह दिन दूना रात चौगुना बढ़ता ही गया . वह ज्यों बढ़ता गया, उसकी कान्ति भी उतनी ही ज्यादा बढ़ती गई . राजा और रानी जब उसे देखते, देख कर आँसुओं से मुँह धोते रहते ....'

मनु ने कहा : 'अजीब बात है . ऐसे सलोने कुँवर को देख कर आँखें प्रसन्न करने की अपेक्षा राजा-रानी आँसू गिराये !'

प्रभाशंकर बोले : 'हाँ भाई ! वह ऐसा खूबसूरत था तभी तो उसे देखकर राजा-रानी के दिल में हुआ करता था कि ऐसी कंचनमयी काया भी एक दिन मुरझा ही जाने वाली है न ? उन्हें इसका दुःख था और तभी आँखों से आँसू बहते रहते ··· ···'

मनु ने 'हाँ, करते हुए कहा' ' हूं ::::·· फिर ?

प्रभाशंकर ने बात का दौर जारी रखते हुए कहा : 'यों ही महीने बढ़ते जाते हैं. साल गुजरते जाते हैं, राजकुमार सोलह वर्ष का हुआ . सारे नगर में बड़ी धूम-धाम से उसकी सालगिरह मनाई गई . उसी वक्त यह सम्वाद राजा के कानों तक

पहुँच गया कि राजधानी में कोई बड़े चमत्कारी सिद्ध पुरुष आये हुए हैं . वे नगर से बाहर, बरगद के बड़े पेड़ की छाया में, धूनो रमा कर बैठे थे . राजा और रानी उनके सम्मुख हुए . सुवर्णथाल में फल धर कर कहा : 'महाराज, हमारी एक इच्छा पूर्ण करोगे ?'

सिद्ध पुरुष बोले : 'कहो, क्या कामना है ?'

रानी ने कहा : 'हमारा इकलौता राजकुमार हमेशा के लिए ही वैसा ही सुन्दर और युवा रहे ऐसी हमारी इच्छा है .'

सिद्ध पुरुष ने कहा : 'अच्छा . लेकिन एक बार बराबर सोच लो .'

राजा ने कहा, 'महाराज, हम तो दिनरात इसी बात की रटन करते रहते हैं . हमें अब ज्यादा सोचने को क्या रह जाता है ?'

सिद्ध पुरुष ने कहा, 'ठीक है , मैं उसके लिए एक चमत्कारिक रेशमी वस्त्र देता हूँ, जिसे वह अपनी देह से कभी अलग न करे . काल का उस पर कोई असर नहीं होगा और उसकी काया तनिक भी नहीं मुरझायेगी, जब तक यह वस्त्र उसके अंग पर रहेगा .'

राजा और रानी यह सुनते ही आनन्द विभोर हो उठे . उन्होंने झुक कर सिद्ध-पुरुष की चरण--रज को सिर पर चढ़ाया .

फिर सिद्ध पुरुष ने कहा : 'लेकिन एक बात है . यदि तुम दोनों में से किसी एक के भी दिलमें कभी उसके लिए तनिक भी दूषित विचार घुस आया तो उस वस्त्र में छिद्र पड़ जायेगा और फिर वह बड़ा होता चला जायेगा .'

यह सुनना था कि राजा और रानी के चेहरे उतर गये. फिर राजा बोले.-- अपनी आंखों के तारे-से बेटे के लिए हमारे दिल में कोई कुविचार तो नहीं आ सकता, पर ईश्वर न करे...'

रानी ने बात का सिलसिला निकालते हुए कहा. 'हां, ऐसा कुछ हो जाय तो उस वस्त्र को सिला नहीं जा सकता क्या ?"

सिद्ध-पुरुष ने कहा : 'सिला तो जा सकता है, लेकिन वह बड़ा दुष्कर कार्य है.

राज-रानी एक साथ बोल उठे: 'क्यों ?'

सिद्ध पुरुष ने कहा, 'उसे सिलने के लिए जितने टांके मारने पड़े उतने वर्ष अपनी आयु ने प्रदान करने वाला कोई मिल जाय, तब वह उसे जोड़ सकता है, बशर्ते क अपने वर्ष प्रदान करने वाले ने उन देय वर्षों के समय में कुछ पाप न किया वे वर्ष बिलकुल निष्कलंक होने चाहिए ?

ा-रानी यह सुनकर कुछ देर के लिए सोच में पड़ गये, लेकिन फिर तुरन्त कहा.

'अच्छा महाराज, हमें सब कुछ मंजूर है.'

सिद्ध-पुरुष ने कहा, 'अब भी एक बार सोच लो. यदि उसके वस्त्र में छिद्र पड़ गया तो उन सभी विगत वर्षों का असर उसकी काया पर एक साथ होगा और जब तक वस्त्र सिला नहीं जायेगा, अगणाणधारी धीरे-धीरे गलता ही जायेगा. फिर भी वह मर नहीं सकता, जब तक शरीर पर वस्त्र रहेगा.'

राजा-रानी को अब कुछ भी नहीं सुनना था. उन्होंने तो आतुरता पूर्वक वह रेशमी वस्त्र माँगा. सिद्ध-पुरुष ने वह वस्त्र, उसके ठीक मध्य भाग में स्वस्तिक अंकित करके दिया. तब राजा-रानी तो राजमहल को लौटे. बड़ा दरबार लगवाया. वहां बड़े ठाटबाट से राजपुरोहित के हाथों, राजकुमार को वह रेशमी वस्त्र पहनाने की विधि सपन्न हुई.'

मनु ने पूछा : 'फिर ?'

प्रभाशंकर ने बतिया करते हुए कहा. 'फिर तो साल पर साल गुजरते चले जाते है. राजा बूढ़े हुए. रानी भी वृद्ध हुई; लेकिन चिरायु तो था वैसा ही सुन्दर और सोलह वर्षीय युवा राजकुमार ही रहा. चिरायु तो अब गुलछर्रे उड़ाने लगा. एक राजकुमारी से शादी की और कुछ उम्र पार हुई ही नहीं कि उसकी ओर से आँखें फेर कर दूसरी को अंगीकार कर लिया. इसकी तो फिर कुछ सीमा ही नहीं रह गई.

एक दिन राजा और रानी झरोखे में बैठे हुए थे कि समीप से किसी की फूटफूट कर रोने की आवाज सुनाई दी. उन्होंने देखा तो राजकुमार की आँखों से उतरी हुई (व्यक्त) रानी ही अपने भाग्य के दुर्विपाक पर रो रही थी. राजा उसे आश्वासन देकर शान्त करने के प्रयत्न में ही थे कि उसने जीभ काट कर आत्महत्या कर ली.

राजा-रानी इससे अत्यन्त खिन्न हो गये और उनके मुंह से फूट पड़ा : 'इससे तो यह अच्छा है कि जवानी ही न हो.' और बात की बात में उस सिद्ध-पुरुष के वचनानुसार ही हुआ. चिरायु के रेशमी वस्त्र में छिद्र बन गया और दूसरे ही क्षण राजकुमार का सारा हुलिया ही बदल गया. उसकी देह पर झुर्रियां पड़ गई, पीब से पुते हुए चाव बिलबिला उठे. उसे देख कर लोग मुंह फेर कर भागने लगे. चिरायु तो गिरता-पड़ता राजा-रानी के पास आया और गिड़गिड़ाकर कहने लगा: 'मेरी रक्षा करो, मेरी रक्षा करो.'

रानी बिलख-बिलख कर रोने लगी. उसने उसे अंक में भर लिया और वह फटे हुए रेशमी वस्त्र को थकती लगाने बैठी. वह बखियाती रही, लेकिन वस्त्र तो टँकता ही नहीं. फिर राजा ने बखियाने का प्रयत्न किया, लेकिन वस्त्र तो जुड़ता ही नहीं.

राजा-रानी थोड़े ही पापमुक्त थे ! फिर तो राजा के दरबारियों ने यत्न किया, किन्तु बेकार !

यों दिन-ब-दिन छिद्र बढ़ता ही चला गया. उसे टांकने के उपयुक्त निष्कलंक वर्ष किसके पास धरे हों ? राजा और रानी ने तो कुंअर की यह दशा देखते हुए आंखें मूंद लीं. फिर चिरायु तो निकल पड़ा···· .

मनु ने पूछा, 'लेकिन क्यों उसने उस वस्त्र को उतार नहीं फेंका ?'

प्रभाशंकर बोले, 'उसके मन में ऐसा लोभ जो था न कि शायद कोई वस्त्र को टांकने-वाला मिल जाय और जवानी लौट आये. लोग कहते हैं कि कभी-कभी रात के अंधकार में कोई कंकाल-सा बूढ़ा, चिथड़ों से ढंका हुआ डगमगाते चरण आँगन में आकर खड़ा रहता है और कहता है : 'चकती लगा दोगे ?' फिर प्रतीक्षा में तनिक ठहरता है. आखिर उत्तर नहीं मिलने पर आगे बढ़ जाता है.'

मनु सोच में पड़ गया. कुछ देर तक वह चुप बैठा रहा. फिर कुछ सूझते ही उसकी आंख चमक उठी. हठात् वह बोल उठा : 'दादा, आप तो रात में बड़ी देर तक ओसारे में बैठे रहते हैं, आपको शायद वह कभी दिखाई दे तो मुझे पुकारना हम दोनों मिल कर उसका रेशमी वस्त्र उतार फेंकेंगे . फिर उसे भटकना तो न होगा. ठीक है न ?'

प्रभाशंकर ने कहा, 'हाँ' .

मनु सन्तुष्ट होकर उठ खड़ा हुआ और चला गया. प्रभाशंकर उसकी ओर आँखें गड़ा कर क्षणभर अविचल भाव से बैठे ही रहे, तब बखिया करते हुए उंगली की नोक में सूई चुभ गई तो सूई तागा निकाल कर उठ खड़े हुए और फिर घर के भीतर के अंधकार में गायब हो गये.

--अनुवादक : राजन कड़िया

कमली और चन्द्र

● मगेश पदकी

ढोरों के गोठ मे खट खट की आवाज होती ही रहती है. कमली के छोटे से नये-नये नये सीग रस्सी बाधने के खूँटे से टकराते रहते है. किसी ने उसे ब्राह्मण के घर दान में दे दिया है और वह मस्ती में आ गयी है. भीमाचाची उसे दो-दो रास बाध कर जकड़ देती है एक रास बाध कर उसे थामना कठिन है. वह झटके से ही पगहा तोड़ देती है.

रसोईघर मे यमू की अगुलियाँ चावलों मे अनदेखे ही फिरती है. चावल के खुरदरे स्पर्श मे उसके शरीर पर दानेदार रोमाच उठते है. हल की तरह बार बार अंगुलियाँ चावलों में फिरती है. अगुलियो को स्पन्दित करता वह खुरदरा स्पर्श न हो, ऐसा भी नही लगता.

"यमू री, अभी तक तू बाहर ही कैसे ?" भीमाचाची ने बहुत पहले पिछले आँगन से पूछा था.

'जी', बाहर बरामदे मे दीये को रखते यमू ने आवाज दी थी.

"तुम अभी तक बाहर कैसे, मैंने कहा, चूल्हे मे आग जलायी ?"

"जलाती हूँ."

"चावल ले लो साफ करने का," भीमाचाची ने कहा था.

वह हाडे मे से पानी लेकर घिस घिस कर हाथ-पाव धो रही थी. केले के थुँधे पर कुल्ले करती जाती थी

"बड़ी मस्ती मे आई है रॉड की. मरी को डाभ ही देना चाहिए. पाँडू को कहना होगा."

"औ.....?" यमू घर मे बैठे बैठे ही सहम उठती है.

"तुझे नहीं, कमली से कहती हूँ. अभी-अभी फाटक का डंडा ही तोड़ डाला 'मरी' ने. पाव ही तोड़ देती हूँ" आँगन के कोने में आड़े बास के फाटक से लगी भैस बेचारी समझदारी से रुक कर जुगाली कर रही थी पर कमली को गले मे अटकाये हुए डडे की परवाह भी नही थी. चौकड़ी भर कर उसने फाटक पार किया था. उसके खुरो से सबसे ऊपर का डडा खट से टूट कर उड़ गया था. पीछे पीछे लड़खड़ाती आती भीमाचाची के सर में ही गिरने को था.

"धत् तेरा मुर्दा निकले . आग लगे तेरे थान को . बैल सी मस्ता गई. ठहर तुझे ठिकाने लगाती हूँ ." भीमाचाची बड़बड़ाती रही . कमली को खूँटे से बांध कर उसे धोबी की लय में पीटती रही .

यमू अपना पल्ला सँवारती हुई मंझले घर में जाती है . झटपट चूल्हे में आग सुलगाती है . सूप में चावल लेके बैठती है . मिट्टी के तेल के दीये के धूंए से आंखों में कांटे से गडते हैं. पानी झरने लगता है. नंगी लौ की धांच से माथा-गर्दन पसीने से तर हो जाते हैं .

उसकी अंगुलियां चावलों में अनोखेपन में घूमती हैं .

"पांडू आया ?"

"ना ." उसकी अंगुलियां अचानक रुक जाती हैं . आवाज़ मुंह से यूं ही निकल पड़ती है .

"ठीक . मैं कहती हूँ, उसके होते हुए बाहर काम क्या चल रहा था तेरा ?"

'तुलसी को दीया करती थी . बार–बार हवा से बुझता था .

"बरामदे में रखना था ."

"रखा भी ."

"पांडू के लिए भी चावल रखने हैं, ध्यान में है न ?"

"जी ."

"उसके होते हुए बाहर बरामदे में जाने का कोई काम नहीं ."

"हाँ." यमू ओठों पर जीभ फेरती है और चावल में सारे ख्यालों को गाड़ लेती है. "क्या ताकती हो इतना ?" दोपहर पूजा करते समय भीमाचाची ने पूछा था. तब भी उसके होंठ ऐसे ही खुश्क हो उठे थे . अकस्मात कुंए पर उलटी दिशा में छूटे हुए रहट की तरह उसके मन ने भी धड़धड़ किया था .

पिछले आँगन में पानी के गिरने की धड़ धड़ आवाज़ उसने सुनी . यूं ही उसने उस तरफ झांका था . एक सीढ़ी उतर कर उसने आवाज़ की दिशा में देखा था .……और झट से नज़र फेर ली थी . चट ही वह घर में भी आ चुकी थी .

पर इतने में भीमाचाची ने उसे टोका था . पांडू नहा रहा था; भीमाचाची जानती थी . खिड़की में से वह दिखाई देता था . उसके घने काले पत्थर जैसे अंगों पर से पानी की धारा बहती थी. बहते पानी की धार सीधी धूप में कलाबत्तू जैसी चमकती थी . भरी गागर को एक ही झटके में सहज उठाते समय उसके शरीर की प्रत्यन्चा झंकृत–सी हो उठती है––उसमें ठोस कर भरी ताकत की

सदा प्रेक्षक के मन में पुलक उठती है . गागर का भार और भुजदण्ड की शक्ति दोनों का प्रदर्शन हो उठता था .

"सर्प सा कुछ है ." यमू ने भीमाचाची के प्रश्न का तुरन्त जवाब दिया था .

"कहाँ कहाँ ?"

"नारियल के 'थाले' के तले .'

"नागिन होगी . टहल के लिए क्यारी में जाती होगी ."

चालाकी से झूठ बोलने पर यमू स्वयं ही चकित हुई थी . झूठ बोलने की वस्तुतः कुछ जरूरत नहीं थी और फिर तभी से ऐसा लगता था कि सभी क्रियाओं में मानो सेंहन सी आ गई है .

देव पूजा के कोने में दीप की स्थिर ज्योति जरा भी थिरकती नहीं . भीमाचाची जपमाला लेकर वहीं बैठी है . चेहरा नये ताजे टँके पत्थर जैसा निर्विकार था , उनके होंठ मात्र स्वरहीन मूक फुट फुट करते हैं . बीच-बीच में गंजे सर से ढला हुआ साड़ी का पल्ला बायें हाथ से सँवार लेती है . पल्ले की किनार को दोनों कानों के पीछे स्थिर कर लेती है . माला से एक-एक मणि बड़े वेग से खिसकती रहती है . लेकिन भीमाचाची के कान अति जागरूक रहते हैं बाहर के, मंझले घर के, पिछले आँगन के चारों ओर से ध्वनि-पुकारों को चुन लेने में वे तृषित चातक भी तत्पर हैं .

आठ दिन पहले बाजार में नात्या से मिलते ही भीमाचाची ने उसे खेती के कुछ काम से बुलाया था . जमीन के दो चार टुकड़े थे उनमें हल तो चलाना ही होगा. वैसे गाँव में काम के आदमी बहुतेरे थे पर उसने नात्या को ही आग्रह से बुलाया . भीमाचाची का उससे खानदानी संबंध था . भीमाचाची को वह भाभी कहता था . जवान था तभी से इस घर में मेहनत-मजूरी की थी .

"..............ठीक ही किया तुमने आकर, नात्या . अब मैं अकेली क्या करूँ और कहाँ कहाँ नजर डालूँ ? घरबार, खेतबाड़ी की तरफ देखूँ कि डंडा लेकर श्रीधर की इस पत्नी की रखवाली करूँ ? ना, ना, बाबा ! ....वैसी तो ठीक ही है . पर उमर है न ? यह बात कोई कहने की थोड़े ही है ? जिसकी है वह यदि हाजिर होता तो मेरे पीछे यह चिन्ता तो न होती .

"...........श्रीधर क्यों चला गया, कहाँ गया, मैं भी तो नहीं जानती ? बाजार के लिए जाता हूँ ऐसा कह कर जो गया सो गया, वह तो भी नहीं कहा उसने."

"झगड़ा तो नहीं था," उससे मैंने पूछा, तो उसकी आँखों से आँसू बहने लगे . वैसी देखने में बड़े कद की लगती है . पर स्वभाव से बड़ी शांत है . तो, यूँ ही

बिना झगड़े के, बिना कहे सदा के लिए चला ही गया और मुझे अब उसकी यह धरोहर संभालते रहना पड़ता है. नहीं तो कुँए में कूद कर मैं तो छूट जाऊँ .'

तात्या के सामने तो अपनी मनोव्यथा को कहने देना संभव था . उसने भी इधर उधर जरा ध्यान दिय होता किन्तु उसने तो अपने लड़के को काम के लिए भेजा था . कल तक "हर्र र्‌••••••••हो ऽ ऽ" करके ढोरों को हाँकने वाला पांडू तेजी से बढ़ गया था . उसके अंग–प्रत्यंग जवान तात्या के अंग–प्रत्यंगों का स्मरण करा रहे हैं . तात्या ने व्यर्थ ही भीमाचाची की छाती पर यह पत्थर रखा .

'पांडू ? क्यों रे पांडू ?' भीमाचाची को बाहर के दरवाजे पर से आहट सुनाई पड़ी. उसने अन्दर से पुकारा·

'जी हां, चाची.'

'बैठो जरा. बाहर ही बैठो, हां. हाथ-पांव तो धोकर आये हो ?'

पांडू 'जी, हां.' वह खखार कर आंगन में थूकता है. भीगा चेहरा हथेलियों से पोंछपोंछ कर सुखाता है. शरीर को मोड़ कर पीठ की हड्डियों की ऐंठन को दूर करता है.

यमू पानी में चावल उबालने रखती है. पांडू की दानेदार मोटी निचली आवाज और पीठ की कड़ कड़ करती हुई हड्डियों की ध्वनि से उसके हाथों से ढकनी गिरने को ही होती है. चावल मुश्किल से गिरते-गिरते बच जाते हैं.

भीमाचाची के चित में उन आवाजों से एक चेतना जागृत होती है. जप माला को हाथ से अलग करके झट से बाहर आती है. मंझले घर के दरवाजे की तरफ एक नजर फेंकती है. वहां यमू नहीं है, वह तो रसोई में व्यस्त है., भीमाचाची जरा सी ठंडी पड़ती है, दरवाजे में बैठती है.

'पांडू सभी काम निबट लिए ?'

'निपट ही चले, चाची.' अदब से उठ खड़ा होता है. सीधा खड़ा वह मानों छत को फाड़ देगा, ऐसा लगता है., बरामदे में औरों के लिए जैसे उसने कोई जगह ही नहीं छोड़ी हो, ऐसा लगता है.

'वह तालाब के करीब का टुकड़ा ? उसमें भी अब हल्का काम हो गया.'

'[illegible], चाची ?'

'[illegible] का खेत ?'

'[illegible] भी.'

'नाई की ?'

हर जमीन के टुकड़े को कोई नाई का, कोई कुम्हार का इस तरह गिना जाता है. काम की छानबीन होती है भीमाचाची जमीन पर हथेलियां टेकती हुई उठती है. 'ठीक. तुम्हारे कितने दिन होते है, कुछ गिने भी तो है ? पिछले बुधवार काम पर आये हो. अब बैठो जरा, रसोई को देखती हूँ, क्या हुआ.'

'जी.' पांडू निश्चित होकर दीवार में पीठ लगा कर बैठता है 'गौ की ओसरी में क्या गड़बड़ चली है चाची ?'

'वह भी कहना भूल ही गई' भीमाचाची दरवाजे से सट कर खड़ी है. 'वह है कमली. बड़ा तूफान करती है यह बछिया आजकल तुम्हारे आने के कुछ पहले फाटक का डंडा ही तोड़ दिया उसने मैं मरते-मरते बच गई सर फोड़ देती मेरा. तात्या को एक संदेश कहोगे ? भुलाओगे तो नहीं !'

'जी हां, क्यों नहीं'

'अगर उनका इस तरफ आना हो तो, यूँ कहना कि कमली को ले जायें नहीं तो, ऐसा कर.'

'जी.'

'कल तो घर जाओगे न तुम ? तो तू ही अपने साथ ले जा उसे तात्या को कहना कि जब दूध देने लगे तब इसे वापिस भेज देना. क्यों ?'

'जी, चाची.'

भीमाचाची अन्दर की तरफ मुड़ती है., रसोई के काम से निबट कर खाली बैठी हुई वधू बाहर की तरफ ध्यान लगा के सुनने की क्रिया में हड़बड़ा कर उठती है. और काम में लगती है. दाल में यूँ ही चमच घुमाने लगती है. उसकी आंखों के सामने हवा में बरामदे पर बैठे पांडू की प्रतिमा तरंगित होती है. छोटे दरवाजे में दिखाई देने वाली उसके शरीर की अधूरी मरहीन भांकी उसे लगता है मानो किसी बे-सर जानवर ने घर में प्रवेश किया है सारा बरामदा, सारा घर उसने अपने शरीर से व्याप्त किया हो केवल हाथ, पांव, पेट और जांघों वाला ही वह जानवर है.

कुछ क्षण पूर्व तुलसी के पास दीया रखते भी उसे कुछ ऐसा ही अस्पष्ट आभास हुआ भी और उसकी हस्ती का आधार ही डावाडोल हो उठा था.

घर तो पूर्वाभिमुख था किन्तु हवा के ओर शोर की कोई रुकावट नहीं थी. नित्य-नेम के अनुसार बड़ी सावधानी से कदम रखते हुए दीये की हवा के झोंके से बचाती-बचाती वह आंगन में गई थी. किन्तु जब वह उसे तुलसी के सामने रखने

लगी तो दीया बार-बार बुझने लगा. बुझ ही गया. किसी ने मानो पीछे से फूंक मार दी हो.

तीसरी बार दीया बुझ गया तो यमू की जीभ से हल्का-सा उद्गार निकला —"च् !" और अपने पास से दूर कर उसने चारों ओर निहारा. उसे किसी ने पकड़ा नहीं है, इसका पक्का निश्चय कर लिया उसने. पर बाद में पीछे के दरवाजे से आते-जाते लोगों का अनुमान कर आते समय भीमाचाची ने जो आवाज की उसके कारण उसके पांव फिर धरा पर स्थिर हो गये.

वह निर्निमेष खोई-खोई बुझते दीये को देखती रही थी. गगन में विलीन होते-होते प्रकाश में बढ़ते हुए पौधे की मंजरियां चमचमाती हुई डोलने लगीं ! अपनी ही तन्द्रा में मगन वे हवा के झूले पर आगे पीछे झोंके खाने लगीं. मिट्टी से निकली छोटी सी तुलसी भी उल्लास से भर उठी थी।

तो कहीं उसी तुलसी ने ही तो तीन-तीन बार फूंक नहीं मार दी थी ? उसी को तो कहीं न लगा कि "दीया न हो, दीया न हो." फीकी-फीकी चांदनी लिये अस्तंगत होता बदलता दिन, पीछे-पीछे सभी को अपने बाहुजाल में फांसता हुआ रात्रि का काला एकाकीपन, खिसकते पत्तों का स्वर और हवा में थिरकती शीतल सुरभि यह सब उसे संवेदनशील कर रहे थे. वह बरसात में रातों चिपचिप सी उठती थी. धूप से दिन भर लाल-लाल होती थी. पर फूलती थी. चारों ओर फैलती थी. उसकी उत्तरोत्तर खोजती कुरेदती गहराई तक पहुंचती थी.

और दीया फिर बुझ गया. इसका यमू को क्रोध नहीं था. चौथी बार वह दीपक लेकर घर में गई थी. दम श्वास और हाथों की कँपकँपी रोक कर उसने बरामदे में जलते शमादान से फिर से दीया जलाया था. उसे जरा सुरक्षित रख कर उसने हाथ जोड़े थे. आँखें बन्द करके प्रणाम किया था. तुलसी ने जिस एकान्त की इच्छा की थी यमू ने उसे पूर्ण रूप से लेने दिया था.

भीमाचाची अंदर आकर कहे, उसके पहले ही यमू ने पांडु की भोजन पत्तल में परोसने को प्रारम्भ कर दिया था और चावल के ढेर को रचा दिया था.

"उसकी पत्तल रखने लगी क्या ? कहते-कहते भीमाचाची अंदर आती है. यमू को उन्होंने उसी काम में लगा पाया. "जरा सावधानी से परोसना, क्यों ? दोपहर में उसने काफी भात छोड़ दिया था."

"अधिक तो नहीं परोसा था, मैंने" .

"तूने अधिक परोसा, यह तो मैंने नहीं कहा, बेटी. अन्न, खराब होता है न, व्यर्थ जाता है ना ? जरूरत पड़ने पर वह मांग लेगा ."

भीमाचाची पांडु की पत्तल उठाकर बरामदे में दीवार के पास खुद ही रख देती है.

प्रकाश, दूध जैसा गाढ़ा-गाढ़ा, निस्तब्धता से झाड़ियों, पेड़ों पर झरता है. और चराचर प्रकाश के उस बाहुपाश में छिपता, डोलता है. मथित हो रहा है. अंग-अंग से सभी चाहते हैं पर सब छिपा के भीगे इन्कार कर रहे हैं

अपने ही चारों ओर घूर-घूर कर, और सरसर घूमती अनदेखी आंखों से यमू भी देखने की चेष्टा करती है. क्या हो रहा है, वह समझ नहीं सकती है. कुछ हो रहा है इसका भान उसे जरूर है. अपने शरीर पर चांदनी पड़ रही है, यह उसे दिखाई दे रहा है. चांदनी का भार शरीर झेल रहा है, उसे यह महसूस होता है.

ऐसे समय, डालियों की तरह झूलना चाहिए; रस अंदर से परिपूर्ण भर जाये. पर त्वचा से बाहर फूट कर आते हुए रस को मन को संवरना चाहिए. कुछ करना चाहिए ; करना ही चाहिए.

यमू झप् झप् कदमों से गौ की ओसरी की तरफ जाती है. गोबर की तीव्र गहरी गंध भभकती है. उसे बाहु में लेकर दबाता है. यमू नकराई सी कमली के पास जाती हैं पांवों में मुंह छिपाये शान्त स्तब्ध सोई हुई कमली को जोरों से हिलाकर जगाने लगती है. कमली टस से मस नहीं होती.

"उठ, कमले, सोती क्या है. नींद आती भी कैसे है. तुझे ?·········अरी चांदनी देख कैसी खिली है. क्या चादनी है ! उठ, उठ रे, राण्ड की·······•····" यमू उसके शरीर पर पड़कर उसे कुचलती है. उसकी गर्दन से, अँग से लिपटती है. उसे आलिंगन देती हैं. और जब वह हड़बड़ा कर जाग उठ खड़ी होती है तो उसकी रास खोल छोड़ती है.

"जा, मरी कहीं की, जाना था न तुझे कहीं ? जा, जहां जाना था !"

--अनु० : विश्वनाथ नेसरीकर

पंजाबी कहानी

बन्द खिड़कियां

• कुलवन्त सिंह विरक

सिनेमा देखकर घर लौटते समय रास्ते में वह अपनी परिचित लड़की के कमरे की खिड़की के सामने खड़ा हो गया लड़की अन्दर कुर्सी पर बैठी बिजली के प्रकाश में पढ़ रही थी उनकी पिछली बातचीत में हल्के से प्यार का प्रतिबिम्ब दृष्टिगोचर होता था. कुछ वर्ष पहले जब वे आँख मिचौनी खेला करते थे तो वह लड़की सदा उसके पास आकर छुपती और जब आगे बन्द करने की उसकी बारी आती तो भी वह उसी का ढूंढने की कोशिश करती जितनी बार वह उनके घर आती केवल पुस्तकें मांगने ही नहीं आती थी ऊंची कक्षाओं की इतिहास की पुस्तकें यद्यपि उन राजाओं के बारे मे ही थी जिनके बारे में छोटी कक्षाओं की, परन्तु उसे मुश्किल पुस्तकें पढ़ कर क्या लेना था ? इसीलिये कमरे की एक दीवार पर उसने पेन्सिल के साथ उसके आने की सारी तारीखें लिखी हुई थी और जब उसके चक्कर उसके अनुमान से कम होने लगते तो वह मुस्कराते हुये उसे ये तारीखें लिखा देता था. स्कूल के खाना पकाने की तैयारी वह उनके घर आकर ही करती और दोनों मिल कर समोसे बनाते, पूरियाँ तलते और फिर स्वयं ही खा जाते.

मेरी पुस्तक पर से आंख उठा कर लड़की ने उसकी तरफ देखा और फिर बिना बोले पुस्तक पर आँखें जमा दी. घरवाले सब सोये पड़े थे. लड़की नहीं जानती थी कि वह क्या चाहता है और न ही उसे स्वयं यह पता था कि वह वहां क्यों खड़ा हो गया था, शायद लड़की के मुस्करा देने से वह वहा से चला जाता, लेकिन लड़की तो इस तरह थी जैसे उसने उसे कभी देखा ही नहीं हो चोर आंखों से लड़की ने फिर उसकी ओर देखा वह वहा स्थिर खड़ा था. कुछ देर के पश्चात् लड़की उठी और होले से उस खिड़की के कपाट बन्द कर दिये. वहा खड़े होने का अब कोई फायदा नहीं था लड़की उसे दिखती नहीं और न ही उसे देख सकती थी. आहिस्ता २ वह अपने घर की ओर चल पड़ा.

किसी के घर मेहमान बन कर जाना कितनी अच्छी बात है. सभी प्यार करते है और साथ में इतनी बातें हो जाती है उनकी लड़की को वह अंग्रेजी की कवितायें पढ़ाता और वह लड़की उससे बातें करके बहुत खुश होती. उसे पहले ऐसा कोई लड़का नहीं मिला था जिसकी आंखों के सामने से दुनियां का इतना बड़ा भाग गुजरा हो और जो हर विषय पर इतनी मनोरंजन की बातें सुना सकता हो. वह घन्टों एक ही कविता पर लगे रहते.

पत्नी दोनों मित्रों के अगाध प्रेम से अपरिचित नहीं थी. ऐसे लगता था जैसे उसने अपने दिल में पति के इस मित्र के लिये विशेष स्थान बना लिया था. रात्रि के समय वे तीनों पास पास अपने बिस्तरों पर पड़े थे.

"सुनाओ, कुछ दोस्ती की शुरुआत हुई है या नहीं ?" उसके मित्र ने मजाक से पूछा.

"शुरुआत होकर बल्कि और काफी आगे बढ़ चुकी है." इन्होंने मुझे बड़े प्यार की एक बात कही है."

"कौन सी बात ?

"मैं नहीं बताता ?"

"अच्छा भाई, करो बातें मुझ तीसरे आदमी को पूछ कर क्या लेना है ?

"तीसरा आदमी नहीं है." उसकी पत्नी ने फैसला दिया और प्यार से अपने पति का हाथ चूम लिया.

उसकी लड़की की शादी हो गई थी. लेकिन इसमें क्या नुकसान था. नजदीकियां केवल शादी करने के लिये ही नहीं होतीं. वह लड़की तो अब भी उसी की थी. शादी से पहले उनकी कितनी घनिष्ठता थी. जब दोनों को एक दूसरे की सभी बातों का पता हो, जब कोई बात बताते हुये नये सिरे से भूमिका न बांधनी पड़े, जो कोई भी किसी के दिल दिमाग में बस रहा हो. उसकी जान पहचान एक दूसरे से करा दी हो, जब एक दूसरे के बारे में राय पक्की हो गई हो और किसी तरह कारण से न बदल सकें, जब अपनी हमजोलियों का वर्णन भी दूसरे के हृदय में सहानुभूति के गहरा गहरे समुद्र में डूब जाता हो, बात-चीत का असली स्वाद तभी आता है.

उसे विश्वास था कि यदि उस लड़की को पता लग जाये कि उसने पगड़ी किस रंग की बांधी हुई है तो अब भी वह अपना दुपट्टा उसी रंग का रंगा ले, लेकिन अब तो वह बहुत दूर थी. कभी-कभी पत्र आते थे, उसके नये शहर के बारे में, वहां की धरती और लोगों के बारे में. और बीच में जानकारी के लिये कई प्रश्न होते कि वह अब भी अचकन पहनता है कि नहीं, उसके बगले के फूल अभी खिले हैं कि नहीं उसका घोड़ा अभी भी लंगड़ा कर चलता है कि लंगड़ाने से हट गया है.

और फिर एक पत्र आया. उसके घर लड़का हुआ था. उसे अफसोस था कि वह उसे अपना लड़का दिखाने जल्दी नहीं आ सकती थी, लेकिन लड़का बहुत सुन्दर था.

आदत से मजबूर, वह अब भी उसकी शक्ल अपनी आंखों के सामने लाता, पर

"पहले ये बताइये···" वह बातों के ढूंढने में डूब गई.

"क्या ?"

"आप···आप मुझसे···" वह रुक गई, लाल हो गई.

"सीधे कहो, क्या बात है ?" चिढ़कर अन्द्रेय ने पूछा. वह अभी अफसोस करने लगा कि उसको मिला, पुकारा······

"आप मुझसे शादी करेंगे ?"

लड़की सर नीचा करके और भौं चढ़ाकर उसे देख रही थी, उसके हाथ कांप रहे थे और लगता था कि वह रोया चाहती है.

अन्द्रेय खिलखिलाकर हँसने लगा.

"इसमें हंसी की क्या बात है ? क्या मुझे यह सवाल पूछने का हक नहीं ?"—स्वेत्लाना ने पूछा और फिर से पीली हो गई.

हँसते-हँसते उसके आंसू निकल पड़े. पर मन ही मन सोच रहा था "क्या उसे कहूँ, कैसा बहाना इजाद करूं ?"

"बेशर्म !"—चेहरे पर अपमान का भाव बना कर वह चीख उठा,—"अब समझता हूँ कि तेराप्यार कैसा है ! मैं इंजिनियर हूँ और तू मेरे द्वारा समाज में अच्छी दशा पाना चाहती है."

वह चुप थी, वैसे ही भौं चढ़ाकर उसे देखती रही.

"तू लोभी है"—इतने में सोचकर अन्द्रेय ने जोड़ दिया.

स्वेत्लाना चौंक उठी, उसके निकट तेजी से चली आई, अपना चेहरा उसी ओर उठाया, ध्यान से देखा और बिना गुस्सा के लेकिन अजीब तेज आवाज में पूछा, "अगर मैं लोभी हूँ, तो आप कौन हैं, कौन हैं आप ?"

यादें···कहां उनसे भागा जाये ? सर चक्कर खाया. अन्द्रेय ने अपना चेहरा हथेलियों में डुबा कर डाला.

"कौन हैं आप ? कौन हैं आप ?"—बार-बार सन्नाटा बोल रही थी.

जीवन की पुकार

● नूट हैमसन

कोपनहेगन के बन्दरगाह के पास वेस्टरवोल्ड नाम की एक सड़क है—अपेक्षाकृत वर्षा, फिर भी सूना-सूना सा एक वृक्षादित मार्ग . गिनती के मकानात हैं . थोड़े से गैस के लैंप और नहीं के बराबर लोग . अभी ग्रीष्मऋतु में भी कोई विरला ही उस पर चहलकदमी करता दिखता है .

खैर, कल शाम उस सड़क पर मुझे एक आश्चर्यजनक अनुभव हुआ .

मैंने पटरी के दो-चार लोटमोट कर चक्कर लगाये ही थे कि एक महिला सामने से मेरी ओर आती दीखी . सड़क पर और कोई नहीं दिख रहा था ? गैस की बत्तियां जलाई जा चुकी थीं फिर भी अन्धेरा था—इतना कि महिला का चेहरा मैं नहीं देख पाया . रात के वक्त सड़कों पर घूमने वाली कोई बदचलन औरत होगी, मैंने सोचा, और उसके पास से गुजर गया .

वृक्षादित राजपथ के अन्त तक पहुँच कर मैं वापिस घूमते हुए लौटी वह स्त्री भी लौट रही थी और मुझे दुबारा मिली . किसी का इन्तजार कर रही है, मैंने सोचा और जानने की उत्सुकता हुई कि किसका ? और मैं पास से फिर गुजर गया. जब इसी प्रकार वह तीसरी बार मिली तो मैंने जरा हैट ऊंचा करके अभि-वादन किया और उससे बोला . "गुड इवनिंग". क्या आप किसी की राह देख रही हैं ? वह चौंक गयी. कहा, "नहीं, यानी हां, राह देख रही हूँ." मैंने पूछा जब तक प्रत्याशित सज्जन आएँ मेरे संग से उसे आपत्ति तो नहीं होगी

नहीं—जरा भी नहीं होगी, और उसने आभार प्रकट किया. वैसे बात यह है, उसने समझाया कि वह किसी के आने की उम्मीद भी नहीं कर रही है. सिर्फ हवाखोरी कर रही है —यहां बड़ी शांति है न.

हम साथ-साथ टहलते रहे. इधर-उधर की महत्वहीन बातें करते रहे मैंने अपनी बांह पेश की.

"शुक्रिया, नहीं," उसने कहा, और सिर हिलाया.

इस तरह टहलते-घूमते रहने में विशेष आनन्द नहीं था. अन्धेरे में उसे देख भी नहीं पा रहा था. घड़ी देखने को मैंने दियासलाई जलायी. ऊंची करके उसे भी

देखा. 'साढ़े नौ'' मैंने कहा.

वह कांप गयी मानों ठंड से ठिठुर रही हो. मैंने अवसर का लाभ उठाया "आप ठिठुर रही हैं ?" मैंने पूछा." आइये कहीं कुछ पिया जाये ? टीवोली में ? नेशनल में ?"

"परन्तु क्या आप देख नहीं रहे इस वक्त मैं नहीं जा सकती" उसने उत्तर दिया.

और तब मैंने पहली बार गौर किया कि वह मुंह पर लम्बा सा काला बुर्का पहने हुए थी . मैंने क्षमा याचना की अपनी गल्ती के लिये अंधेरे को कुसूरवार ठहराया . और जिस ढंग से उसने मेरी क्षमा याचना स्वीकार की उससे मुझे विश्वास हो गया कि वह रात में आवारा घूमने वाली कोई सामान्य स्त्री नहीं थी . "मेरी बांह का सहारा ले लीजिये ना" मैंने फिर सुझाव दिया "कुछ गरमायी आयेगी" उसने मेरी बांह पकड़ली .

एक दो चक्कर हमने लगाये . उसने मुझसे घड़ी फिर देखने को कहा .

"दस बज गये" मैंने कहा . "आप कहां रहती हैं ?" "गेमले, कीनगेन के पास" . चलने को हुई तो मैंने उसे रोका .

"आपको घर के दरवाजे तक छोड़ सकता हूं ?" मैंने पूछा .

"ठीक नहीं रहेगा", उसने उत्तर दिया . "नहीं, यह नहीं हो सकता--आप तो ग्रेडगेड में रहते हैं न ?"

"आपको कैसे मालूम ?" मैंने आश्चर्य से पूछा .

"ओ ! मैं जानती हूं आप कौन हैं", उसने जवाब दिया .

क्षण भर वह ठहरी . प्रकाशमान सड़क पर हम बांह में बांह डाले हम चले . वह तेजी से चली, उसका बुर्का पीछे झूलता रहा .

"हमें जल्दी करनी चाहिए", उसने कहा .

अपने दरवाजे पर पहुंचकर वह मेरी ओर मुड़ी-मानों वहां तक साथ आने की कृपा के लिये मुझे धन्यवाद देने के लिये . मैंने फाटक खोला, वह धीरे से भीतर घुसी .

से अपना कन्धा दरवाजे में घुसाया और उसके पीछे भीतर गया . पहुँचने पर उसने मेरा हाथ पकड़ लिया . दोनों ने कुछ नहीं कहा .

ीढ़ियाँ चढ़े और तीसरी मंजिल पर जा कर रुके . अपने अपार्टमेंट का

का ताला उसने खुद ही खोला . फिर एक और दरवाजा खोला. मेरा हाथ पकड़ा और मुझे भीतर ले गयी . शायद वह ड्राईंग रूम था . दीवार पर से घंटे की टिक-टिक मैं सुन पाया . भीतर पहुँच कर , महिला एक क्षण को ठहरी, फिर सहसा मेरे गले मे बाँहे डाल दी और थरथराते हुए मेरे मुँह पर वासनायुक्त चुम्बन किया. ठीक मुँह पर.

"बैठिये" उसने कहा, "यहा एक सोफा है इस बीच मै रोशनी करती हूँ." और उसने एक लैम्प जलाया.

मैंने अपने इर्द गीर्द देखा, चकित होकर परन्तु उत्सुकता पूर्वक । मैंने अपने को काफी बडे और सुसाज्जित ड्राईंग रूम मे पाया. कई खुले दरवाजे और कमरों मे जाते थे. मैं जरा भी न समझ पाया कि किस प्रकार की स्त्री से वास्ता पडा है.

"बडा सुन्दर कमरा है," मैंने कहा." आप यहा रहती हैं ?" "हाँ, यही मेरा घर है" उसने उत्तर दिया.

यह आपका घर है ? तो आप यहीं अपने माता–पिता के साथ रहती है शायद ?

"ओ, नहीं," वह हँसी. "मै तो बुढिया हूँ, जैसा कि आप अभी देखेंगे ."

और उसने अपना बुर्का और कोट उतार दिया

"लीजिये देखिये । मैंने क्या कहा था," वह बोली और एक बार फिर मुझे सहसा किसी उद्यम आवेग मे अभिभूत होकर बाहो मे लपेट लिया .

वह होगी २२ या २३ की, सीधे हाथ की उँगली मे एक अँगूठी पहनी थी और विवाहित हो सकती थी . सुन्दर ? न, उसकी खाल खुली सी थी, भौंहें प्रायः थी ही नहीं . परन्तु उसमें उद्दाम जीवन था और उसका मुँह विचित्र रूप से सुन्दर था. मैं पूछना चाहता था वह कौन है, उसका पति—यदि कोई है– तो कहा है— और वह मैं किसके घर मे हूँ परन्तु मैं जब भी जरा मुँह खोलता वह मुझ से लिपट जाती और कुछ भी पूछने से रोक देती.

"मेरा नाम एलन है," उसने बताया. "कुछ पीना चाहोगे ? घन्टी बजाकर किसी को बलाऊँ तो किसी को परेशानी नहीं होगी, इस बीच तुम यहा सोने के कमरे मे चले जाओ."

मैं शयनागार मे चला गया. ड्राईंग रूम की रोशनी वहाँ भी कुछ आ रही थी. मैंने दो पलंग देखे. एलन ने घण्टी बजाई और शराब लाने का कहा और मैंने सेविका को शराब लाते और वापिस जाते सुना. थोड़ी देर बाद एलन शयनागार में आई, परन्तु दरवाजे पर ही ठिठक गई. मैंने एक कदम उसकी ओर बढ़ाया. उसने हल्की सी सीतकार की और साथ ही मेरी ओर आई.

यह सब कल शाम हुआ.

और क्या हुआ ? आह, माफ़ कीजिये—हां, और बहुत कुछ कहने को है.

सुबह जब मैं जगा तो प्रकाश फैलने लगा था. पर्दों के दोनों तरफ से दिन की रोशनी कमरे में रेंग आई थी. एलन भी जागी हुई थी और मेरी तरफ मुस्कराई. उसकी गोरी बांहें मखमली थीं और उरोज असाधारण उन्नत. मैंने कुछ धीरे से कहा और उसने अपने मृदु सौम्य मुंह को मेरे मुंह से लगा दिया. दिन का प्रकाश उज्ज्वलतर होता गया.

दो घण्टे बाद मैं उठ खड़ा हुआ. एलन भी उठ कर कपड़े पहिनने में व्यस्त थी. उसने जूते पहिन लिए थे. तब मुझे वह अनुभव हुआ जो अब तक एक भीतिजनक स्वप्न सा लगता है. साथ लगे कमरे में एलन को कुछ काम था. उसने दरवाजा खोला तो मैंने भी मुड़कर कमरे में झांका. कमरे की खुली खिड़कियों से ठण्डी हवा का झोंका मेरे पर झपटा और कमरे के बीच में मेज़ पर पसरे एक शव को मैं देख भर पाया. एक शव, ताबूत में, सफेद कपड़ों में लिपटा, धूसर दाढ़ी, एक पुरुष का शव. उसके पतले घुटने, चादर के नीचे से—बुरी तरह-भिंची मुट्ठियों के समान बाहर को निकले हुए थे और चेहरा था पाण्डुरवर्ण, भयावह और निष्प्रभ. दिन के प्रकाश में सब कुछ साफ मैं देख पाया. मैंने मुंह फेर लिया, एक शब्द भी नहीं कहा.

जब एलन लौटी मैं कपड़े पहिन चुका था और बाहर जाने को तैयार था. उसके आलिंगनों को कठिनाई से स्वीकार कर पाया. उसने कुछ और कपड़े पहने वह मेरे साथ सड़क पर खुलने वाले फाटक तक आना चाहती थी, मैंने बिना कुछ बोले ही उसे साथ आने दिया. दरवाजे पर पहुँच कर न देखे जाने के लिए वह दीवार से चिपकी सी रही,

"अच्छा, विदा," वह फुसफुसाई.

"कल तक के लिए ?" मैंने उसे जरा छेड़ने को पूछा.

"नहीं, कल नहीं."

"क्यों, कल क्यों नहीं ?"

"इतने सारे सवालात न पूछो प्यारे. कल मुझे एक शव-यात्रा में जाना है—मेरे एक सम्बन्धी की मृत्यु हो गई है. लो·········अब तो जान गए."

ो फिर परसों."

परसों, यहां दरवाजे पर मैं तुम्हें मिलूंगी। विदा ."

दिया.

कौन थी वह ? और वह शव ? भिची मुट्ठियां-मुँह लटका हुआ—भीषण अपरूप ! परसों वह मेरी राह देखेगी. क्या मुझे उससे फिर मिलना चाहिए ? मैंने सर उठा कर मकान का नम्बर देखा और वही लगी नेमप्लेट. सवेरे के अखबारों के निकलने की मैंने कुछ देर राह देखी. फिर जल्दी से मैंने मृत्यु सूचनाएँ देखीं. हाँ, और निश्चय ही उसके-द्वारा छपवाई सूचना भी थी, पहली ही सूची में, बड़े अक्षरों में— "मेरे पति, आनु तिरेगन, का लम्बी बीमारी के बाद आज स्वर्गवास हो गया." मरने की तारीख परसों की थी.

मैं बड़ी देर तक बैठा गम्भीरता से विचार करता रहा.

एक आदमी शादी करता है. पत्नी है इससे तीस साल छोटी. पति लम्बी बीमारी में ही सड़ता रहता है. एक शुभ दिन वह मर जाता है.

और विधवा युवती चैन की सांस लेती है.

—अनुवादक ·— त्रिमन मिन्हा

स्वीडिश कहानी

हाथ कटी लड़की

• एलिन वागनर

'कौन मिलना चाहता है मुझसे ? अभी मुझसे कहा न !'

'एक मजदूर लड़की, कोई मिस पिटरसन या कुछ ऐसा ही नाम.'

संपादक ऐसे आगन्तुकों से सदा मिलता था. अपने पाठकों पर इस प्रकार सदा मेहरबानी करता, चाहे लिखते-लिखाते कुछ बीच में ही छोड़ना पड़े. वह भीतर आई तो वह अपने डैस्क से उठा और अपना हाथ बढ़ाया. उसे यकीन था कि लड़की जरूर सोच रही होगी कि वह हाथ मिलाना चाहेगा या नहीं, क्योंकि वह जानता था कि इस देश में बहुत ऐसे हैं, जो उच्च वर्ग के लोगों से इसकी आशा नहीं करते कि उनसे हाथ मिलायेंगे ही. युवती का मुख रक्ताभ हो गया. 'हाथ मैं नहीं मिला सकती',--उसने कहा. 'क्यों', उसने कहा--बढ़ा हाथ पीछे करते हुए, 'ऐसा मैंने क्या कुसूर किया है ?'

'आपने कुछ किया है इस वजह से नहीं, परन्तु मेरा सीधा हाथ है ही नहीं.

वह फुरती से डैस्क का चक्कर लगाकर उसके पास आया और उसके कंधे पर हाथ रखा.

'ओह तो तुम हो ? मैं फौरन नहीं पहचान पाया बैठो', डैस्क के पास रखी कुर्सी पर उसने लड़की को दबाकर बैठा ही दिया. 'अच्छा अब बताओ कैसे आई. क्या मैं तुम्हारे लिये और भी कुछ कर सकता हूँ '

'और' शब्द पर उसके होठों पर भागती-सी हल्की मुस्कान खेल गई. होठों पर कटु रेखाएं थीं ।

यह उसने देखा, परन्तु क्षण में ही उस कटु मुस्कान का स्थान एक विनीत याचनापूर्ण भंगिमा ने ले लिया.

'कुछ और ? जी हाँ श्रीमान, आप चाहें तो जरूर कर सकते हैं. और मैं आशा करूंगी कि आप करेंगे भी', उसने निराश होते हुए कहा.

वह तुरन्त, उसे देखते रहने की पीडा से बचने के लिए, कुछ भी करने को तैयार था. वह युवति आई है विकलाँग होकर, सीधी दारुण शारीरिक कष्ट भुगतकर, दुःख की गन्ध अपने साथ लिए. उसके स्नायुओं में चिड़चिड़ाहट हुई. उसने सके बारे में लिखा जरूर था क्योंकि इस प्रकार वह दूसरों का हृदय द्रविता

कर पायेगा, मानना नहीं.

परन्तु वह उसे अपने समक्ष नहीं चाहता था. 'हिचकती क्यों हो ?' उसने कहा— 'मेरा लेख पढ़कर क्या तुम नहीं समझ सकीं कि मैं तुम्हारा मित्र हूँ .

उसे किंचित विस्मय में डालते हुए युवती ने उत्तर दिया—'लोग कहते हैं आप कुछ लिखकर फिर कभी भूल सुधार नहीं करते.'

'ठीक,' उसने मुस्कराते हुए उत्तर दिया, क्योंकि उसने सोचा कि वह जो कह रही है उसका आशय पूरी तरह नहीं समझ पा रही है. 'परन्तु इसकी वजह यह है कि भूल सुधार करना तभी आवश्यक होता है जब कोई गलत बात छापी गई हो, अवश्य मैंने तुम्हारे बारे में जो कुछ लिखा उसे तो तुम नहीं चाहोगी कि मैं वापिस लूँ ?'

'जी, यही बात तो है ! आखिर वह मुंह से कुछ निकाल सकी.

'ओह," अति विस्मित हो वह जोर से बोला 'तब क्या तुम्हारा सीधा हाथ कभी कटा ही नहीं '

पट्टी बंधी बाह को उसने दस्ताने से बाहर निकाला, डेस्क पर टिकाया, और कहा,— 'मगर दुर्घटना जैसा आपने लिखा है वैसे नहीं हुई, और इसलिए—"

उसने चिड़चिडाते हुए सोचा यह भी उन्हीं औरतों में से है जो न किसी वाक्य को प्रारम्भ करती है न समाप्त परन्तु तब उसने देखा कि वह रो रही है.

'अच्छा, तो फिर कैसे हुआ,' उसने जैसा चाहा था उससे अधिक कोमल स्वर में पूछा.

अब युवती ने बायें हाथ से वह लिफाफा उसे दिया जिसे वह लगातार सारे समय पकड़े रही थी. पते पर आंसुओं के धब्बे पड़े थे

'फिर भी है यह मेरे ही नाम, 'यह मैं देख सकता हूँ,' उसने खुश-मिजाजी से कहा. लिफाफे में था टाइप किया हुआ एक पत्र 'स्वीया वर्कशाप में दो माह पहले हुई दुर्घटना के बारे में आपके कल की तारीख के संस्करण में छपा लेख गलतफहमी पर आधारित है''

उसने एकाएक उस युवती की ओर देखा. वह सर भुकाये बैठी थी. अनिवार्यतः उसकी दृष्टि उन कोमल छोटी-छोटी घुंघराली लटों पर पड़ी जो उसकी गरदन के पीछे, हैट के नीचे से झांक रही थी; *इन दिनों छोटे बालों के फैशन में एक विरलता !*

आगे लिखा था— 'यह गलतफहमी कैसे हुई, यह मैं फोरमैन होते हुए भी जानता हूँ. यह सच है कि एक नई कटाई की मशीन चलाकर देखते समय मिस

मिसी कार्लसन बुरी तरह घायल हो गई थी. यह पूर्णतया आकस्मिक दुर्घटना थी. एकदम बिजली चली गई, मशीन चल रही थी और मिस कार्लसन ने-जो मशीन के लिए नये होने से नर्वस हो गई थी, अपना हाथ मशीन के ब्लेड के पास धर लिया. दुर्घटना का मैनेजर की उपस्थिति से कोई सम्बन्ध नहीं था, वे तो घटना के बाद आये थे. घटना स्थल पर सिर्फ मैं मौजूद था.

व्यवस्थापक कानून की निश्चित अवधि के आगे भी मिस कार्लसन को मजदूरी देते रहे हैं और अब भी विकलांगों को एक आश्रय में उनके रहने का खर्चा दे रहे हैं. कालावधि में, व्यवस्थापक उनको फिर उसी मजदूरी पर काम में लगाने को तैयार हैं जो उन्हें पूरी तरह कुशल काम करने वाली के रूप में मिल रही थी. क्योंकि उन्हें व्यवस्थापकों के खिलाफ न्यायालय या प्रेस में शिकायत करने का कोई भी कारण इसलिए नहीं, कि आपने स्पष्ट लिखा है कि किसी प्रकार के संदेह का केवल इसलिए कोई अवकाश नहीं है कि यह सब बातें पहले जनसाधारण के सामने प्रकाश में नहीं लाई गईं. मिस कार्लसन को स्वयं सब से अधिक इसका खेद है कि मैनेजर साहब के अशोभनीय व्यवहार के बारे में झूठी खबरें फैलाई गईं और आपके लेख के द्वारा और बहुत से लोगों तक पहुंची है.

सश्रद्धा आपका

कार्ल एन्डरसन, फोरमैन.

सम्पादक ने पत्र की तह की और अपने डैस्क पर एक पेपर वेट के नीचे दबा दिया .

तो मैनेजर ने खुद यह लिखा है, उसने सोचा और आश्चर्य करता रहा कि उसका पुराना विरोधी इस बार इतना विनम्र क्यों बन रहा है. मेरे खिलाफ मुकदमा दायर करने के इस अवसर का उपयोग क्यों नहीं करता ?

यदि यह लांछन है कि दुर्घटना का कारण मशीन पर झुकी हुई उस लड़की की गर्दन पर मैनेजर द्वारा चुम्बन करना था तो मुझे जेल भेजना चाहिये, क्योंकि मैं बदनामी के कानून की गिरफ्त में भयंकर रूप में पहुंच चुका हूं.

'मिस कार्लसन', उसने ऊंचे स्वर में सहसा कहा. वह, जैसे कि उसने आशा की थी, चौंक गई, दुर्घटना के दिन भी शायद ऐसे ही हक्की-बक्की हुई हो.......

'तुम्हारी बजाय यह पत्र फोरमेन ने क्यों लिखा ?'

'अच्छा, और अब उसने दुर्घटना के बाद से ?' सगाई हुई तोड़ दी है .

"यह यह सब आप पर निर्भर करता है, यदि आप यह पत्र छापदें तो फिर सब ठीक हो सकता है. "

'जो यह बात है ? सगाई बनी रहने की यह शर्त लगाई है, क्यो है न ? कौनसी शर्त हुई. तुम्हारी जगह मैं होता तो उसकी आगे परवाह नही करता.

"आपको उससे ठीक यह आशा तो नही करनी चाहिए कि वह एक हाथ की एक कम गरीब लड़की से शादी करेगा," उसने फोरमैन का पक्ष लिया .

उसने जल्दी से सोचा . पत्र के अनुसार उस लड़की को पूरी मजदूरी पर दोबारा काम दिया जायेगा, परन्तु लगता है कि यदि मैं इस पत्र को नही छापू, व्यवस्थापक अपना वायदा पूरा नही करेगा . सामान्य मानवीयता दिखाने से पहले वे भी शर्त रख रहे हैं . फौरमेन को घटना का दूसरा विवरण देने को मजबूर कर रहा है, उसकी मगेतर को एक कौड़ी दिये बिना ही निकाल देने की धमकी दे रहे हैं, और तब वह इसको यहा मुझसे भर पेट झूठ बोलने को भेजता है, सगाई तोड़ देने की धमकी के साथ "मैं समझ गया," उसने कुछ क्षण चुप रहकर कहा . लड़की को उसका यह कहना नही सुहाया . समझना ही तो उसे नही चाहिये .

"ओह, श्रीमान आप इसे अपने पत्र मे छापने की कृपा करे किसी अच्छे स्थान पर," उसने हिचकिचाते हुए कहा . फिर वह उठ खड़ी हुई पर उसने उसे फिर बैठ जाने पर मजबूर किया .

"यदि मैं इसे छापू तो मुझे कुछ और भी साथ जोड़ना पड़ेगा, जन-साधारण को सूचित करना होगा कि मुझे यह सारी खबर कपडा मिल मजदूर यूनियन के सेक्रेटरी से मिली थी . जो किस वोल्सेन, आपका ही सगा भाई है . इसकी मैंने पहले उसी के अनुरोध पर ही चर्चा नहीं की, क्योंकि वह भी स्वीया कम्पनी में ही नौकर है . पर अब यह बताना जरूरी हो गया है . मेरे ख्याल से इस भूल-सुधार से वेल्सन परिवार को खुशी नहीं हो पायेगी .

"नहीं, यह आप नही कर सकेंगे" . लड़की ने हांफते हुए कहा .

"तो क्या तुम आशा करती हो कि मैं ऐसे व्यवहार करूंगा जैसे कि यह सारी कहानी मेरी मनगढ़न्त थी ? यह बिल्कुल नामुमकिन है" .

"ओह, परन्तु श्रीमान, आप तो इतने शक्तिशाली है, जो चाहें कर सकते हैं, आप किसी के नौकर तो है नहीं फिर आपके क्या फर्क पड़ेगा" .

"उसने सर हिलाया 'नहीं, यह कभी नहीं हो सकता" .

"परन्तु श्रीमान आपने तो लिखा था कि हरेक मानव का हृदय मिनी कार्लसन के लिए करुणा से ओतप्रोत हो जाना चाहिए" .

"हां चाहिए", उसने उत्तर दिया . "अब बोलो दोनों बातों में से क्या चाहती हो" .

"तो यह बात है ? सगाई बनी रहने की यह शर्त लगाई है, क्यों है न ? कौनसी शर्त हुई. तुम्हारी जगह मैं होता तो उसकी आगे परवाह नहीं करता.

"आपको उससे ठीक यह आशा तो नहीं करनी चाहिए कि वह एक हाथ की एक दम गरीब लड़की से शादी करेगा," उसने फोरमैन का पक्ष लिया.

उसने जल्दी से सोचा. पत्र के अनुसार उस लड़की को पूरी मजदूरी पर दोबारा *काम दिया जायेगा, परन्तु लगता है कि यदि मैं इस पत्र को नहीं छापू, व्यवस्थापक* अपना वायदा पूरा नहीं करेगा. सामान्य मानवीयता दिखाने से पहले वे भी शर्तें लगा रहे हैं. फोरमैन को घटना का दूसरा विवरण देने को मजबूर कर रहा है, उसकी मंगेतर को एक कौड़ी दिये बिना ही निकाल देने की धमकी दे रहे हैं, और तब वह इसको यहां मुझसे भर पेट झूठ बोलने को भेजता है, सगाई तोड़ देने की धमकी के साथ "मैं समझ गया," उसने कुछ क्षण चुप रहकर कहा. लड़की को उसका यह कहना नहीं सुहाया. समझना ही तो उसे नहीं चाहिये.

"ओह, श्रीमान आप इसे अपने पत्र में छापने की कृपा करें किसी अच्छे स्थान पर," उसने हिचकिचाते हुए कहा. फिर वह उठ खड़ी हुई पर उसने उसे फिर बैठ जाने पर मजबूर किया.

"यदि मैं इसे छापू तो मुझे कुछ और भी साथ जोड़ना पड़ेगा, जन-साधारण को सूचित करना होगा कि मुझे यह सारी खबर कपड़ा मिल मजदूर यूनियन के सैक्रेटरी से मिली थी. जो किस कोल्सैन, आपका ही सगा भाई है. इसकी मैंने पहले उसी के अनुरोध पर ही चर्चा नहीं की, क्योंकि वह भी स्वीया कम्पनी में ही नौकर है. पर अब यह बताना जरूरी हो गया है. मेरे ख्याल से इस भूल-सुधार से *वेलसन परिवार को खुशी नहीं हो पायेगी*.

"नहीं, यह आप नहीं कर सकेंगे". लड़की ने हांफते हुए कहा.

"तो क्या तुम आशा करती हो कि मैं ऐसे व्यवहार करूंगा जैसे कि यह सारी कहानी मेरी मनगढन्त थी ? यह बिल्कुल नामुमकिन है".

"ओह, परन्तु श्रीमान, आप तो इतने शक्तिशाली है, जो चाहे कर सकते हैं, आप किसी के नौकर तो है नहीं फिर आपके क्या फर्क पड़ेगा".

"उसने सर हिलाया 'नहीं, यह कभी नहीं हो सकता".

"*परन्तु श्रीमान आपने तो लिखा था कि हरेक मानव का हृदय सिनी कार्लसन के* लिए करुणा से ओतप्रोत हो जाना चाहिए".

"हां चाहिए", उसने उत्तर दिया. "अब बोलो दोनों बातों में से क्या चाहती हो".

है, आगे नहीं चलेगा यह.

'तुम कहां रहती हो ?' उसने उत्कंठा से उत्तेजित होते हुए पूछा !

सहसा उसमें उत्तर देने का साहस नहीं रहा. वहां आने के परिणाम की बात सोचकर हताश-सी हो गई.

'आप क्या करने जा रहे हैं' उसने पूछा. 'ओह, श्रीमान ! मुझ पर जरा तो दया कीजिये.

स्पष्टतया वह निर्दय था !

'अच्छा, तब यही बताओ तुम्हारा भाई कहां रहता है ?'

"किसलिए ?"

'इस मामले पर विचार करने के लिये हमें उसके पास जाना है.'

'पर आखिर आप क्या करने वाले हैं ?'

'जमीन आसमान हिला दूँगा, निश्चय ही. मैनेजर के विरुद्ध हम युद्ध की घोषणा करेंगे. उसको अपनी मूर्खता का मूल्य चुकाने पर मजबूर करेंगे,'

—"हां, परन्तु वह मूल्य चुकाने को तैयार है इसीलिए तो इसका आपके पत्र में छपना जरूरी है."

ओहो, तो यह बात भी साफ हो गई.

'और भी तरीके हैं. हम उसे मजबूर कर सकते हैं. अगर तुम मुकदमा चलाओ तो वह हार जायेगा.'

'क्या चलना चाहिए मुझे ? पर नहीं मैं नहीं कर सकती, नहीं कभी नहीं ."

अब और एक सिंडी से वास्ता पड़ा है, लड़की ने सोचा, पर दूसरी किस्म के. अपना ओवरकोट पहनते हुए वह सीटी बजाने लगा और उसके स्वर में टेलीफोन पर यह बताते हुए कि वह बाहर जा रहा है खुशी की गूंज थी. निष्पाप घृणा से लड़की ने उसकी ओर देखा. उसे क्या हुआ है ? क्या किसी एक हृदय की लड़की को बरबाद करना ऐसा सुखदायी है. यह सोचते हुए उसकी बंधी हुई उंगलियाँ मानो फड़कने लगी.'

इन पुरुषों का क्या इरादा है ? वह सोचती रही. सब तो कहते हैं वे उसकी सहायता करना चाहते हैं. मैनेजर वायदों से फुसफुसा रहा था और शुरू में एण्डर-सन भी बहुत उदार-उदात्त रहा. और मेरा भाई भी. और इस आदमी ने भी किसी कार्लमन के लिए हृदय द्रवित होने पर' क्या खूब लिखा था. और अब ये सब एक दूसरे से भिड़ पड़ने के लिए आपे से बाहर हो रहे हैं, और लड़ाई में अपनी विजय की सम्भावनाओं के अलावा और कुछ नहीं सोचते. पर मेरा क्या होगा, इन्हें चिन्ता नहीं. आखिर हाथ तो मेरा ही कटा है.

इतनी सरल बात

• मागदा केलबर

पाँच वर्षों से वे एक दूसरे को जानते थे– पूरे पाँच वर्षों से. और इन पाँच वर्षों के लंबे अर्से में हास राइमान को यह अच्छी तरह मालूम रहा कि वह लोट्टे को अपनी पत्नी बनाना चाहता है. किन्तु इसका प्रस्ताव कैसे किया जाए ? यह बात हांस राइमान की समझ में नहीं आई, और कभी नहीं आई.

हास राइमान एक शिल्पकार (आर्कीटेक्ट) था, और लोट्टे उसकी सेक्रेट्री थी. वह उसके पास समाचार पत्र के एक विज्ञापन द्वारा आई थी. उसके पास बहुत अच्छे परिचय पत्र थे, वह चतुर और कार्यदक्ष थी. और सबसे बड़ी बात यह है कि वह हास को बहुत अच्छी लगी वह छोटे से कद की, गहरे निखरे रंग की थी. उसकी भूरी आँखें चमकदार थीं और व्यवहार सरल तथा सहृदयतापूर्ण. कहना न होगा– हास राइमान ने उसे अपने दफ्तर में काम पर रख लिया.

अब वे दोनों काफी समय तक साथ साथ करते थे, और सब काम ठीक से होता रहा. शीघ्र ही हास राइमान को यह पता चल गया कि लोट्टे जितनी कार्यकुशल अपने परिचय पत्रों से उसे लगी थी, उससे कहीं अधिक कार्यकुशल थी. थोड़े ही समय में वह यह जान गयी कि हास सब काम कैसे करना चाहता है. वह बड़ी मुस्तैदी से काम करती थी—सब काम समय पर और ठीक से. वह जल्द ही हास राइमान के कामों में उसका हाथ बटाने लगी, केवल चिट्ठी-पत्री के मामले में ही नहीं, भवन निर्माण कार्य और उन सभी कामों में भी जिनमें हास राइमान जुटा रहता था. लोट्टे को यह ठीक ठीक पता रहता था कि क्या चीज सुन्दर है और क्या नहीं, क्या आरामदेह है और क्या नहीं. कभी कभी तो उसका यह ज्ञान हास राइमान से भी बढ़कर निकलता.

"पुरुष मकान को ठीक से बनाना नहीं जानते. जो मकान वे बनाते हैं, वे काफी असुविधा पूर्ण होते हैं"– कई बार वह हांस से यों कहा करती थी और फिर हँसते हुए यह बताती कि रसोईघर कैसा होना चाहिए. "यह तो बच्चों का कमरा है" वह कहती, "नहीं, यह ठीक नहीं है. मेहमानों का कमरा उत्तर की ओर रह सकता है, किन्तु बच्चों का कमरा प्रकाशयुक्त और धूपवाला होना चाहिए. और कमरे से बगीचे में जाने के लिए कोई सीढ़ियां ही नहीं ! जनाब ! बच्चों की गाड़ी के लिए इससे बड़ी असुविधा होगी." यह स्वाभाविक था, इन चीजों के बारे में हांस राइमान कभी अकेले नहीं सोचते.

इतनी सरल बात

● मागदा केलबर

पाँच वर्षों से वे एक दूसरे को जानते थे— पूरे पाँच वर्षों से, और इन पाँच वर्षों के लंबे अर्से में हास राइमान को यह अच्छी तरह मालूम रहा कि वह लोट्टे को अपनी पत्नी बनाना चाहता है. किन्तु इसका प्रस्ताव कैसे किया जाए ? यह बात हास राइमान की समझ में नहीं आई, और कभी नहीं आई.

हास राइमान एक शिल्पकार (आर्कीटैक्ट) था, और लोट्टे उसकी सेक्रेटरी थी. वह उसके पास समाचार पत्र के एक विज्ञापन द्वारा आई थी. उसके पास बहुत अच्छे परिचय पत्र थे. वह चतुर और कार्यदक्ष थी. और सबसे बड़ी बात यह है कि वह हास को बहुत अच्छी लगी. वह छोटे से कद की, गहरे निखरे रंग की थी. उसकी भूरी आँखें चमकदार थीं और व्यवहार सरल तथा सहृदयतापूर्ण. कहना न होगा— हास राइमान ने उसे अपने दफ्तर में काम पर रख लिया.

अब वे दोनों काफी समय तक साथ साथ काम करते थे, और सब काम ठीक से होता रहा. शीघ्र ही हास राइमान को यह पता चल गया कि लोट्टे जितनी कार्यकुशल अपने परिचय पत्रों से उसे लगी थी, उससे कहीं अधिक कार्यकुशल थी. थोड़े ही समय में वह यह जान गयी कि हास सब काम कैसे करना चाहता है. वह बड़ी मुस्तैदी से काम करती थी—सब काम समय पर और ठीक से. वह जल्द ही हास राइमान के कामों में उसका हाथ बटाने लगी, केवल चिट्ठी-पत्री के मामले में ही नहीं, भवन निर्माण कार्य और उन सभी कामों में भी जिनमें हास राइमान जुटा रहता था. लोट्टे को यह ठीक ठीक पता रहता था कि क्या चीज सुन्दर है और क्या नहीं, क्या आरामदेह है और क्या नहीं. कभी कभी तो उसका यह ज्ञान हास राइमान से भी बढ़कर निकलता.

"पुरुष मकान को ठीक से बनाना नहीं जानते. जो मकान वे बनाते हैं, वे काफी असुविधा पूर्ण होते हैं"— कई बार वह हास से यों कहा करती थी और फिर हँसते हुए यह बताती कि रसोईघर कैसा होना चाहिए. "यह तो बच्चों का कमरा है" वह कहती, "नहीं, यह ठीक नहीं है. मेहमानों का कमरा उत्तर की ओर रह सकता है, किन्तु बच्चों का कमरा प्रकाशयुक्त और धूपवाला होना चाहिए. और कमरे से बगीचे में जाने के लिए कोई सीढ़ियां ही नहीं ! जनाब ! बच्चों की गाड़ी के लिए इसमें बड़ी असुविधा होगी." यह स्वाभाविक था, इन चीजों के बारे में हास राइमान कभी अकेले नहीं सोचते.

सम्पादक पास आया, उसकी बांह पकड़ी और घोषणा की, 'यह एक जबरदस्त मामला होगा. लेख लिखे जायेंगे, सभाएं होंगी जिनमें तुम भी उपस्थित रहोगी. शहर के सब मजदूरों को तुम्हारी मदद के लिए ललकारा जायेगा.'

'पर मैं यह सब नहीं चाहती, जरा भी नहीं, उसने विरोध किया. उसे लग रहा था मानों फिर वह एक मशीन में फंस गई है और उसका जो कुछ बचा है उसके भी यह मशीन टुकड़े-टुकड़े करके छोड़ेगी.

'नहीं, तुम जरूर चाहती हो," सम्पादक ने कहा.

'नहीं'.

'तुम चाहती हो न कि तुम्हारी सहायता की जाय, क्यों, नहीं ?'

'जी हां, पर यूं नहीं, इस तरह से नहीं.'

'जिस तरह की सहायता का मैं और तुम्हारा भाई फैसला करें तुम्हें मान लेना चाहिये. अरे, वह पत्र तो मैं यहीं भूले जा रहा था. नहीं, तुम यहां अकेली मेरी राह देखने नहीं छोड़ी जाओगी, हो सकता है तुम भाग जाओ, तुम्हें मेरे साथ दफ्तर तक वापिस चलना होगा,' उसने लड़की की बांह को मजबूती से पकड़े रखा.

'वह पत्र मुझे लौटा दीजिये. उसने हाथ कटी बांह को बढ़ाते हुए कहा.
"नहीं, नहीं, मेरी प्यारी बच्ची. आओ, हम टैक्सी ले लेते हैं. कहां रहता है तुम्हारा भाई."
"मैं नहीं जाना चाहती.'
"तुम्हें चलना पड़ेगा. शांत रहो. तुम्हारी घबराहट शीघ्र जाती रहेगी. हम तुम्हें साहस सिखायेंगे. फिर तुम समझोगी कि एक पूरे वर्ग को अपने पक्ष में शक्ति प्राप्त करना कितना सुखद लगता है. मुझ पर भरोसा रखो."
'पर एन्डरसन, वह क्या कहेगा ?"
"तुम्हारे लिए अब तो उससे कभी भी नहीं मिलना ही सब से अच्छा है. वह एक दगाबाज है पर जिस लायक है वैसा ही उसके साथ होगा. ऊँहूँ, अब आंसू मत बहाओ, तुम्हें और प्रेमी मिल सकता."
'ओहो, यह भी.' उसने झटके से अपनी बांह छुड़ाली परन्तु व्यर्थ. दूसरे ही क्षण में वह टैक्सी में थी.
"तो अब सम्पादक ने कहा—'पता क्या है, बताओ ? फौरन."
इस मामले की वजह से सम्पादक भी अगले स्थनीय चुनाव में जीत गया,परन्तु मिनी हान्सन की जिन्दगी बरबाद हो गई.

अनुवादक–विमल सिन्हा

जर्मन कहानी

इतनी सरल बात

• मागदा केलबर

पाँच वर्षों से वे एक दूसरे को जानते थे– पूरे पाँच वर्षों से. और इन पाँच वर्षों के लंबे अर्से में हास राइमान को यह अच्छी तरह मालूम रहा कि वह लोट्टे को अपनी पत्नी बनाना चाहता है. किन्तु इसका प्रस्ताव कैसे किया जाए ? यह बात हास राइमान की समझ में नहीं आई. और कभी नहीं आई.

हास राइमान एक शिल्पकार (आर्किटेक्ट) था, और लोट्टे उसकी सेक्रेट्री थी. वह उसके पास समाचार पत्र के एक विज्ञापन द्वारा आई थी. उसके पास बहुत अच्छे परिचय पत्र थे. वह चतुर और कार्यदक्ष थी. और सबसे बड़ी बात यह है कि वह हास को बहुत अच्छी लगी. वह छोटे से कद की, गहरे निखरे रंग की थी. उसकी भूरी आँखें चमकदार थीं और व्यवहार सरल तथा सहृदयतापूर्ण. कहना न होगा– हास राइमान ने उसे अपने दफ्तर में काम पर रख लिया.

अब वे दोनों काफी समय तक साथ साथ करते थे, और सब काम ठीक से होता रहा. शीघ्र ही हास राइमान को यह पता चल गया कि लोट्टे जितनी कार्यकुशल अपने परिचय पत्रों से उसे लगी थी, उससे कहीं अधिक कार्यकुशल थी. थोड़े ही समय में वह यह जान गयी कि हास सब काम कैसे करना चाहता है. वह बड़ी मुस्तैदी से काम करती थी—सब काम समय पर और ठीक से. वह जल्द ही हास राइमान के कामों में उसका हाथ बटाने लगी, केवल चिट्ठी-पत्री के मामले में ही नहीं, भवन निर्माण कार्य और उन सभी कामों में भी जिनमें हास राइमान जुटा रहता था. लोट्टे को यह ठीक ठीक पता रहता था कि क्या चीज सुन्दर है और क्या नहीं, क्या आरामदेह है और क्या नहीं. कभी कभी तो उसका यह ज्ञान हास राइमान से भी बढ़कर निकलता.

"पुरुष मकान को ठीक से बनाना नहीं जानते. जो मकान वे बनाते हैं, वे काफी असुविधा पूर्ण होते है"– कई बार वह हास से यों कहा करती थी और फिर हँसते हुए यह बताती कि रसोईघर कैसा होना चाहिए. "यह तो बच्चों का कमरा है" वह कहती, "नहीं, यह ठीक नहीं है. मेहमानों का कमरा उत्तर की ओर रह सकता है, किन्तु बच्चों का कमरा प्रकाशयुक्त और धूपवाला होना चाहिए. और कमरे से बगीचे में जाने के लिए कोई सीढ़ियां ही नहीं ! जनाब ! बच्चों की गाड़ी के लिए इससे बड़ी असुविधा होगी." यह स्वाभाविक था, इन चीजों के बारे में हास राइमान कभी अकेले नहीं सोचते.

सम्पादक पास आया, उसकी बांह पकड़ी और घोषणा की, 'यह एक जबरदस्त मामला होगा. लेख लिखे जायेंगे, सभाएं होंगी जिनमें तुम भी उपस्थित रहोगी. शहर के सब मजदूरों को तुम्हारी मदद के लिए ललकारा जायेगा.'

'पर मैं यह सब नहीं चाहती, जरा भी नहीं, उसने विरोध किया. उसे लग रहा था मानों फिर वह एक मशीन में फंस गई है और उसका जो कुछ बचा है उसके भी यह मशीन टुकड़े-टुकड़े करके छोड़ेगी.

'नहीं, तुम जरूर चाहती हो," सम्पादक ने कहा.

'नहीं'.

'तुम चाहती हो न कि तुम्हारी सहायता की जाय, क्यों, नहीं ?'

'जी हां, पर यूं नहीं, इस तरह से नहीं.'

'जिस तरह की सहायता का मैं और तुम्हारा भाई फैसला करें तुम्हें मान लेना चाहिये. अरे, वह पत्र तो मैं यहीं भूले जा रहा था. नहीं, तुम यहां अकेली मेरी राह देखने नहीं छोड़ी जाओगी, हो सकता है तुम भाग जाओ, तुम्हें मेरे साथ दफ्तर तक वापिस चलना होगा,' उसने लड़की की बांह को मजबूती से पकड़े रखा.

'वह पत्र मुझे लौटा दीजिये. उसने हाथ कटी बांह को बढ़ाते हुए कहा.
"नहीं, नहीं, मेरी प्यारी बच्ची. आओ, हम टैक्सी ले लेते हैं. कहां रहता है तुम्हारा भाई."
"मैं नहीं जाना चाहती.'
"तुम्हें चलना पड़ेगा. शांत रहो. तुम्हारी घबराहट शीघ्र जाती रहेगी. हम तुम्हें साहस सिखायेंगे. फिर तुम समझोगी कि एक पूरे वर्ग की अपने पक्ष में शक्ति प्राप्त करना कितना सुखद लगता है. मुझ पर भरोसा रखो."
"पर एन्डरसन, वह क्या कहेगा ?"
"तुम्हारे लिए अब तो उससे कभी भी नहीं मिलना ही सब से अच्छा है. वह एक शैतान है पर जिस लायक है वैसा ही उसके साथ होगा. ऊंहूं, अब आंसू मत बहाओ, तुम्हें और प्रेमी मिल सकता."
'ओहो, वह भी.' उसने लड़की ने अपनी बांह छुड़ाली परन्तु व्यर्थ. दूसरे ही क्षण में वह टैक्सी में थी.
"और अब सम्पादक ने कहा—पता क्या है, बताओ ? फौरन."
इस मामले की वजह से सम्पादक भी अगले स्थानीय चुनाव में जीत गया, परन्तु लिली [illegible] की जिन्दगी बरबाद हो गई.

अनुवादक–विनय मित्र

जर्मन कहानी

इतनी सरल बात

• मागदा केलवर

पाँच वर्षों से वे एक दूसरे को जानते थे— पूरे पाँच वर्षों से. और इन पाँच वर्षों के लंबे अर्से में हांस राइमान को यह अच्छी तरह मालूम रहा कि वह लोट्टे को अपनी पत्नी बनाना चाहता है. किन्तु इसका प्रस्ताव कैसे किया जाए ? यह बात हांस राइमान की समझ में नहीं आई. और कभी नहीं आई.

हांस राइमान एक शिल्पकार (आर्कीटेक्ट) था, और लोट्टे उसकी सेक्रेट्री थी. वह उसके पास समाचार पत्र के एक विज्ञापन द्वारा आई थी. उसके पास बहुत अच्छे परिचय पत्र थे, वह चतुर और कार्यदक्ष थी. और सबसे बड़ी बात यह है कि वह हांस को बहुत अच्छी लगी. वह छोटे से कद की, गहरे निखरे रंग की थी. उसकी भूरी आँखें चमकदार थीं और व्यवहार सरल तथा सहृदयतापूर्ण कहना न होगा— हांस राइमान ने उसे अपने दफ्तर में काम पर रख लिया.

अब वे दोनों काफी समय तक साथ साथ काम करते थे, और सब काम ठीक से होता रहा. शीघ्र ही हांस राइमान को यह पता चल गया कि लोट्टे जितनी कार्यकुशल अपने परिचय पत्रों से उसे लगी थी, उससे कहीं अधिक कार्यकुशल थी. थोड़े ही समय में वह यह जान गयी कि हांस सब काम कैसे करना चाहता है. वह बड़ी मुस्तैदी से काम करती थी—सब काम समय पर और ठीक से. वह जल्द ही हांस राइमान के कामों में उसका हाथ बटाने लगी, केवल चिट्ठी-पत्री के मामले में ही नहीं, भवन निर्माण कार्य और उन सभी कामों में भी जिनमें हांस राइमान जुटा रहता था. लोट्टे को यह ठीक ठीक पता रहता था कि क्या चीज सुन्दर है और क्या नहीं, क्या आरामदेह है और क्या नहीं कभी कभी तो उसका यह ज्ञान हांस राइमान से भी बढ़कर निकलता.

"पुरुष मकान को ठीक से बनाना नहीं जानते. जो मकान वे बनाते है, वे काफी असुविधा पूर्ण होते हैं"— कई बार वह हांस से यों कहा करती थी और फिर हँसते हुए यह बताती कि रसोईघर कैसा होना चाहिए. "यह तो बच्चों का कमरा है" वह कहती, "नहीं, यह ठीक नहीं है. मेहमानों का कमरा उत्तर की ओर रह सकता है, किन्तु बच्चों का कमरा प्रकाशयुक्त और धूपवाला होना चाहिए. और कमरे से बगीचे में जाने के लिए कोई सीढ़ियां ही नहीं ! जनाब ! बच्चों की गाड़ी के लिए इससे बड़ी असुविधा होगी." यह स्वाभाविक था, इन चीजों के बारे में हांस राइमान कभी अकेले नहीं सोचते.

उन्हें प्राय: देर तक शाम को दफ्तर में काम करना पड़ता था, और तब हाँस राइमान लोट्टे के साथ ही शाम का भोजन करने जाता. वे शहर के किसी बढ़िया रेस्त्राँ में भोजन करते थे. और उसके बाद कभी-कभी एक साथ किसी सिनेमा में भी चले जाते. अच्छी फिल्में देखना दोनों को ही अच्छा लगता था और वे इस विषय पर घन्टों तक बातचीत कर सकते थे. अक्सर लोट्टे हाँस के साथ किसी 'कंसर्ट' में जाती. हाँस की रुचि संगीत में अधिक थी. और वह खुद भी 'वॉयलिन' अच्छा बजा लेता था. लेकिन लोट्टे को यह बात नहीं मालूम थी क्योंकि इसके बारे में हाँस राइमान ने कभी उससे कुछ कहा ही नहीं. वह संगीत सुनना तो पसंद करती थी पर उसे स्वयं कोई वाद्य बजाना नहीं आता था.

"इससे कोई अंतर नहीं पड़ता:" हाँस कहता "किसी साज का बजाना न जानते हुए भी व्यक्ति संगीत–प्रेमी हो सकता है."

लोट्टे संगीत के विषय में अधिक नहीं जानती थी परन्तु इसका बोध उसे ठीक ठीक होता था कि उसे क्या रूचा और क्या नहीं. यह बात वह हाँस से बिल्कुल स्पष्ट शब्दों में कह भी देती थी. और हाँस इस बात से खुश होता था, प्राय: तब भी जबकि वह स्वयं कुछ और ही बात सोच रहा होता.

एक बार जब शिल्पकारों का वार्षिक 'बॉल' समारोह निकट आया, हाँस राइमान ने लोट्टे से कुछ उद्विग्नता से पूछा–क्या वह उसके साथ बॉल–नृत्य में भाग लेगी ? लोट्टे ने तुरंत 'हाँ' करदी और बताया कि उसे नृत्य करना पसन्द है. उस दिन हाँस पूरे दिन उत्तेजित रहा. उसे यह पता था कि वह स्वयं नृत्य करना अच्छी तरह नहीं जानता. वह लंबे कद का था, लोट्टे से कुछ ज्यादा लंबा और अपनी नीली आँखों, चेहरे के साफ रंग और सुन्दर बालों के कारण देखने में काफी अच्छा लगता था. किन्तु वह ठीक से नाच नहीं सकता था यह बात उसके सामने बिल्कुल स्पष्ट थी.

अस्तु, पहली बार नृत्य करते समय हाँस को थोड़ा सा डर लगा. पर सब कुछ ठीक चला. लोट्टे ने उसे बताया कि नृत्य किस प्रकार करना चाहिए. इसके बाद से फिर जैसा कि वह सोचता था, उससे कहीं अधिक अच्छा नृत्य वह करने लगा. उसे अब सचमुच ठीक से नृत्य सीखने का चाव उत्पन्न हुआ, और इसके लिए यह आवश्यक हो गया कि वे दोनों जब–तब नृत्य करने के लिए बाहर जाएँ.

कुछ ही दिनों बाद हाँस को रविवार के दिन घर पर अकेले रहना अखरने लगा. और इसलिए वे दोनों मिलकर उस दिन बाहर निकल पड़ते–घूमते, नाव चलाने, तैरने या 'स्केटिंग' (बर्फ पर फिसलने) के लिए. दिन प्रतिदिन हाँस राइमान के सामने यह बात अधिक स्पष्ट होती जाती थी कि लोट्टे को उसकी पत्नी बनना

चाहिए. इस विषय में कोई दो मत नहीं हो सकते थे. और वह हमेशा यही सोचता —"यह बात मैं लोट्टे से कैसे कहूँ ? क्या कहा जाता है, ऐसे अवसर पर ? इन बातों में मैं कितना बड़ा मूर्ख हूँ ?"

कई बार लोट्टे उसे बड़ी अच्छी तरह से और सद्भावनापूर्ण ढंग से देखती होती तो वह सोचने लगता —"अब तुझे जरूर यह बात कह देनी चाहिए. जल्दी कर. यही उपयुक्त क्षण है." और फिर तत्काल ही वह यह निर्णय कर नहीं पाता कि उसे कहना क्या चाहिए ? हाँ, समस्या तो यही थी.

"क्या मैं आपसे पाणि-ग्रहण की याचना कर सकता हूँ." "क्या मैं आपको विवाह-वेदी तक ले जा सकता हूँ—नहीं, ऐसा कहना तो ठीक नहीं है. ऐसा तो किताबों में ही मिलता है, और फिर लगता भी हास्यास्पद है.

"मुझे आपसे बेहद प्यार है. क्या आप मुझ से विवाह करेंगी ?" यह बात हांस को एकदम सीधी-सपाट लगती और आदर सूचक तो जरा भी नहीं.

'मैं आपको प्यार करता हूँ." नहीं, ऐसा तो सिनेमा में वे हमेशा कहते हैं. यह बात भी ढंग की नहीं है. इस पर तो अवश्य हँस भर देगी

और फिर जब लोट्टे किसी दूसरी तरफ देखने लगती है, तो बात जहाँ की तहाँ रह जाती.

"अच्छा, आगामी रविवार को तो तू जरूर यह बात कहना" —हांस राइमान फिर यह निश्चय करता. लेकिन रविवार एक एक करके निकलते जाते थे और हांस राइमान कभी अपनी बात कह ही नहीं पाता था. इस बारे में लोट्टे वस्तुतः क्या सोच रही है, इसका हांस को कुछ पता नहीं था. वह उसके चेहरे से कुछ भी नहीं समझ पाता. इसलिए ग्रीष्म ऋतु बीती, शरद, बसंत और पतझर आए और गए—और हांस राइमान यही सोचता रहा कि वह लोट्टे से यह बात कहे तो कैसे कहे कि वह उसे अपनी पत्नी बनाना चाहता है.

कुछ ही दिनों बाद हांस के लिए एक कठिन घड़ी आ उपस्थित हुई. लोट्टे की एक बूढ़ी चाची थी, जिसके पास काफी धन था . अकस्मात वह मर गयी, और लोट्टे को इस धन का कुछ भाग मिला—बहुत अधिक तो नहीं, फिर भी यह धन काफी था .

"अब तो बात ही खतम हो गई" हांस राइमान ने सोचा "अब तो सब कुछ समाप्त है . अब तो वास्तव में मैं कुछ नहीं कह सकता . अब यदि मैं अपनी बात कहता हूँ, तो जरूर वह सोचेगी कि मैं केवल उसके धन से शादी करना चाहता हूँ, नहीं तो हम लोग एक दूसरे को इतने दिनों से जानते थे" .

इस बात से हांस इतना दुखित हुआ कि उसके लिये काम करना कठिन हो गया . लोट्टे उसके लिये अब केवल एक सेक्रेटरी ही नहीं थी . और हांस ने उसे अब सदा के लिए खो दिया था . वह यह नहीं समझ पा रहा था कि इस स्थिति में वह करे तो क्या करे ?

लेकिन फिर इससे भी कड़ा आघात लगा . लोट्टे उसके पास आयी-अपनी एक इच्छा लेकर . वह अपने मन से एक घर बनवाना चाहती थी छोटा, कुमीदा, और आधुनिक नये ढंग का . हांस को यह पता था कि वह क्या चाहती है . अतः वे गये और उन दोनों ने साथ जाकर एक 'प्लांट' खरीद लिया .

इस 'प्लांट' के बारे में हांस राइमान अच्छी तरह जानता था . क्योंकि पिछले पांच सालों में वह कितनी ही बार वह उधर से होकर निकला था, और उसने सोचा था कि कभी न कभी वह उस जमीन को खरीदेगा और उस पर एक मकान बनवाएगा, एक ऐसा मकान, जो उसके खुद के लिए और लोट्टे के लिये होगा . इन पांच सालों में उसे यह बात अच्छी तरह मालूम रही कि वह इसे कैसे बनजायेगा ? वह जमीन का टुकड़ा वास्तव में बहुत अच्छा था . वह शहर से कुछ पहले पड़ता था. समुन्द्र से बहुत दूरी पर नहीं था, और उसके बाग के ठीक पीछे से जंगल शुरू होता था .

और अब लोट्टे उसी भू-भाग को खरीद कर उस पर एक मकान बनवा रही थी . केवल अपने लिये . यहां भी उसे पता था कि वह क्या चाहती थी . घर बहुत बड़ा हो इस बात की कोई जरूरत नहीं थी—बस एक बैठक, एक भोजन-कक्ष, एक सोने का कमरा—सभी छोटे-छोटे, एक उपयोगी छोटा-सा रसोई घर, ऊपर की मंजिल में एक या दो कमरे, मेहमानों के लिये .

"सभी कमरे बहुत छोटे-छोटे रहेंगे और मेरे लिये कोई भी ऐसा कमरा न होगा जहां बैठ कर मैं काम कर सकूं" ? हांस राइमान मन ही मन कुढ़ रहा था— "और न कोई गैरेज ही, फिर मेरी मोटर कहां खड़ी होगी ?" इस बात ने उसे बहुत क्षुब्ध कर दिया . नहीं, यह नहीं होने का . घर काफी बड़ा होना चाहिये . इससे कहीं अधिक बड़ा . उसमें बच्चों का एक कमरा भी होना चाहिये . और लोट्टे तो इस कमरे से बाहर की ओर जाने के लिये सीढ़ियां भी बनवाना चाहती थी ?"

"तब फिर हम बच्चों की गाड़ी किस तरह घर के भीतर लाया-ले जाया करेंगे ?" हांस राइमान से नहीं रहा गया और वह बड़े उत्तेजित भाव से बोल पड़ा . उसका चेहरा लाल-सुर्ख हो रहा था . उसकी नीली आँखों में अप्रसन्नता का भाव स्पष्ट

झलक रहा था।

"बच्चों की शादी ?" लोट्टे ने कहा—"मैं आपकी बात समझी नहीं। इसकी चर्चा यहां कैसे ?"

अब हाम को रत्तीभर भी परवाह नहीं थी। उसने सोचा अब उसे अपनी बात कह ही देनी चाहिये, चाहे कुछ भी हो।

"आखिर कब यह बेवकूफियां खत्म होंगी ?" बड़े तीखेपन से, उत्तेजित हो उसने कहा—"आखिर कब हम लोग शादी करेंगे ?"

इस पर लोट्टे ने खुशी भरी नजरों से उसकी ओर देखा। वह एक साथ हंसी भी और रोई भी।

"ओह ! आखिर तुमने यह बात कही तो, हाम ! तुमने ऐसा कहा तो !! मैं कितने दिनों से इसकी प्रतीक्षा कर रही थी कि तुम यह कहो !"

'अच्छा—"हाम राहमान मन में सोच रहा था"—जब तो यह बात इतनी सरल थी, फिर तू इसे पहले क्यों नहीं कह सका ? तू गधा है, हां ! तू !"

—अनुवादक : मुनीश कुमार पाण्डेय

बुलगारियाई कहानी

वकील साहब

● एलिन पेलिन

जिला अदालत लगी हुई थी. गोरेसेक ग्राम के मित्रे मारिनिन के मुकदमे की सुनवाई हो रही थी. उसके पड़ोसी पीटर मारिनिन ने उस पर अपना घोड़ा मारने का आरोप लगाया था.

सख्त गर्मी पड़ रही थी. अदालत की खिड़कियों के बाहर सड़क के उस पार की इमारतों की सफेद दीवारें प्रकाश में चमचमा रही थीं. वह बहुत ही थकी हुई और उदास सी लगती थो. अदालत के कमरे की हवा भी बहुत गर्म थी और वहां बहुत ही कम व्यक्ति थे. केवल दो या तीन किसान, जो उस मुकदमे में गवाह थे, अपनी जगह पर खामोश बैठे हुए मुकदमे की कार्यवाही सुन रहे थे.

बचाव पक्ष का वकील—नाटे कद का, मोटा, तोंदियल और गंजी चांद वाला था. वह बढ़िया कपड़े पहने हुए था, बचाव पक्ष के वकील की बहस चल रही थी. उसकी आँखें अदालत के अध्यक्ष पर जमी थीं और कभी-कभी वह जेब से हाथ बाहर निकाल कर वादी की ओर इशारा करता. वह जान-बूझकर हर आदमी को आकर्पित करने की कोशिश करता लेकिन उसकी आवाज गिरी-गिरी सी और कुछ कर्कश भी थी. ऐसा लगता था मानों किसी ने फटा बांस बजा दिया हो, वह बात-बात पर भगवान की दुहाई देने के लिए उधर छत की ओर ताकता, अपनी छाती पीटने लगता और हाथ फैलाता. लेकिन न्यायाधीशों के शान्त और निश्चल चेहरों ने हमेशा की तरह यह दिखा दिया कि निष्पक्ष न्यायाधीश के धैर्य और उसकी उदासीनता से कोई आशा नहीं जा सकती.

अध्यक्ष गहन चिन्तन में लीन था. एक न्यायाधीश कागज पर घोड़ों के चित्र बना रहा था. दूसरे न्यायाधीश ने जिसे संगीत का शौक था, कागज पर एक बड़ा सा बनाया और धीरे-धीरे उसे और बड़ा बनाने लगा.

वादी मित्रे मारिनिन, नाटे कद का भूरे बालों वाला किसान, हाथ में हैट लिये नंगे पांव खड़ा था. उसे अपने वकील की कोई बात समझ में नहीं आ रही थी, इसलिए वह खिड़की की ओर ताक रहा था. खिड़की में एक बड़ी सी मक्खी बाहर निकलने में असमर्थ जोरों से फड़फड़ा रही थी, एक बार जैसे ही वकील थोड़ा दम लेने के लिए रुका, उसने अदालत के दरबान से, जो उस समय दरवाजे के साथ रगड़ कर अपने नाखून साफ कर रहा था, जोर से कहा :

"अरे दोस्त, जरा उस मक्खी को बाहर निकाल देना. बेचारी काफी देर से फड़फड़ा रही है."

न्यायाधीश ने मुस्कराते हुए उसकी ओर दया से देखा. अध्यक्ष ने अपनी घंटी का बटन दबाया.

"मित्र मारिनिन, यह मत भूलो कि बादी के रूप में तुम्हारी स्थिति यहां बहुत अच्छी नहीं है. अनुशासन का तकाजा है कि तुम चुपचाप खड़े रहो."

"अरे, वह तो बाहर निकल भी गयी" खिड़की की ओर इशारा करते हुए मित्र ने कहा.

न्यायाधीश पुन: हँसे. वकील ने अपने मुवक्किल की ओर घूरा और मुस्करा कर फिर शुरू किया.

"हां, श्रीमान, ये ही वे हालात हैं जिन पर गौर करना होगा. दूसरे शब्दों में, उस मनोविज्ञान, उस क्षण की किसी प्रकार व्याख्या करनी होगी. गांव की एक घोर काली रात की कल्पना कीजिए—इतनी अधिक काली कि उसमें हाथ को हाथ न सूझता हो. मेरा मुवक्किल अपने खेतों पर अपनी भेड़ों और अपने खलिहान की रखवाली कर रहा है. हर नागरिक को इसका अधिकार है. दिन भर की मेहनत के बाद वह थका-मांदा वहां पड़ा है. वह सब कुछ भूला हुआ है, अपनी पत्नी, बच्चे, यहां तक कि भगवान को भी (गवाहों ने आश्चर्य से उसकी ओर देखा). थकान के कारण वह गहरी निद्रा में डूब जाता है. लेकिन अचानक··· हम क्या देखते हैं, श्रीमान ? सचमुच क्या ? शब्दों में उसकी व्याख्या नहीं की जा सकती. मनुष्य की जुबान खामोश है. हां क्षण भर में मेरा मुवक्किल जाग पड़ता है और चारों ओर देखता है······ओह कितना भयानक है. मेरे मुवक्किल के प्राण एक धागे से लटक रहे हैं. उसके सर पर एक बड़ा-सा, बद-सूरत और भयावना दैत्य खड़ा है जो उसे निगल जाने को तैयार है. स्वाभाविक ही, श्रीमान्, मेरा मुवक्किल डर के मारे सुध-बुध खो बैठता है. वह दैत्य के मुख से निकलने वाली लपटें देखता है, वह उसकी खून से प्यासी आँखें देखता है······घबरा कर मेरा मुवक्किल कांप उठता है. वह भूल जाता है कि वह कहां है. वह नहीं जानता कि क्या हो रहा है. आधी नींद में ही वह अपनी बन्दूक उठाता है और उस दैत्य पर गोली चला देता है. दैत्य गिर पड़ता है, और फिर उठकर भागता है, रास्ते में एक भूसे का ढेर मिलता है, दर्द के मारे उस पर गिर पड़ता है और फिर मर जाता है. श्रीमान, मैं आपसे पूछता हूं कि यदि यह दैत्य कोई और न होकर अमुक पीटर मारिनिन का ही घोड़ा हो तो उसमें मेरे मुवक्किल का क्या दोष ? एक घोड़ा जो मुश्किल से पचास पेसा का होगा. इसमें अपराध क्या है ? क्या

है ?……इसलिए श्रीमान मैं आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप इस पर विचार करें…गहराई से विचार करें. दो कानूनों को ध्यान में रखिये : भगवान का कानून जो हमें दैत्यों से और सभी कुछ से अपनी रक्षा करने का हर समय आदेश देता है और दूसरा मानवीय कानून जो इन्सान की कारगुज़ारियों को अपराध और गैर-अपराध की श्रेणियों में रखता है. इन दोनों कानूनों के अनुसार मेरा मुवक्किल अपराधी नहीं ठहरता."

वकील ने विजय की भावना से चारों तरफ देखा, अपने माथे का पसीना पोंछा और अपने मुवक्किल की तरफ देखकर मुस्करा दिया.

न्यायाधीश महोदय ने दबे स्वर में राय-मशविरा किया. अध्यक्ष ने घंटी बजायी और पुकार लगायी :

"वादी मित्रे मारिनिन……"

"हाजिर है" सिपाही की तरह अटेंशन में खड़े होते हुए मित्रे बोला.

"तुम्हें कुछ कहना है ?"

"क्या मैं ?"

"हाँ, हां तुम. मैं तुम्हीं से बात कर रहा हूँ.

"जी…जी मैं तो कहूँगा कि वैसा ही हुआ."

"ठीक-ठीक बताओ कैसे हुआ ?"

जोर से चीखता हुआ मित्रे बोला : "घोड़ा. वह मेरे मकान के पिछवाड़े नाचता रहता था. मैंने अक्सर पीटर से कहा कि उसे बन्द रखा करो नहीं तो भेड़िये उसे मार डालेंगे. वह बहुत नुकसान करता था. वह मेरे बगीचे को रौंदता था, जैसे ही अन्धेरा होता था वह बाड़ा फांद कर आ जाता था. उसने मुझे तबाह कर दिया. मुझे और किसी चीज की उतनी परवा नहीं थी श्रीमान. लेकिन कद्दू. आपको सच बता दूं, कद्दू की हालत देखकर मेरा कलेजा मुंह को आने लगता था. वह इतना शानदार कद्दू था.

आपने इतना बढ़िया कद्दू अपनी जिन्दगी में नहीं देखा होगा. जब मैंने कद्दू की दुर्दशा देखी तो मैंने घोड़े से कहा : "तू जरा ठहर जा." और मैंने अपनी बन्दूक भरी और ताक में बैठ गया. आधी रात के समय वह आया. उसके पास और काम ही क्या था ?"

"उसके बाद क्या हुआ ?" अध्यक्ष ने कहा.

"मैंने अपनी बन्दूक उठायी और उसे गोली मार दी."

"इसके बाद ?"

"इसके बाद मैंने और मेरी बीवी उसे घसीट कर गाँव के बाहर ले गये और हमने उसे फूस में दबा दिया. लेकिन..."

वकील अपने मुवक्किल की सरल कहानी सुनता रहा और गुस्से में कांपता रहा. वह चाह रहा था कि मित्रे उसकी तरफ देखे और वह उस पर कड़ी नजर डाल कर उसे चुप करा दे लेकिन ऐसा लगता था कि वह किसान अपने वकील को भूल चुका था. वह सिर्फ अध्यक्ष की तरफ देख रहा था

"और तुम्हारे ख्याल में घोड़े की कीमत क्या थी ?" अध्यक्ष ने पूछा.

"मुझे क्या पता उसकी कीमत क्या थी. लेकिन वह घोड़ा बहुत बढ़िया था." मित्रे बोला.

वकील ने गुस्से में अपने कागज फेंक दिये और उठ खड़ा हुआ

न्यायाधीश सलाह लेने के लिए उठ खड़े हुए वकील मित्र को पकड़ कर बरामदे में लाया और गुस्से में चीख कर उससे बोला

"बेवकूफ अगर तुझे झूठ बोलना नहीं आता तो तूने वकील क्यों किया ?"

और वह गुस्से में सीढ़ियां दनदनाता हुआ निकल गया ●

वर्षा

● यीन्द्रिश्का स्मेतानोवा

महीने भर से बड़ी उमस है.

वन-विभाग की महिला कर्मचारीगण दमकते हुए सूरज की चकाचौंध से अंधी और मुरझाई सी घर लौटती हैं.

विलासा की धारा सूख गयी है और काटेजों के दरवाजे पर पड़े हुए पत्थर इतने गर्म हो गये हैं कि उन पर नंगे पाव चलना असम्भव है.

यह मौसम झगड़े करने के लिए आदर्श होता है.

लोग एक-दूसरे से बिगड़ उठते हैं. वन-विभाग का एक के बाद दूसरे राजकीय फार्म से झगड़ा हो जाता है. स्थानीय स्टोर की युवती ने रियोहनोव के मुख्य कार्यालय को फोन पर पांच बार धमकी दी कि अगर वे फौरन-बिल्कुल फौरन- लेमनेड और बीयर की बोतलें नहीं भेजेंगे तो वह नौकरी छोड़ कर चली जायेगी.

ऐसी बातें जिन पर और वक्त कोई ध्यान नहीं देता, अब बहुत बड़ी बन गयी हैं और अत्याधिक महत्त्व की हो गयी हैं. फार्म के ट्रेक्टरों के रेडियेटरों से भाप इस तरह उठती है मानों वे धुलाई मशीनें हों और उन पर जो चीज लदकर आती है वह घास नहीं, कोई सूखी और जली हुई चीज मालूम होती है जो सड़क पर खड़-खड़ करती गिर जाती है.

लेकिन इतवार को यह सब भी नहीं होता. काम के दिनों में टेलीफोन के सम्बन्ध कायम रहते हैं. बेकारी की गाड़ी आती है और ड्राईवर सुनहली डबल रोटियों का ढेर लेकर अपना सन्तुलन संभालते हुए स्टोर की सीढ़ियों पर चढ़ता है. और इस घाटी में बस सेवा भी दिन में चार बार सामने आती है. काम के दिनों में कुछ न कुछ होता ही रहता है और लोग यह नर्क जैसी गरमी सहन कर लेते हैं.

इतवार को यह सब भी नहीं होता.

इस नन्हें से गांव को जीवन से जोड़ने वाले टेलीफोन का एक मात्र तार खामोस रहता है. बस सेवा, तथा दूधवाली और बेकारी की गाड़ियां गांव से गुजर कर समय को जानने और काटने का अवसर देने के लिए नहीं आतीं. न कोई आवाज होती है और न कोई हरकत. बस पहाड़ों से गर्म धुंध उठती है जो पोस्ट आफिस की चिमनी के ऊपर, धीरे-धीरे चलायी जानेवाली फिल्म की तरह गुजरती है.

दोपहर के थोड़े बाद मारेचेक की बेटी पेरम्बुलेटर लेकर लकड़ी चीरनेवाली मिल में निकल पड़ी है. सड़क के छायादार किनारों पर चलती हुई, वह बच्चे की गाड़ी को ताल के साथ धक्के मारती है और बच्चे को सुलाने का प्रयत्न करती जा रही है. छोटे से लकड़ी के पुल के पास पहुँच कर वह यकायक रुक जाती है और नदी के किनारे की ढलान पर उगी हुई ऊबड़खाबड़ झाड़ियों की ओर जिज्ञासा की दृष्टि से देखने लगती है. सड़क किनारे की झाड़ियों से कैनवास के दो जूते—नीले और सफेद धारीदार जूते—और सफेद फीते झाँकते हैं. इसमें क्या है. लेकिन उनके आगे मुड़ी हुई पतलून के छोर और उनसे आगे किसी आदमी का शरीर दिखाई देता है जिसकी गर्दन नीचे ढलान की ओर पड़ी हुई है.

वह अविश्वास की मुद्रा में नीचे झुकी और उसने एक जूते की नोक पकड़ कर हिलायी शरीर शान्त, गतिहीन पड़ा था. मौत ऐसी ही होती है—घास तक नहीं लहराती, कोई पक्षी भी नहीं उड़ता

वह बदहवासी में आगे इधर-उधर दौड़ाती है कि कहीं जीवन का चिन्ह दिखायी दे. काश, एक पत्ता ही हवा में उड़कर खड़खड़ा जाय. उसने धारा की ओर देखा जो पत्थरों के बीच शान्त पड़ी है उसे एक साइकिल का अगला पहिया दिखायी दिया जो ढलान पर लुढ़क कर धारा के किनारे की झाड़ियों की जड़ में उलझ गया थी. यह पहिया धौंकनी के पहिए की तरह अभी तक चल रहा था और धूप में उसकी तीलियाँ चमक रही थी.

बढ़ई अखबार से मुँह ढक कर रसोई घर में ऊँघ रहा है. वह सपना देख रहा था कि वह भयंकर शोरगुल, धरती पर पाँव पीटे जाने की आवाजों और घंटियों की टन-टन के बीच असहाय और निश्चल पड़ा हुआ है. इस शोरगुल के बीच कहीं से एक वाक्य बार-बार दुहराया जा रहा है—जिसके शब्द एक-दूसरे पर गिरते-पड़ते, घुलते-मिलते चले आ रहे है. अपने को बहुत केन्द्रित कर बढ़ई उस वाक्य का अर्थ पकड़ने का प्रयत्न करने लगता है. उस आवाज की धारा टूट कर धीरे-धीरे अलग-अलग शब्दों में बिखरने लगी. बढ़ई मारेचेक आँखें खोलता है और पाता है कि उसकी बेटी उसके पास झुकी खड़ी है.

"उठिए डैडी देखिये. वहां पुल के पास कोई मरा पड़ा है."

बढ़ई फुर्ती से पैर स्लिपर में डालता है और कपड़े की अलमारी पर से फर्स्टएड का डिब्बा उठाकर सड़क पर भाग निकलता है.

जिप्सी लड़की कातारिना चोनकोवा अभी ही उधर से निकली थी. पुल के पास पहुँचकर उसने भी झाड़ियों से झाँकते हुए नीले कैनवास के जूते देखे. जब मारेचेक वहां पहुंचता है तो उसको सड़क की धूल पर घुटने के बल बैठे और आहें

चेकोस्लोवाक कहानी

वर्षा

• यीन्द्रिश्का स्मेतानोवा

महीने भर से बड़ी उमस है.

वन-विभाग की महिला कर्मचारीगण दमकते हुए सूरज की चकाचौंध से अंधी और मुरझाई सी घर लौटती हैं.

व्लतावा की धारा सूख गयी है और काटेजों के दरवाजे पर पड़े हुए पत्थर इतने गर्म हो गये हैं कि उन पर नंगे पाव चलना असम्भव है.

यह मौसम झगड़े करने के लिए आदर्श होता है.

लोग एक-दूसरे से बिगड़ उठते हैं. वन-विभाग का एक के बाद दूसरे राजकीय फार्म से झगड़ा हो जाता है. स्थानीय स्टोर की युवती ने रियोहनोव के मुख्य कार्यालय को फोन पर पांच बार धमकी दी कि अगर वे फौरन-बिल्कुल फौरन-लेमनेड और बीयर की बोतलें नहीं भेजेंगे तो वह नौकरी छोड़ कर चली जायेगी.

ऐसी बातें जिन पर और वक्त कोई ध्यान नहीं देता, अब बहुत बड़ी बन गयी हैं और अत्याधिक महत्व की हो गयी हैं. फार्म के ट्रैक्टरों के रेडियेटरों से भाप इस तरह उठती है मानों वे धुलाई मशीनें हों और उन पर जो चीज लदकर आती है वह घास नहीं, कोई सूखी और जली हुई चीज मालूम होती है जो सड़क पर खड़-खड़ करती गिर जाती है.

लेकिन इतवार को यह सब भी नहीं होता. काम के दिनों में टेलीफोन के सम्बन्ध कायम रहते हैं. बेकारी की गाड़ी आती है और ड्राईवर सुनहली डबल रोटियों का ढेर लेकर अपना सन्तुलन संभालते हुए स्टोर की सीढ़ियों पर चढ़ता है. और इस घाटी में बस सेवा भी दिन में चार बार सामने आती है. काम के दिनों में कुछ न कुछ होता ही रहता है और लोग यह नर्क जैसी गरमी सहन कर लेते हैं.

इतवार को यह सब भी नहीं होता.

इस नन्हें से गांव को जीवन से जोड़ने वाले टेलीफोन का एक मात्र तार खामोश रहता है. वन सेवा, तथा दूधवाली और बेकारी की गाड़ियां गांव से गुजर कर समय को जानने और काटने का अवसर देने के लिए नहीं आतीं. न कोई आवाज होती है और न कोई हरकत. बस पहाड़ों से गर्म धुंध उठती है जो पोस्ट आफिस की चिमनी के ऊपर, धीरे-धीरे चलायी जानेवाली फिल्म की तरह गुजरती है.

दोपहर के थोड़े बाद मारेचेक की बेटी पेरम्बुलेटर लेकर लकड़ी चीरनेवाली मिल से निकल पड़ी है. सड़क के छायादार किनारों पर चलती हुई, वह बच्चे की गाड़ी को ताल के साथ धक्के मारती है और बच्चे को सुलाने का प्रयत्न करती जा रही है. छोटे से लकड़ी के पुल के पास पहुँच कर वह यकायक रुक जाती है और नदी के किनारे की ढलान पर उगी हुई ऊबड़खाबड़ झाड़ियों की ओर जिज्ञासा की दृष्टि से देखने लगती है. सड़क किनारे की झाड़ियों से कैनवास के दो जूते—नीले और सफेद धारीदार जूते—और सफेद फीते झांकते हैं. इसमें क्या है. लेकिन उनके आगे मुड़ी हुई पतलून के छोर और उनसे आगे किसी आदमी का शरीर दिखाई देता है जिसकी गर्दन नीचे ढलान की ओर पड़ी हुई है.

वह अविश्वास की मुद्रा में नीचे झुकी और उसने एक जूते की नोक पकड़ कर हिलायी. शरीर शांत, गतिहीन पड़ा था. मौत ऐसी ही होती है—घास तक नहीं लहराती, कोई पक्षी भी नहीं उड़ता.

वह यद्दवास सी आँखें इधर-उधर दौड़ाती है कि कहीं जीवन का चिन्ह दिखायी दे. काश, एक पत्ती ही हवा में उड़कर खड़खड़ा जाए. उसने धारा की ओर देखा जो पत्थरों के बीच शान्त पड़ी है उसे एक साइकिल का अगला पहिया दिखायी दिया जो ढलान पर लुढ़क कर धारा के किनारे की झाड़ियों की जड़ में उलझ गयी थी. यह पहिया धौंकनी के पहिए की तरह अभी तक चल रहा था और धूप में उसकी तीलियां चमक रही थीं.

बढ़ई अखबार से मुंह ढक कर रसोई घर में ऊंघ रहा है. वह सपना देख रहा था कि वह भयंकर शोरगुल, धरती पर पांव पीटे जाने की आवाजों और घंटियों की टन-टन के बीच असहाय और निश्चल पड़ा हुआ है. इस शोरगुल के बीच कहीं से एक वाक्य बार-बार दुहराया जा रहा है—जिसके शब्द एक-दूसरे पर गिरते-पड़ते, घुलते-मिलते चले आ रहे हैं. अपने को बहुत केन्द्रित कर बढ़ई उस वाक्य का अर्थ पकड़ने का प्रयत्न करने लगता है. उस आवाज की धारा टूट कर धीरे-धीरे अलग-अलग शब्दों में बिखरने लगी. बढ़ई मारेचेक आँखें खोलता है और पाता है कि उसकी बेटी उसके पास झुकी खड़ी है.

"उठिए डैडी देखिये. वहां पुल के पास कोई मरा पड़ा है."

बढ़ई फुर्ती से पैर स्लिपर में डालता है और कपड़े की अलमारी पर से पन्टेंगुड़ का डिब्बा उठाकर सड़क पर भाग निकलता है.

जिप्सी लड़की कातारिना चोनकोवा अभी ही उधर से निकली थी. पुल के पास पहुँचकर उसने भी झाड़ियों से झांकते हुए नीले कैनवास के जूते देखे. जब मारेचेक वहां पहुंचता है तो उसको सड़क की धूल पर घुटने के बल बैठे और बाहें

चेकोस्लोवाक कहानी

वर्षा

● यीन्द्रिश्का स्मेतानोवा

महीने भर से बड़ी उमस है.

वन–विभाग की महिला कर्मचारीगण दमकते हुए सूरज की चकाचौंध से अंधी और मुरझाई सी घर लौटती हैं.

विलासा की धारा सूख गयी है और काटेजों के दरवाजे पर पड़े हुए पत्थर इतने गर्म हो गये हैं कि उन पर नंगे पाव चलना असम्भव है.

यह मौसम झगड़े करने के लिए आदर्श होता है.

लोग एक–दूसरे से बिगड़ उठते हैं. वन-विभाग का एक के बाद दूसरे राजकीय फार्म से झगड़ा हो जाता है. स्थानीय स्टोर की युवती ने रियोहनोव के मुख्य कार्यालय को फोन पर पांच बार धमकी दी कि अगर वे फौरन–बिल्कुल फौरन-लेमनेड और बीयर की बोतलें नहीं भेजेंगे तो वह नौकरी छोड़ कर चली जायेगी.

ऐसी बातें जिन पर और वक्त कोई ध्यान नहीं देता, अब बहुत बड़ी बन गयी हैं और अत्याधिक महत्त्व की हो गयी हैं. फार्म के ट्रेक्टरों के रेडियेटरों से भाप इस तरह उठती है मानों वे धुलाई मशीनें हों और उन पर जो चीज लदकर आती है वह घास नहीं, कोई सूखी और जली हुई चीज मालूम होती है जो सड़क पर खड़–खड़ करती गिर जाती है.

लेकिन इतवार को यह सब भी नहीं होता. काम के दिनों में टेलीफोन के सम्बन्ध कायम रहते हैं. बेकारी की गाड़ी आती है और ड्राईवर सुनहली डबल रोटियों का ढेर लेकर अपना सन्तुलन संभालते हुए स्टोर की सीढ़ियों पर चढ़ता है. और इस घाटी में बस सेवा भी दिन में चार बार सामने आती है. काम के दिनों में कुछ न कुछ होता ही रहता है और लोग यह नर्क जैसी गरमी सहन कर लेते हैं.

इतवार को यह सब भी नहीं होता.

इस नन्हें से गांव को जीवन से जोड़ने वाले टेलीफोन का एक मात्र तार अचेत रहता है. बस सेवा, तथा दूधवाली और बेकारी की गाड़ियां गांव से गुजर कर समय को जानने और काटने का अवसर देने के लिए नहीं आतीं. न कोई आवाज होती है और न कोई हरकत. बस पहाड़ों से गर्म धुंध उठती की चिमनी के ऊपर, धीरे–धीरे चलायी जानेवाली [illegible]

धारा से सफ़ेद जीन की पतलून को लाल होते देखती रह जाती है.

बढ़ई सावधानी से घायल युवक की पेटी ढीली करता है, पतलून के पायंचे फाड़-कर अलग कर देता है और उसको उतारने लगता है

युवक बाहें फैलाये हुए सड़क किनारे नंगा पड़ा रह जाता है

'तुम मौत के मुंह में गिर पड़े हो, बेटे !" बढ़ई दुःख से गर्दन हिलाकर बड़बड़ाता है. उसने युवक के पतलून की जेब टटोली, किन्तु उसे कोई आइडेंटिटी कार्ड नहीं मिलता जिससे उसका परिचय मिल जाता. उसकी हथेलियां उलटकर उन पर बढ़ई अपनी उंगलियां फेरता है और कहता है, "लगता है, वन विभाग का कोई कर्मचारी है, लेकिन कहां का है ? बारनोमौचिस्स या स्केनिनी का ?" बढ़ई की नजर लड़कियों की तरफ जाती है और यकायक उसे अहसास होता है कि उनमें से कोई भी लड़की अठारह वर्ष से अधिक की नहीं है और उन सभी ने मर्द का नंगा शरीर पहली ही बार देखा है—एक नंगा शरीर जिसकी कमर से रक्त बह रहा. एंजेला अपना चेहरा ढांप लेती है

मारेचिक फौरन झुक जाता है और अपने डिब्बे में से पट्टी बांधने का कपड़ा निकाल कर उस युवक की कमर पर डाल देता है

एंजेला इस बीच सड़क पर वापस दौड़ पड़ती है और उसके कानों के ईयररिंग घुंघरुओं की तरह खनक मारने लगते हैं वह होस्टल में अपने कमरे में घुस जाती है और पलंग से नोचकर चादर, कम्बल और तकिया उठा लेती है. वह फिर वापस पुल की ओर दौड़ती है और धूल भरी सड़क पर चादर बिछाकर बढ़ई की ओर गर्दन हिलाती है कि वह उसकी सहायता करे वह सावधानी के साथ उस नंगे शरीर को अपनी नाजुक बांहों में उठाती है और चादर पर रख देती है.

वे युवक को ले जाकर बस स्टाप की बेंच पर लिटा देते हैं. उसकी गर्दन के नीचे तकिया सरका दिया जाता है और एक गुलाबी तथा आसमानी अंगरक्षिका वहां तैनात हो जाती है. जब एक लड़की उसके सिर पर ठंडी पट्टियां रखती है, दूसरी लड़की चाय में उंगलियां डुबोकर उसके होंठों पर लगाती है और कुछ अन्य लड़-कियां ठंड से बचाने के लिए उसको कम्बल में लपेट देती हैं, तब उनके गले में पड़े हुए कांच के मोतियों के हार खनक उठते हैं वे नन्ही मारगिट को झिड़क देती हैं जो बराबर युवक के चारों ओर चक्कर लगाती है और लड़कियों की बांहें पकड़कर पूछती है : "क्या तुम्हें पता है कि उसकी मां जिन्दा है ?"

मारेचिक चौराहे पर खड़ा हो जाता है. वह किसी कार या मोटर साइकिल के आने की आवाज सुनने के लिये चौकन्ना है. अस्पताल यहां से पच्चीस किलो-मीटर दूर है. किसी को जल्दी ही शहर जाना है और वहां से एंबुलेंस लाना है.

भरते पाता है . बडई झाड़ियों में कूद पड़ता है और एक चेहरे को उठाता है जो मोम की तरह पीला पड चुका है .

युवक मरा नहीं है, उसकी पुतलियों से जीवन का आखिरी चिन्ह झांकता है .

"चोनकोवा" मारेचेक जिप्सी लड़की पर चिल्ला पड़ता है, "भाग कर जा, और कुछ लोगों को पकड़ ला ."

"पागल की तरह जिप्सी लड़की बाहें उठाये हुए भाग पड़ती है और आंसुओं के विना शोक-संतप्त स्वर में चिल्लाती जाती है, "एक आदमी मरा पड़ा है . एक आदमी मरा पड़ा है ."

वन विभाग की बीस महिला कर्मचारी बस स्टाप के पास बने हुए स्वयं सेवक गृह में रहती हैं . उन्होंने अपने निवास के सादे कमरों को रंग बिरंगे क्रीप कागजों के परदों से सजा रखा है . हर दिन काम से लौट कर वे पेस्टल रंग के फीतों से सजे ब्लाउज और नकली मोतियों के हार पहनती हैं . फिर इस श्रृंगार में वे बस स्टाप के पास पड़ी बेंच पर बैठ जाती हैं और प्रतीक्षा करती हैं . शाम की बस आती है, लडकियां उठ बैठती हैं और बड़ी उत्सुकता से देखती हैं कि कौन आया है . हमेशा यही होता है वे आहें भरती हैं, एक-दूसरे की कमर में बाहें डालती हैं और धीरे-धीरे अपने होस्टल वापस चली जाती हैं . बहुत रात गये तक वे क्रीप के परदों से सजी खिडकियों पर बैठी रहती हैं, धीमे स्वर में गप मारती हैं और प्रतीक्षा करती हैं—वे हमेशा ही किसी की प्रतीक्षा करती रहती हैं, हमेशा किसी की बाट जोहती हैं .

कौन है वह जिसके लिए वे हर शनिवार की शाम को एक दूसरे के बाल घुंघराले बनाती हैं ? कौन है, वह जिसकी खातिर सुन्दर और तीखे नाक-नक्शेवाली एलेना हूबोवा ने मोमबत्ती की लौ से सुई गरम करके, आह तक भरे बिना, अपने कान छेद लिये और उनमें चकाचौंध करने वाले ईयररिंग पहन लिये ?

सौ की आबादी वाले इस गांव में सचमुच ऐसा कोई आदमी नहीं जो अविवाहित हो . आखिरकार आज एक आदमी आया . वह पड़ा हुआ है झाड़ियों में और कनारिना होस्टल की खिड़कियों के नीचे चीख रही है .

"एक आदमी मरा पड़ा है" .

[illegible] लड़कियां सड़क पर पुल की तरफ भाग पड़ती हैं .

वे युवक को झाड़ियों से निकालने में मारेचेक की सहायता करती हैं .

[illegible] उसके सफेद पीले चेहरे को—जिसकी कनपटियों पर खरोंच का बड़ा सा [illegible]—अपने हाथों में पकड़ लेती है और आंख के ऊपर से बने हुए रक्त की

धारा में सफेद जीन की पतलून को लाल होते देखती रह जाती है .

बढ़ई सावधानी से घायल युवक की पेटी ढीली करता है, पतलून के पायंचे फाड़-कर अलग कर देता है और उसको उतारने लगता है

युवक बांहे फैलाये हुए सड़क किनारे नंगा पड़ा रह जाता है

"तुम मौत के मुंह में गिर पड़े हो, बेटे !" बढ़ई दुःख में गर्दन हिलाकर बड़बड़ा उठता है . उसने युवक के पतलून की जेब टटोली, किन्तु उसे कोई आइडेंटिटी कार्ड नहीं मिलता जिससे उसका परिचय मिल जाता . उसकी हथेलियां उलटकर उन पर बढ़ई अपनी उंगलियां फेरता है और कहता है, "लगता है, वन विभाग का कोई कर्मचारी है . लेकिन कहां का है ? बारतोलोमीविल्स या स्देनिनी का ?" बढ़ई की नजर लड़कियों की तरफ जाती है . और यकायक उसे अहसास होता है कि उनमें से कोई भी लड़की अठारह वर्ष से अधिक की नहीं है और उन सभी ने मर्द का नंगा शरीर पहली ही बार देखा है—एक नंगा शरीर जिसकी कमर से रक्त बह रहा . एलेना अपना चेहरा ढांक लेती है

मारेंचेक फौरन झुक जाता है . और अपने डिब्बे में से पट्टी बांधने का कपड़ा निकाल कर उस युवक की कमर पर डाल देता है .

एलेना इस बीच सड़कट पर वापस दौड़ पड़ती है और उसके कानों के ईयररिंग आंसुओं की तरह चमक मारने लगते हैं . वह होस्टल में अपने कमरे में घुस जाती है और पलंग से नोचकर चादर, कम्बल और तकिया उठा लेती है . वह फिर वापस पुल की ओर दौड़ती है और धूल भरी सड़क पर चादर बिछाकर बढ़ई की ओर गर्दन हिलाती है कि वह उसकी सहायता करे . वह सावधानी के साथ उस नंगे शरीर को अपनी मज़बूत बांहों में उठाती है और चादर पर रख देती है .

वे युवक को ले जाकर बस स्टाप की बेंच पर लिटा देते हैं . उसकी गर्दन के नीचे तकिया सरका दिया जाता है और एक गुस्सैली तथा आसमानी अंगरक्षिका वहां तैनात हो जाती है . जब एक लड़की उसके सिर पर ठंडी पट्टियां रखती है, दूसरी लड़की पाप में उंगलियां डुबोकर उसके होंठों पर लगाती है और कुछ अन्य लड़-कियां ठंड से बचाने के लिए उसको कम्बल में लपेट देती हैं, तब उसके गले में पड़े हुए शंख के मोतियों के हार चमक उठते हैं . वे नन्हीं मारगिट को झिड़क देती हैं जो बराबर युवक के चारों ओर चक्कर लगाती है और लड़कियों की बांहें पकड़कर पूछती है : "क्या तुम्हें पता है कि उसकी मां जिन्दा है ?"

मारेंचेक चौराहे पर खड़ा हो जाता है . वह किसी कार या मोटर साइकिल के आने की आवाज सुनने के लिये बेचैन है . अस्पताल यहां से पच्चीस किलो-मीटर दूर है . किसी को जल्दी ही शहर जाना है और वहां से एम्बुलेंस लाना है .

लेकिन पोलेण्ड की सीमा पर बसी हुई इस नगण्य बस्ती से आज इतवार के दिन कौन गुजरेगा ?

मारेचेक ने कान खड़े किये . वहां—हां, सचमुच उधर से कुछ आ रहा है . वह उस गाड़ी की तरफ दौड़ना ही चाहता है कि वह आवाज उसके पास आ जाती है—वह एक बड़ी मक्खी थी जो खाई की झाड़ियों के पार से उड़ती आ जाती है . वह गुस्से में अपनी टोपी हवा में झुला कर मक्खी भगा देता है और टोपी सड़क पर फेंक देता है .

"क्या लोग हैं ! हम पांच बरस से कह रहे हैं कि टेलीफोन इतवार को भी चालू रख सके ? इस घटना के बाद उन्हें इस समस्या पर सोचना ही पड़ेगा . लेकिन अभी तो किसी को यहां आ जाना चाहिए...! भाड़ में जायें ! अगर यह लड़का मर गया......तो मैं उन्हें देख लूंगा !" बढ़ई बरस रहा था .

अन्ततः एक मोटरसाइकिल आ ही निकली . मारेचेक ने उस किंकर्त्तव्यविमूढ़ किसान को हिदायत दी कि वह अभी मुड़े और डाक्टर तथा एंबुलेंस पकड़ कर लाये .

"समझ गये ?" उसने कई बार दोहराया . "अगर डाक्टर बाहर गया हो तो फौज की बैरकों में चले जाना . यहां की जिला परिषद के नाम पर ! वहां बताना कि एक आदमी को बुरी तरह चोटें आयी हैं और वह मर रहा है. सिपाही उसे ले जायेंगे······. फौज के लोग इतना काम जरूर करेंगे, करेंगे कि नहीं ? जिला परिषद् के नाम पर कहना ."

और बीस मिनट बाद एंबुलेंस आ जाती है . अभी तक ओवरआल और स्लीपर ही पहने बैठा हुआ मारेचेक एंबुलेंस में चढ़ जाता है और युवक के पास बैठ जाता है , रास्ते भर वह युवक के पीले और मटमैले पड़ते चेहरे को ताकता रहता है और यकायक उसे ध्यान आता है कि नन्हीं मारगिट का सवाल उतना बेहूदा नहीं था , इस लड़के का कोई अपना जरूर होगा, शायद मां हो जो इतवार के लंच के बाद बर्तन साफ कर रही होगी—अपने बेटे की गम्भीर हालत से बेखबर. काश, कोई उसे सूचना दे देता .

वह युवक को आपरेशन के कमरे के बाहर तक ही छोड़ सका . उसे अन्दर की रोशनियां और औजार खौलाये जानेवाले ड्रमों से उठती हुई भाप ही दिखायी दे ती है कि यकायक पहियोंवली गाड़ी को अन्दर लेकर कमरे के दरवाजे बंद हो ते हैं . और उस गाड़ी पर वह आदमी पड़ा था जिसका न कोई नाम है और जिसका जीवन ही सुरक्षित है . लेकिन जीवन की रक्षा करने वाली खामोश क्तियां उसे बचाने के लिए पूरे वेग से काम कर रहीं हैं .

उन्होंने बढ़ई को घर वापस जाने को कहा और बताया कि प्राण रक्षा के लिए जो कुछ किया जाना चाहिए, वह सब हो रहा है. उसे अपने गाव के पास की पास्के बस्ती के पास तक एक कार में लिफ्ट मिल जाती है, उसके बाद वह स्ली-पर उतार देता है जो पैदल चलने में आड़े आते हैं और शुष्क पहाड़ी इलाका तथा जगल पार करता गाव की ओर बढता है.

आकाश में धीरे-धीरे बदलियां उठने लगीं. जब तब कोई हलका झोंका शान्त हवा को झकझोर जाता और पानी की गध दे जाता ! शायद कही पास ही पानी बरस रहा है. लेकिन यहा गाँव शान्त और सास रोके पड़ा है, उस युवक की तरह. यह विचार मूर्खतापूर्ण है, इसको वह जानता है. वह कभी अन्धविश्वासी भी नही रहा, फिर भी वह इस समय यह बात अपने मन से न उतार सका कि जिस बारिश की उन सबको हफ्तों से प्रतीक्षा है,उसके आने मे और इस लड़के की जिन्दगी में कोई गहरा सम्बन्ध है. अगर आज वर्षा हो गयी तो यह भाग्य का इजबार होगा··· और ऐसा होना चाहिए.

बड़े-बड़े बादल आकाश में उमड पड़ते है और पहाड़ियों पर झुक आते है. और फिर पहली बूंदें आती है, भारी थप-थप करती हुई, और धरती छूने से पहले ही गरम हवा में विलीन होती हुई. सड़क किनारे बने हुए मकानो की पक्की छतें कोयले की तरह धुंआने लगती है और बच्चे नाचते हुए चिल्लाते है "आग देखो, आग !"

वर्षा पूरे जोर-शोर से शुरू हो जाती है पानी नालियों से बहने लगता है और अब मारेचेक तक को विश्वास हो जाता है कि वर्षा शुरू हो गयी है. वह एक खेत के बीच में रुक जाता है और ऊपर की तरह उठाकर तथा बाहें फैलाकर पानी पीता है और बारिश की धारा को मुट्ठी में बन्द करता है. वह चिल्ला उठता है. "वह जरूर जीयेगा···उसे जीना पड़ेगा !"

वह जगल से गुजरा जो गर्म कमरे की तरह उमस से और नमी से भरा है और सामने गाव है.

जब वह अपने घर की तरफ जानेवाले रास्ते पर मुड़ा तो उसे खलिहान के किनारे पास बधे खड़ी हुई लड़कियां दिखायी दीं. वे सभी भीग गयी हैं और उनके बालो से उलझता हुआ टेढ़ी-मेढ़ी धाराओं में पानी मुंह पर बह रहा है. वे सदा की तरह प्रतीक्षा कर रही है.

"वह कैसा है ?" वे सभी एक स्वर में पूछती है.

"बच जायगा. यही है कि उसका बहुत सारा खून निकल गया है और गहरा

आघात पहुंचा है. उन्होंने आते ही उसे भांप लिया. यहां दस मिनट और न पहुंचते तो बहुत देर हो जाती…."

एलेना ने बढ़ई की बांह पकड़ ली.

"मैं उसकी साइकिल ले आयी हूं…यह तुम्हारे घर के बाहर रखी है. मैंने उसको धारा में से निकाला. कुछ ज्यादा नहीं बिगड़ी है, सिर्फ उसका पैडल झुक गया है. मारेनेक, ओह मारेनेक !"

"तुम चाहती हो कि मैं वह साइकिल सुधार दूं ?"

लड़की कोई जवाब नहीं देती. वह सिर्फ अपनी बड़ी-बड़ी, पनीली आंखों से उसकी ओर देखती रह जाती है.

वह भी तो चाहती है कि उस लड़के को जीवित रखने के लिए खुद भी कुछ कर सके. और साइकिल एक और कारण है जिसके लिए उसको यहां वापस आना पड़ेगा.

"लेकिन साइकिल को हम उसके पास नहीं भेजेंगे !' नन्हीं मारगिट हवा में अपनी उंगली झुलाते हुए बोल पड़ी, "वह यहां आये और खुद ले जाये……खुद ले जाये !"

वे सब खिलखिला पड़ती हैं और उस रास्ते पर तितर-बितर हो जाती हैं, जो बहते हुए पानी को अब और अधिक सोखने में असमर्थ हो रहा है. इतवार के दिन पहने जानेवाले ऊंची एड़ी के जूतों में वे लड़कियां मटमैले पानी भरे गड्ढों को फांदती चली जाती हैं. और जब वे चल पड़ती हैं तब नन्हीं मारगिट कुछ डंठल फैलाकर और धरती से कान लगाकर चिल्ला पड़ती है,

"सुनो--सुनो, यह कैसे लप-लप कर रही है, कैसे पानी पी रही है…!"

इथोपियन कहानी

इन्साफ

एक दिन एक युवती अपनी बकरियों को ढूंढने गई, जो चारागाह के बाहर निकल गई थी. उन्हें ढूँढते हुए उसने खेत के चारों ओर काफी चक्कर लगाए, पर उनके न मिलने पर वह एक किनारे ठहर गई, जहां एक बहरा आदमी अपने लिए काफी उबाल रहा था.

वह न जानते हुए कि वह व्यक्ति बहरा है, उसने पूछा, 'क्या आपने मेरी बकरियों को कुछ इधर से जाते हुए देखा है ?"

बहरे व्यक्ति ने समझा कि वह पानी के लिए पूछ रही है, इसलिए बिना सोचे, सामने नदी की ओर इशारा कर दिया.

स्त्री ने धन्यवाद दिया और उस दिशा में चल पड़ी. आगे सौभाग्यवश नदी के पास बकरियाँ मिल गईं और करीब ही एक बच्चा पड़ा हुआ था जिसने पत्थर से गिरकर अपनी टांग तोड़ ली थी ?

उसने बच्चे को उठाया और बकरियाँ लेकर वापस चली गई.

बहरे व्यक्ति के पास पहुँच कर स्त्री ने उसको धन्यवाद दिया और उसके ठीक रास्ता दिखलाने के लिए आभार प्रकट करने के विचार से हाथ वाला बच्चा देने के लिए आगे कर दिया. लेकिन बहरा यह बात न समझ सका उसने समझा कि वह जानवरों की बदकिस्मती पर नाराज होकर उसे बद्दुआ दे रही है, इसलिए वह गुस्से से बोला.

"मेरा इस बात से कोई मतलब नहीं."

"लेकिन तुमने तो सही रास्ता दिखाया था !" स्त्री ने कहा.

"बकरियों के साथ हर बार ऐसी ही कोई बात हो जाती है"—बहरा जोर से बोला.

"मैंने इन्हें ठीक उसी जगह देखा, तुमने मुझे भेजा था"— युवती ने फिर आग्रह किया.

"आप चली जाएं और मुझे अकेला छोड़ दें."—, "मैंने जीवन भर इन्हें कभी नहीं देखा."— वह फिर चिल्लाया.

सड़क से जो आदमी गुजर रहे थे, बात सुनने के लिए खड़े हो गये. युवती ने उन्हें सारी बातें समझाईं कि वह बकरियाँ ढूंढ रही थी और इससे पूछने पर

उसने नदी की ओर इशारा किया. अब मैं उसकी सहायता के लिए यह बच्चा दे देना चाहती हूँ, जो मुझे यहाँ से मिला है.

"मेरी इस तरह बेइज्जती मत करो," बहरा फिर ज़ोर से चिल्लाया, "मैं टाँग तोड़ने का काम नहीं करता." और गुस्से में एक थप्पड़ युवती के जड़ दिया.

"हाय, आपने देखा, इसने मुझे मारा है !", स्त्री ने कहा कि वह उसे अदालत में ले जायगी.

फिर युवती बच्चे को उठाए, उस बहरे, और लोगों को लेकर जज के पास गई. जज ने घर से बाहर आकर उनकी बातें सुनीं. पहले युवती ने बयान दिया. फिर बहरे व्यक्ति ने और इसके बाद कुछ लोग भीड़ में से गवाह के रूप में बोले.

लेकिन इसका कोई फायदा न था, क्योंकि जज को नजदीक की चीज़ नज़र नहीं आती थी और वह भी उस व्यक्ति की तरह बहरा था,

उसने बात चीत बन्द कराने के लिए हाथ ऊपर किया. इसके बाद उसने अपना फैसला सुनाया. उसने फरमाया कि ऐसे झगड़ों का होना राजा के लिए बेइज्ज़ती की बात है, और चर्च की बदनामी का कारण है. फिर उस बहरे युवक की ओर देखकर कहा: "आप आज से अपनी पत्नी के साथ ठीक से बर्ताव किया करें"

और युवती की ओर इशारा करते हुए कह, "जहाँ तक आपका सवाल है आप सुस्त न रहा करें और पति के लिए खाना बनाने में देर न किया करें."

फिर बकरी की ओर देखकर कहा, "और यह प्यारी सुन्दर बकरी, खुदा करे, बड़ी उमर की हो और आप दोनों के लिए खुशी का कारण बने."

भीड़ टूट गई और लोग अपने-अपने रास्ते जाने लगे. और एक दूसरे से कहने लगे, आह, यह कितनी अच्छी बात है; इन्साफ की बात से पहले हम कैसे इकट्ठे हो गए थे. ····कितना आश्चर्य है. ···· " o

अनुवादक--स० पाल

नाइजीरियाई कहानी

दुविधा

• आई. एन सी. अनीबो

मगवेके मिट्टी की बनी अपनी छोटी सी गोलकार झोपडी मे बैठी विचारों मे डूबी हुई थी. अबका गाव के एक छोर पर बनी यह झोपडी अन्यों से भिन्न नहीं थी. दीवारो के साथ मिट्टी के दो लम्बे चबूतरे बने थे जो दिन मे बैठने के काम आते थे और रात मे सोने के. झोपडी के अन्दर की ज्यादातर जगह इन दो चबूतरो से घिरी थी. बीच मे आग जल रही थी और उसमे पडी लकडिया धुआ दे रही थी. दो स्टूल मात्र झोपडी का फर्नीचर था इसके अलावा कुछ बर्तन तथा मिट्टी के दो प्याले तथा सुन्दर खुदाई के हत्थे वाला एक दर्पण भी वहां रखा था. झोपडी मे लकडी का एक दरवाजा था जो पिछवाडे मे खुलता था. पिछवाडे मे अर्ध गोलाकार आगन था जिसे चटाइयों से घेर दिया गया था. दरवाजा इतना छोटा था कि मगवेके जब बाहर निकलकर आगन मे जाती तो वह झुककर दोहरी हो जाती.

रात आधी से अधिक बीत चुकी थी. पूरे गाव मे खामोशी छाई हुई थी. मरे से गदे कुत्ते जो सख्या मे गाव की आबादी से भी ज्यादा थे, चुपचाप थे. पास के एक जगल से उल्लू की आवाज ही इस निस्तब्धता को भग कर रही थी.
मगवेके को उबासी आई और बुढ़ापे से पीले हुए उसके कुछ दात चमक उठे. टूटी-फूटी आवाज मे वह बडबडाने लगा.

मेरे बेटे तुम कब लौट कर आयोगे. जिस कारण अब तुम रुके हुए हो. मैं अजाना देवी की सतुष्टि तो पूरी कर चुकी हूँ. अब तो रास्ता खुला है आते क्यों नहीं मेरे बेटे.'

पर कोई जवाब नहीं था. वैसी ही निस्तब्धता छाई हुई थी.

नारियल के तेल मैं जलते हुए दीपक का पीला प्रकाश झोपडी में फैला हुआ था. निस्तब्धता और गभीर हो उठी थी. हवा भी बडी मन्थर गति से चुपचाप बह रही थी शायद ऐसा न हो कि पत्तो की सरसर को भी मगवेके अपने बेटे का जवाब समझ बैठे. उसका बेटा जो चार महीने पहले इस ससार से कूच कर चुका था.

अभी भावो, चिन्तातुर मगवेके ने हाथ बढ़ाकर दिये की बत्ती का गुल झाड दिया और नमक छिडक दिया. कुछ तेज हुई रोशनी मे उसके मुरझाये हुए चेहरे की [illegible] हो और एक-एक नस उभर उठीं. उसकी पसली सहे हुए ढोल की

तरह खिच गई थी . पिछली तीन रात से वह सोई नहीं थी . आंखे अलसाकर सूजी सी हो गई थीं . कमर पर लपेटे हुए लाल रंग के लप्पे में से बदबू आ रही थी . अन्य पुजारिनों की तरह उसके चेहरे पर भी सफेद चाक का लेप लगा था. 'अजाला देवी ! मुझे कब तक उसकी प्रतीक्षा करनी होगी, ओह कब तक' वह हाथ पर अपनी ठोडी रखकर अतीत में खो गये.........

उसके सामने एक लम्बा तगड़ा नौजवान खड़ा था ऐसा युवक जिस पर हर माँ गर्व कर सकती है . उसका सुगठित शरीर और ओठों पर खेलती मुस्कान जो उसके पिता की याद कुरेद जाती था .

'वे कहते हैं तुमने मुझे बुलाया था ?' युवक का श्यामल शरीर डूबते हुए सूरज की रोशनी में दमक रहा था . माँ ने सोचा काश में इसे नहीं बुलाती पर वह तो विवश थी .अजाला देवी की पुजारिन होने की वजह से उसे देवी का आदेश मानना ही था .

वह बोली 'हाँ ! एनवानक्वो, मैंने तुम्हें बुलवाया था—अन्दर आ जाओ'. अन्दर आकर वह युवक मिट्टी के चबूतरे पर बिछी चटाई पर बैठ गया . उसकी उम्र केवल बाइस वर्ष ही थी .

'मुझे खेद है, मां मैं जल्दी नहीं आ सका, पत्नी के लिए खजूर तोड़ने चला गया था............

'कोई बात नहीं' पर माँ पुत्र स्नेह और कर्तव्य पालन के बीच दुविधा में फंस गई थी .

'क्या बात है माँ' एनवानक्वो बोला 'क्या तुमने मुझे केवल देखने के लिए बुलाया था, बोलती क्यों नहीं हो—क्या तुम्हारी देवी ने फिर कुछ कहा है उसके स्वर में कुछ हास्य का पुट था .

मगवेके क्रोध में भर कर बोली 'हाँ' देवी-देवताओं की आलोचना उसे बिल्कुल नहीं भाती थी .

हाँ एनवानक्वो देवी ने मुझ से कहा है, तुम जैसे पापियों के बारे में उसे कहना ही होता है . तुमने इस बार उसे बहुत रूष्ट कर दिया है , तुम्हें आठ दिन के भीतर एक बकरी, एक मुर्गी तथा सात जमींकंदों की भेंट चढ़ानी होगी .
'ऐसा मैं नहीं करूंगा तो' एनवानक्वो हँसने लगा .
मगवेके अपने ढलकते हुए आंसुओं को छिपाने के लिए दूसरी ओर निहारने लगी थी उसे गुस्सा तो इतना आया कि वह एनवानक्वो के गाल पर करारा तमाचा [illegible] दें . ऐसा बेहूदा लड़का है जो जिन्दगी और मौत से सम्बन्ध रखने वाली

बातों को भी मजाक मनाता है . कोई और होता तो वह फौरन जवाब भी दे देती पर सामने तो उसका अपना बेटा था—इकलौता बेटा वह विकट स्थिति में थी . अगर वह चुप रहती है तो लड़का कभी विश्वास ही नही करेगा . अतः उसे जबाब देना ही होगा . उसने ही तो इस बेटे को पालपोस कर बड़ा किया है. मगबेके ने जो कडा करके धीमे से उत्तर दिया .

"अगर तुम देवी की भेंट नही चढ़ाओगे तो तुम मर जाओगे"

एनवानक्वो फिर ठहाका मारकर हँस पडा मर जाऊगा ! अरी मा तुम समझती हो कि मैं ऐसी बातों मे यकीन करूँगा, मुझे इतना मूर्ख तो न समझो. देवी-देवताओं की बातें गए गुजरे जमाने की बाते हो गई है कोई भी समझदार व्यक्ति इन फजूल की बातो पर भरोसा नही करेगा. अच्छा तुम्ही बताओ माँ तुम इतने वर्षो से प्रार्थना करती रही हो, तुम्हारी देवी ने तुम्हे अब तक क्या दिया है. *तुम आशा करती हो मैं अपनी पसीने की कमाई इस लकडी की मूरत के लिए* खर्च कर दूँ. मेरी प्यारी मा तुम अपनी देवी से कह दो, मैं उसे नही मानता''''.'

''''''पर मा तुम यह क्या करने लगी मगबेके घुटनो के बल झुकी हुई कह रही थी—

अजाला माँ ! क्षमा करो, क्षमा करो. यह अबोध है, इस पर वार न करो मा, यह नासमझ है, अजाला मा दया करो !

एनवानक्वो अपनी माँ को इकटक निहारता रहा.' मगबेके उठी और फिर अपनी जगह बैठ गई.'

'मा तुम अभी अभी क्या करने लगी थी मैं तो डर गया था.'

ओह, तुम डरते भी हो, मैं तो समझती थी कि तुम पर कोई असर नही होता. तुम ऐसी चीज की क्यो निन्दा करने लगते हो जिसके बारे मे तुम अच्छी तरह जानते नही. जिस शक्ति की मान्यता तुम्हारे पुरखो के वक्त से चली आ रही है उसको तुम क्यों चुनौती देते हो, क्या तुम उससे अपने आप को बहुत बुद्धिमान और ताकतवर समझने लगे हो जो अब तक उस शक्ति के सामने सिर झुकाते चले आए है.

'पर मा' ''''''

देखो बीच मे बोलना ठीक नही, तुमने प्राचीन धर्म छोडकर ईसाई मजहब भी स्वीकार नही किया है फिर तुम ऐसी उल्टी बातें क्यो करने लगे हो. एनवानक्वो ! हरव्यक्ति को एक शक्ति मे अवश्य विश्वास करना चाहिए. तुम किस मे यकीन रखते हो. शायद किसी मे नही. सुनो तुम अजाला के बारे मे नही जानते. तुम जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त भी उसके प्रभाव से नही बच सकते. तुम उसी शक्ति का मजाक उड़ाते हो जो तुम्हारी देखभाल

करती है और जो तुम्हारे मरने के बाद भी तुम्हारी देखभाल करेगी.

'माँ ये सब पुरानी बातें है. अब समय बहुत बदल चुका है. माँ जिन बातों को हम पहले सपना समझते थे, वे आजकल वास्तविकता के रूप में बदल गई हैं, अब छोड़ो भी इन दकियानूसी चीजों को.

मकबेके भौंचक्की सी एनवानक्वो की भी ओर देखती रही. उसकी कुछ समझमें नहीं आ रहा था कि उसका बेटा इतने कुतर्क कहाँ से सीख गया है.

क्या इस सबके माने हैं कि तुम निधड़क होकर कुकृत्य करने लगो. याद रखो बेटे प्राकृतिक नियम कभी बदला नहीं करते. हवा अब भी बहती है, वर्षा अब भी होती है. मनुष्य पैदा होते हैं और मरते हैं, कम महत्व की बातें ही बदला करती हैं. यह कहना ठीक नहीं कि कुछ चीजें बदल गई हैं इसलिए तुम देवी देवताओं पर भरोसा नहीं करोगे. याद रखो अगर अजाला देवी को इसी तरह नाराज़ करते रहे तो तुम्हारा फिर जन्म नहीं होगा और तुम्हारी रूह भटकती रहेगी.

पर मैंने अजाला देवी को नाराज़ करने का क्या काम किया है' एनवानक्वो कुछ चिढ़कर बोला.

'अच्छा तुम यह जानना ही चाहते हो कि तुमने क्या कुकृत्य किए है' मां बोली, लो फिर सुनो. छः दिन पहले तुमने ओकफार के खेत पर जाकर खजूरों की पोटली चुराई थी. चार दिन पहले अजाला के जंगलों में जाकर तुमने दो पशुओं को मार कर बाजारों में बेच दिया था. कुछ दिनों से अपने चचा को पुलिस की, नौकरी में से निकलवाने के लिए तुम उसके खिलाफ झूठे सच्चे इल्ज़ाम नहीं गढ़ रहे हो. कुछ ही दिन पहले तुमने उस लड़की के साथ अभद्र आचरण नहीं किया था.

'ओह माँ ये सारी बातें तुम्हें कैसे मालूम हुई'. 'इससे क्या, तुम बताओ भेंट चढाओगे कि नहीं ?' —मां बोली.

एनवानक्वो ने जल्दी में उठते हुए कहा मैं अवश्य चढ़ाऊंगा मां ! वह सकपका गया था. उसकी समझ में आ रहा का. अजाला केवल लकड़ी की मूरत नहीं उसमें एक अदृश्य शक्ति छिपी है.

एनवानक्वो को जाते देखकर मां ने फिर कहा 'मेरे बेटे अजाला को ईश्वर ने बनाया है. वह हमारे निकट है इसलिए हम उसके माध्यम से ईश्वर की आराधना करते हैं. हम अजाला की नहीं, अजाला के माध्यम से ईश्वर की आराधना करते हैं. दिन पर दिन गुजरते चले गये. ऐसा लगने लगा कि अब एन्वानक्वो भेंट नहीं लाएगा और लाया तो तब तक समय निकल चुका होगा. मां ने सोचा

क्या अपने पुत्र को मौत के मुंह में से बचाने के लिए अपनी बकरी, मुर्गी और जमीकन्द चढ़ा देने चाहिये या उसे मर जाने देना चाहिए जिससे कि वह पापों से मुक्त होकर फिर जन्म ले सके . मा के लिए बहुत ही कठोर फैसला करने का वक्त आ रहा था . उसे अपने बेटे से बहुत स्नेह था, बड़े लाड प्यार से पालकर उसे बड़ा किया था पर उसके पिता की मृत्यु के बाद से वह काबू से बाहर हो गया था . एक बार तो मा ने ही उसे शाप दे दिया था . पर अब सवाल दूसरा ही था पापयुक्त जीवन और मृत्यु दो में से एक का चुनाव करना था .

फैसले के लिये मा ने अदृश्य शक्ति से आज्ञा लेना तय किया . तीन दिन और तीन रात तक लगातार उसने व्रत किया और इसके बाद मा ने फैसला किया लड़के को मरना ही होगा .

चौथे दिन एनवानक्वो एक मरी सी बकरा, छोटी सी मुर्गी तथा मात जमीकन्द लेकर आया . आज हार का दिन था, और दुपहरी भर वह ताड़ी के नशे में घुत्त रहा उसके दोस्तों ने कहा था कि भेंट ले जाने में जल्दी की क्या जरूरत है क्योंकि उसकी मा ही तो पुजारिन है .

'मा !' उसने मिट्टी के चबूतरे पर बैठते हुए कहा 'मैं वे चीजें ले आया हूं मा जिनके बारे में आपने कहा था' .

मगबेके कुछ नहीं बोली पर उसे टकटकी लगाकर देखती रही, मानो साप काटने के पहले शिकार पर अपनी नजर जमा रहा हो एनवानक्वो मां की इस मुद्रा से तिलमिला उठा वह फिर बोला

सुनती हो मा ! वे चीजें मैं ले आया हूं—क्या अब उनकी जरूरत नहीं रही, तुम मेरी तरफ इस तरह क्यों देख रही हो मा, मैंने और तो कोई अपराध नहीं किया बोलती क्यों नहीं हो मा ! मा बोलो तो सही

पर एनवानक्वो जिसे देख रहा था वह उसकी मा नहीं थी वह ता अजाला देवी की पुजारिन थी . मगबेके पत्थर की भांति कठोर हो चुकी थी उस पर चिल्लाहट और क्रन्दन का कोई असर नहीं पड़ता था उसके लिए तो उसका बेटा मर चुका था .

एनवानक्वो का धैर्य टूटता जा रहा था, वह घबरा गया और फिर चीख कर बोला 'मा ! तुम इस तरह मुझे क्यों घूर रही हो जैसे कि मैं कोई भूत हूं . यह ठीक है कि मुझे एक दिन की देर हो गई है पर मैं विवश था . बकरी खरीदने के लिए मेरे पास पैसा नहीं था . मुझे इतना काम था कि मैं बाजार जाने के लिए फुरसत ही नहीं निकाल सका . बोलो तो सही मेरी मा बोलो, मैं तुम्हारा बेटा हूं, इकलौता

वेटा जिसे तुम वड़ा लाड़ करती हो . देरी के लिए मैं क्षमा मांगता हूं मां, फिर ऐसा कभी नहीं होगा" .

पर धीरे-धीरे मगवेकेने मुंह और शरीर मोड़कर दीवार की ओर कर लिया तथा पीठ एनवानक्वो की ओर हो गई .

× × ×

एनवानक्वो तीन दिन वाद एक ताड़ के पेड़ से गिर पड़ा और मर गया . आश्चर्य की वात तो यह कि उसके पास नया रस्सा था पर फिर भी पेड़ पर चढ़ाई में उसने पुराने रस्से का इस्तेमाल किया . उसकी मृत्यु पर समूचा अवूका गांव दुख में डूव गया पर उसकी मां पर कोई असर नहीं हुआ ....

और इस तरह चार महीने वीत चुके थे . मगवेके निरन्तर वांट जोह रही थीं कोई उसे आकर वताये कि उसका फैसला ठीक था . ध्यान में डूवी हुई मगवेके उठी, दीपक वत्ती ठीक की और झोंपड़ी के पिछवाड़े में चली गई . इंतजार करते करते उसकी आंखे थक चुकी थी उसने थकान दूर करने के लिये आंखों पर पानी डाला और फिर वह झोंपड़ी में आई .

उसे यह देख कर आश्चर्य हुआ कि दरवाजे पर दो आदमी खड़े हैं-वोले .

'ओवी का वेटा मरणासन्न है, जरा चलकर देख लीजिए' . मगवेके चुपचाप उनके साथ चल दी .

गांव के वीच में एक वड़ा मकान था . उसके एक कमरे में मिट्टी के चबूतरे पर विछी चटाई पर वीमार वच्चा लेटा हुआ था . पास ही दो स्त्रियां खड़ी थीं जिनकी आंखों से आंसू टपक रहे थे .

मगवेके ने वच्चे को देखा और कहा 'क्या तुम लोगों ने यह मालूम कर लिया है कि पिछले जन्म में यह कौन था' ....

ओवी ने जवाव दिया 'नहीं ! अभी यह तीन महीने का तो है ही .'

यह तो तुम्हें एक महीने के वाद ही कर लेना चाहिये था . मृत व्यक्ति चाहता है उसको जल्दी ही पहचाना जाय .

मगवेके ने एक सफेद सुपारी मंगाई और वच्चे की ओर उसे करके मंत्रादि पढ़े . थोड़ी देर वाद ही छत पर मुर्गे ने वांग दी . मगवेके खुशी से उछल उठी 'एनवानक्वो लौट आया' 'एनवानक्वो लौट आया' चिल्लाती हुई वह अपने घर की ओर दौड़ गई . उधर रुग्ण वच्चा स्वस्थ होकर किलकने लगा था .

—अनुवादक : जगमोहनलाल माथुर

नेपाली कहानी

मेंहदी के फूल और पाइरिया की गंध

● सुश्री पारिजात

हल्की-हल्की बारिश में भीगी हुई सड़क में रोज रात को नौ बजे घर आया करता हूं. आज भी वही बात हुई मगर अपनी सड़क के मोड़ पर आकर मेरे पैर थमने लगे हैं. मन्दिर और छत में गिरता हुआ पानी दीख रहा है. सामने छोटा-सा बाजार है मगर इतना ही इस मोड़ का परिचय नहीं है मन्दिर है जहां गीत-भजन होते हैं और रात में खामोशी छा जाती है. वहीं पर एक गूंगी लड़की रात को सो जाया करती है वह यौवन में मधुमत्त है. जीवन में अपरिचित है पर किसी अन्धकार में नहीं डरती. उसके गीत गूंगे हैं तन-मन गूंगे हैं और शायद उसकी जवानी भी गूंगी है मुझे लगता है लेकिन वह कहां तक गूंगी है. मैं उसके दिल तक नहीं पहुंच सका हूं, इस मोड़ पर उसके गीत होते ही हैं, कभी ऐसा मौका नहीं आता कि, जब उसके गीत न सुनायी दें. मुझे भी इस मोड़ तक आना ही पड़ता है कभी ऐसा मौका न होता कि मैं न आऊं मेरे पैर इधर भटक ही जाते हैं

आज भी उसके इन सार्थक-निरर्थक गीतों को सुनता हुआ मैं अपने घर पहुंच गया हूं. सड़क की उस ओर से एक लड़का मन्दिर को जा रहा है. मेरी श्रीमती जी रसोईघर में इन्तजार में बैठी है. मैंने अपनी पसन्द से शादी की है वह भी मुझे उतना ही प्यार करती है. मेरे देर से घर पहुंचने पर वह शिकायतें नहीं सुनाती. शायद उसे भी लोग मजाक से गूंगी कहते हैं. वह छलकपट नहीं जानती. मैं कपड़े बदलकर रसोई में जाता हूं वह खुश होती है. उसके दिनभर के परिश्रम का निष्कर्ष—खुशी ! मैं बड़े स्वाद से साथ भोजन करता हूं - वह चौंकर बोलती है– "सुनिये तो, गूंगी रोयी". मिर्च के अचार से मेरी जीभ नहीं बल्कि नस-नस तक झनझना उठती है. मुझे खाने में कब स्वाद नहीं मिल रहा वह आंखें आश्चर्य से विस्फारित कर बोलती है—"क्यों रोती है बिचारी ? पुलिस ने मारा होगा.' मैंने उत्तर दिया—"क्यों मारेगी पुलिस ?" वह फिर कह उठी—"कभी-कभी सड़क पर ही गूंगी सो जाती है इसलिये."

इस बीच गूंगी की रुलाई फिर सुनायी पड़ी और आवाज सन्नाटे में फिर खो गयी. मैं सड़क के उस पार जाते हुए लड़के का मुंह देखने लगता हूं, टेरेलीन की उसकी सफेद कमीज और लाल टाई. मैं ऊब कर कह उठता हूं—मालूम पड़ गया होगा गूंगी को ! वह और भी आश्चर्य से पूछती है—"कैसा मालूम ?"

"तुम्हें पता नहीं ? वह टूरिस्ट गाइड लड़का अट्ठारह वर्ष का है और गंध दिखाता फिरता है ! अभी-अभी तो मन्दिर की तरफ जा रहा था !"

इसके बाद मैं चुप हो गया. जहां तक संभव है. मैं उस लड़के की निन्दा करना चाहता हूं मगर बहुत से शब्द ही नहीं मिलते. मेरा खाना खतम हो चला है मगर मुझे नहीं लग रहा कि मैंने खाना खा लिया है. हाथ धोने को उठता हुए मैं बड़बड़ाने लगता हूं—"इतना दुबला है कि इसकी गर्दन ही टूट जायेगी !" मुझको लगता है, मैं कितना हट्टा-कट्टा हूं ! इसी बीच मिर्च के आचार की जलन फिर मेरी नस में झनझना उठती है. मैं श्रीमतीजी की ओर देखने लगता हूं मगर वह मुझे नहीं देखती. बिस्तर में लेटने पर मेरी श्रीमती जी ने प्रश्न किया—! "आपने कहा कि उस गूंगी को आलस्य लगा होगा ?" मैं उसके गाल पर प्यार की हल्की चपत लगाते हुए अपने पास खींचकर कहता हूं—"तुम कितनी भोली हो !" हम लोग चार दीवारी के अन्दर लिपट कर सोये हैं मगर बाहर पानी पड़ रहा है. मैं सोचने लगता हूँ—वह गूंगी मन्दिर के बरामदे में अधिकार जमाये सोती होगी. पानी नहीं पड़ता तो मन्दिर की सीढ़ियों पर ही सो रही है. जब बहुत पानी पड़ने लगता है तो पास के छोटे बाजार में भी चली जाती है. अभी वह रो नहीं रही है. उस टूरिस्ट लड़के ने उसे मना लिया होगा. वह घिनौनी लड़की जो कभी नहीं नहाती उसके साथ…छी…छी…उसके पीले दांत और काले काले होठ…दाँतों को साफ न करने से उसे पाइरिया हो गयी होगी और कितनी दुर्गन्ध निकलती होगी ! क्या है उस गूंगी में ? सिवाय इसके कि वह एक औरत है…मगर वह औरत कहां है ? उसके शरीर से औरत के मांस की गंध आती है, बस इतना ही तो ! मैं, लेकिन, उससे अछूता हूं और अछूता ही रहना चाहता हूँ. पल में ही, मुझे लगता है. पाइरिया की वह भयानक दुर्गंध मेरे पास ही फैलने लगी है, मैं अपनी पत्नी के होठ देखने लगता हूं. मुझे अपनी पत्नी से घृणा होने लगती है. मुझको सभी स्त्रियों से घृणा होने लगती है. मैं अपनी पत्नी को पहचान रहा हूं मगर मेरी चेतना मुझको छलती है. मैं पत्नी की ओर पीठ करके सो जाता हूं.

सुबह मैं उनींदी आंखें लिये उठता हूं. रात की भावनाओं ने मुझे अब तक जकड़ रखा है. बार-बार मैं अपनी पत्नी को देखता हूं. वह असुन्दर लगती है. बार-बार उसके चमकीले दांत और भी चमकते दिखायी देते हैं. मुझे अपने आप पर हंसी आ जाती है. इस तरह एक साधारण-सी सुबह बिता कर मैं अपने दफ्तर की तरफ चल देता हूं. मन्दिर से थोड़ी दूर पर सिगरेट की दुकान के पास वह टूरिस्ट गाइड लड़का सिगरेट के कश छोड़ता हुआ खड़ा दीख पड़ता है. मुझे देख

वह हंसता है . जब हसता है तो उसके चेहरे पर सिकुड़न छा जाती है . गूंगी वहां पर नहीं है . इस समय वह शायद साव जी के यहां बर्तन माजने गयी होगी . मैं कुछ दूर जाकर वापस लौटता हू और उस लड़के से पूछने लगता हू—"भाई, आज का तुम्हारा क्या प्रोग्राम है ?" उसे लगा कि मेरा प्रश्न अ-स्वाभाविक है . मगर वह हंसकर कहता है—"जर्मन छोकरियों को गोदावरी ले जाना है ."

"हूं"—अब मैं स्वाभाविक हो जाता हू . सोचने लगता हू कि इस लड़के का काम केवल छोकरियों को घुमाना है . कितना आसान और मजेदार काम ! दिन भर यह लड़का छोकरियों की सगत मे रहता है और रात मे........मैं सहसा देखता हू कि वह लड़का भट गली से बाहर निकला है और मंदिर मे घुस गया है...... ऐसा लगता है कि उसकी निन्दा करने मे अब भी मेरा दिल नहीं भरा घिनौना पशु ! औरत को ऐसी ख्वाहिशवाले आदमी को तो सीना तानकर शादी कर लेनी चाहिए . मगर औरत को चाहने का मतलब शादी ही तो नहीं होता ? नहीं होता ? लगता है, पत्नी तो एक समस्या है मैं अपने प्रश्न का स्वयं ही ठीक-ठीक उत्तर नहीं ढूंढ़ पाता . जो भी हो छुट्टी लेकर आज मुझे घर आना पड़ेगा . शाम शाम को तो होटलों और दोस्तों की गप्पा मे यों ही समय नष्ट हो जाता है . खासकर इस मोड़ पर मैं अब रात मे नहीं आया करता यहां से सीधा घर पहुचता हू . क्या मिलता है उस टूरिस्ट छोकरे से ? अपना सिर दुखाने से क्या फायदा ? दिन मे तो अपने मन पर काबू रखकर घर लौट जाता हू

आज मन्दिर के सामने दस-बारह आदमियों की भीड़ है ताली बजाने के लिए दो-चार छोटे-छोटे बच्चे हैं . मैं भीड़ मे गूंगी को साफ देख रहा हू गगी ने अपने सिर के बालों मे बहुत से फूल खोंस रखे हैं......जवाकुसुम......ललाट पर बड़ी सी बिन्दी . वह कभी हसने और कभी रोने की और कभी हाथ नचाकर गाली देने की चेष्टाएं कर रही है . आज उसके लिए कोई खास दिन है शायद . 'कमल-पोखरी' का कपड़ा लपेटे हुई है वैसे, वह कपड़े रोज ही फेंक देती है और उसे कपड़े देना फिजूल है और दिन तो कपड़े वह घुटने तक ही पहनती है .

सच ही, उसकी पिडली और बाहों की थकान यहां दिन मे तो सबको डरा देती है . मैं सिगरेट खरीदने के बहाने दूकान पर खड़ा होता हूं . इसी बीच, पैर पटकती हुई वह भीड़ मे छटक कर मेरी ओर बढ़ती है . मैं थोड़ा डर सा जाता हूं, कहीं यह गूंगी मुझे बेइज्जत न कर दे ! मगर वह मुझे बेइज्जत करने तो नहीं आयी है !!

मैं मन के भीतर ही भीतर एक उपन्यास लिख सकता हूं . गूंगी दरख्तो के पीछे जहां इन्द्रधनुष लगता है, खो जाती है . मेहदी के बेल-बूटे बनी हुई हथेलियों मे

खाने की कुछ चीजें आ जाती है –स्टील की थाली में भुना हुआ चूड़ा . मेंहदी का रंग, लाल रंग के फूलों की सुगंध –ये सभी मिलकर मुझको विभिन्न वातावरण में खड़ा कर देते हैं . मैं इस वातावरण को अलग करना चाहता हूँ – विभाजित करना चाहता हूँ, मगर, अर्थहीन विभाजनों में तो नहीं . एक सत्य ! यथार्थ !! अपनी पत्नी को प्रेम और उस गूंगी को सिवाय दया के, और मैं क्या दे सकता हूँ ? अब मुझे क्यों भागना है पाइरिया की गंध से ?

एक शाम . पीली धूप में लेटा है काठमांडू शहर . रास्ते, मैदान सभी निस्पन्द हैं. कोई रंग नहीं . कोई नयापन नहीं. मेरे मन से लेकर आसमान तक सभी रंग-हीन हैं, खाली–खाली हैं . मुझे विरक्ति होती है . रोज ही कैसे संवार कर रखूं इन शामों को ? आज तो यह गूंगी भी क्यों गुमसुम बैठी हुई है ? क्या हुआ होगा उसे भी ? बीमार तो नहीं है ? फिर खोयी सी क्यों है ? शायद वह भी व्याकुल हो गयी होगी आज . वह भी इन शामों को सँवारती–सँवारती थक गयी- होगी . कलकी (नेपाल में लाल रंग का फूल विशेष) के पेड़ों पर कौओं का झुण्ड कांव कांव कर रहा है . मैं और व्याकुल हो उठता हूँ . गूंगी का वह खोयापन मुझे और भी दबोचता है . मैं अनुभव करता हूँ—विहाग–राग सुनते समय की—सी व्याकुलता, वैसी ही व्यथा, वैसी ही पीड़ा ! आज शाम को घर पर नहीं रहूँगा क्या करूँ ? कहाँ भाग जाऊँ ? ऐसा लगता है, ऐसा ही लगता है—आज की शाम . मै सोचता जा रहा हूँ . क्या गूंगी भी गुमसुम रहकर इसी तरह सोचती रहेगी ?

पंक्ति में खड़े हुए मकानों को देखकर वह भी कुछ सोचती होगी . इन्हीं मकानों के बाहर किसी कुमारी माँ ने फेंक दिया होगा इसके गूंगे अस्तित्व को ! गंदी और सड़ी हुई चीजें खाकर भी गूंगी अपनी उम्र से पहले ही एक फूली हुई बड़ी मूली जैसी हो गयी है . क्या वह भी ऐसे ही मकानों के सपने नहीं देखती होगी ? बेचारी सोचती होगी—मेरा तो घर नहीं है . पंक्ति में खड़े हुए इन ऊँचे–ऊँचे मकानों के प्रत्येक कमरे में कितने सारे लोग बरसात से भी अपने को बचाते होंगे और गर्मी से भी . बहुत सी बेटियां अपने माँ–बाप की सुरक्षा में और पत्नियां अपने पति की बाँहों में मसहरी के भीतर कितनी खुशी से रातें काट देती होंगी . मेरा भार तो मन्दिर की बलेंसी[1] भी थाम लेती है और सीढ़ियां भी. मुझे तो घर न होने से भी घर हो गया है . घर है क्या ? वही चार दीवारें, दो–तीन खिड़कियां, छिटकनी लगा हुआ दरवाजा–बस ! इतना ही तो है !! तब क्यों शान दिखाते हैं ये कोठेवाले, मकानों के लोग ? घर के भीतर अपने को बिल्कुल

[1]. [illegible] का [illegible] आसमान में पानी चुना है—ओलती .

सुरक्षित समझते होंगे परन्तु दो-चार ईंटों के ऊपर मिट्टी के ढेर ·········इसको घर कहते हैं. मगर चाहें तो मुरदे[१], भूत और चुड़ैलें घर के बरामदे-बरामदे में नाचें कूदें और चल दें ? भूत-पिशाच को कौन रोक सकता है ? ये दीवारें और दरवाजे न भी हों तो क्या, कभी तो रास्ते पर ही सोयी हूँ, मखमल पर भी सोयी हूँ. ये चार दीवारें न हों तो घर यही सड़क ही तो है. मगर नहीं, घर जैसा भी हो, आखिर, तो चाहिये ही. मेरा भी एक घर होता तो ये लोग रात को मुझे दुख नहीं दे सकते थे ! घर का एक फायदा तो है ही. आह ! इन चार दीवारों और खिड़कियों वाले दरवाजों का एक घर मेरा भी होता तो मैं भी जानती—इन हिप्पियों को कैसे सताते हैं. कुंडी लगा कर मैं मौज से सोती. भीतर भी तो वैसा ही होता ? नहीं, घर के भीतर मुझे लूटने वाले आते तो मेरी हथेली में कुछ रुपये तो रखते ही या दोनों शाम खाने को देते. सब तो ऐसा ही करते हैं ! अपनी औरतों को दिन में खाना देते हैं और रात में लूटते हैं ! दीवारों के भीतर कौन क्या देखेगा ! घर का यह दूसरा फायदा है. यू गी के नाते मैं अपने ही बचपन में कहाँ से कहाँ पहुंच जाता हूँ ! आप ही चौंक जाता हूँ और कहता हूँ—धत ! मैं भी कैसा मूर्ख ! वह यू गी क्या सोचती होगी ऐसी बातें ?

मैं अपनी विचार-धारा को दूसरी तरफ मोड़ देता हूँ और चल देता हूँ—नयी सड़क की ओर. नयी सड़क—काठमाण्डू की सबसे प्रधान सड़क. इस शाम को कहीं फेंक आता है—किसी तरह बिताता है. मैं भी किसी तरह शाम फेंक देता हूँ—गोरखापत्र[२] पढ़कर. शाम ढलती है और मैं सोचता हूँ—रात तो अपनी है. रास्ता पकड़ कर सीधे अपने घर लौटता हूँ. थोड़ी देर बारिश के बाद काठमाण्डू के आकाश में फिर बादल छंट जाते हैं. मैं लौटता हूँ उसी रास्ते, उसी मोड़ और उसी मंदिर से होकर.

रास्ता सुनसान है. इस शाम के साथ ही रात का एक हिस्सा भी कहीं बिता कर आ रहा हूँ. हवा सांय-सांय करके वेग से चलती है. कहीं से दो-तीन पत्ते आ कर गिरते हैं. रात ठंडी है और मेरे मन में गर्मी है, छटपटाहट है या किसी पीड़ा के बिना ही दर्द सो रह भीतर समा रहा है. कोई रोग नहीं है फिर भी मेरी नस-नस दुख रही है. लगता है, कैसा एक नक्शा है यह जीवन भी ! चलते-चलते परिकथा का जैसे कोई रहस्य द्वार खुल जाये तो कितना अच्छा होता; कोई अच्छी सी बात हो जाती तो कितना अच्छा होता ! फिर तो साथ बिना ही आदमी छोड़ दे अपने को न समझने के लिये. नहीं तो यह त्याग को

१. जिसका सिर कटा हुआ हो.
२. नेपाल का प्रमुख समाचार-पत्र.

प्रक्रिया, चाहे जीवन कितना ही महाशून्य क्यों न हो स्थिति और जीवन को गंभीरता से ले लेगी . जीवन को समझने के लिये यह निष्क्रिय सान्त्वना, जिसे मैं अपना रहा हूँ, मुझे पीछे धकेल देती है . मैं विवश हूँ . किसका अवरोध करूँ? मैं अपने सीने में कहीं कोई अभाव का निशान नहीं पाता हूँ . यह तो सम्पूर्ण है, समस्त है . फिर भी, यह सम्पूर्णता नहीं, अवश्य ही नहीं . हल्की सी बारिश होती है . मैं मंदिर के सामने हूँ . मगर, आज इस स्थान को गूंगी का अर्थहीन गीत रुला नहीं पाया है . मन्दिर की ठन्डी सीढ़ियों के आस–पास भी उसके रहने का इंतजाम नहीं है . हाँ, कहीं गयी होगी ! चल तो सकती है !!

मंदिर के उधर वही छोटी सी दूकान . सड़क के पार लैम्प–पोस्ट से आता हुआ एक टुकड़ा उजाला . उजाला दूकान के अंधेरे को भगाकर आप जल रहा है मानों इस लैम्प–पोस्ट को दूकान से जलन है . मैं उधर ही देखता हूँ मानों मुझे उधर देखना ही है . जैसे तन्द्रा में ही मैं उस दूकान के पास पहुँचता हूँ और सोचता हूँ . अपनी सीमा तोड़ कर कहाँ नहीं पहुँचूँ परन्तु यथार्थ में निरुद्देश्य में उसी छोटी सी दूकान के सामने पहुँचा होता हूँ . कोई भ्रम या आवेग मुझे रोक नहीं सका है, इसलिये तो मैं देखता हूँ, कैसे वह गूंगी रजस्वला की पहली रात काटने के लिये यहां तक आयी है और उसने मंदिर की सीढ़ियों पर बैठकर अर्थहीन गीत गाना छोड़ दिया है . वह यहां तक इसलिये आयी है कि कोई उसको न देखे और छू न दे . मैं साफ कह सकता हूँ कि कपड़े के एक छोटे से टुकड़े से वह अपने को ढ़कने का निष्फल प्रयत्न करती है क्योंकि उसकी नसें ढीली हैं , उसकी बांह तक की ब्लाउज इधर–उधर हो गयी है . एक प्रकार से वह स्पष्ट दिखायी दे रही है . यथार्थ को सपने से अलग करने के लिये मुझे बस ! वे मेंहदी रचीं काली, चौड़ी और भारी हथेलियां ही काफी हैं . एक सत्य ! मुझे गूंगी नंगी ही दिखायी दे रही है. परन्तु नही, यह सत्य तो बहुत ही बूढ़ा हो गया है . शायद मर भी गया है . हाँ, सत्य मरने का अर्थ यह नहीं कि सब असत्य प्रमाणित हो जाये . यह मैं जो देख रहा हूँ उसका जीवन के साथ एक जोड़ है . यह सब हमें चाहिये ही . इन्हें हमें भोगना है . मैं कहाँ पहुँचा हूँ ? एक बहुत भारी वेदना मेरी सांस दबोचने को है . उजाले में सोयी हुई उसको मैं देखता हूँ .

एक बार किसी अमरीकी पत्रिका में देखा था उस विश्व-सुन्दरी की बांहों में लिपटी प्रस्तर-मूर्ति को . हां, गूंगी ठीक उसी मूर्ति से मिलती है . वैसा ही मुँह, वैसी ही गर्दन, छाती, पिंडली–सब वैसी ही . गूँगी की वह मूर्ति क्रमशः व्याप्त होती जाती है. एक पत्थर के ऊपर दूसरा पत्थर ! गूँगी का सांस लेना भी गूंगा लगता है. यह भी औरत है . केवल गंध ही नहीं . सम्पूर्ण औरत . एक क्षण तक, बाहर मैदान से आती हुई रजनीगंधा की सुगंध मेरी पीठ को गुदगुदा देती है . गूंगी के होंठ

मुझे पक कर पुष्ट हो गए ताजे फल के गुच्छे-जैसे दिखायी देते है. गूंगी के प्रति मेरे मन में तृष्णा पैदा होती है. तुरन्त ही मैं गूंगी के समीप होता हूं. उसके मुंह के पास होता हुआ उसके ऊपर होता हूं. मैं बिल्कुल बेहोश नही हूं. मैं कल्पना करता हूं--पिकासो की 'दि रेप' शीर्षक तस्वीर में रंगता हुआ अपने को और गूंगी को. एक विवशता मुझे उस छोटी-सी झोपड़ी के भीतर भुलावे मे डाल देती है. और मैं, पंक्ति में खड़े हो रहे इन मकानों और काठमाडू के एक संसार को कही धकेल कर बेफिक्र और निस्संकोच हो जाता हूं।

--अनुवादक : प्रो दीनानाथ 'शरण', एम. ए.

बंगला-कहानी

मुन्नी की मेम साब

• जरासंध

डेढ़ गज लम्बी फर्दों पर फिर एक बार नजर घुमाकर 'अब कुछ सम्हाल लिया' लिख कर दस्तखत कर दिए. पिछले तीन दिनों से चार्ज आदान-प्रदान का यही काम चल रहा था. चार्ज दाता हैं—अभिज्ञ एवं सिनियर जेलर रायसाहब वनमाली सरकार और चार्ज गृहीता है—उनका यह सहकारी बाबू मलय चौधरी. शुरू से ही उन्होंने मुझे सावधान कर दिया था कि सब कुछ देख कर, सुन कर, मिला कर देख लेना. इसके बाद फिर मत कहना कि वह चीज नहीं मिली. अतः पिछले तीन दिनों से देख रहा था, सुन रहा था और मिला-मिला कर रख रहा था. कैदियों से लेकर राशन-पानी, डैरी के साँड और पोल्ट्री के अंडे-सब कुछ गिन-गिन कर नोट कर रहा था. प्रत्येक विभाग के अलग-अलग इन्चार्ज होते हैं एवं अपने-अपने विभाग का सम्पूर्ण दायित्व उन पर ही होता है. किन्तु फिर भी इस विशाल जेल-सम्पत्ति पर जेलर का ही सर्वोपरि दायित्व रहता है. अतः प्याज का स्टोक वजन किया गया, रसोई घर के बर्तन और गुसलखाने के मग गिने गए.

फर्दों की एक कापी अपनी पाकिट में रख कर रायसाहब अकस्मात् बोले—"ओ हो, असली चीज तो आपको दी ही नहीं." कह कर उन्होंने आवाज लगाई—"रतिकान्त!" आवाज सुन कर आफिस के पिछवाड़े से निकलकर आई एक कृष्ण-मूर्ति-छाया-मूर्ति भी कहा जा सकता है. हड्डियों की फ्रेम पर चमड़ी का आवरण चढ़ाने के लिए थोड़ा-सा मांस भी लगाना जरूरी है, सम्भवतः विधाता रतिकान्त को गढ़ते समय इस तथ्य को भूल गया था. किन्तु माल की अभावपूर्ति कर दी थी उन्होंने, उसकी पीठ पर एक बड़ा-सा कूबड़ लगा कर. झुकी हुई देह को थोड़ी और झुका कर सलाम किया रतिकान्त ने. रायसाहब बोले—'यह आपका स्थान बेयारा, बॉय, वाहन, सब कुछ है. टेबुल पोंछ देगा, फाइलें सम्हाल कर रख देगा और भी सारे छोटे-मोटे काम कर देगा. काम का आदमी है, पर बीच-बीच में कुछ अधिक काम का हो जाता है. जिस चिट्ठी को आप पोस्ट करने दिए देंगे, उसे यह आलमारी में बन्द करके रख देगा और नीली स्याही की दवात में लाल स्याही डाल देगा."

स्वयं की प्रशंसा सुनकर रतिकान्त के चेहरे पर लज्जापूर्ण मुस्कराहट फैल गई. मैंने कहा—"तुम्हारा नाम तो बड़ा अच्छा है."

"यह तो सब चोरों का अड्डा हो रहा है ." कहकर टेढ़ी नज़र से उसने रतिकान्त की ओर देखा .

रायसाहब बोले—"तुमने क्या किया था ?"

—हुज़ूर, मालिक ने तनख्वाह नहीं दी थी, इसलिए मैं उसकी हाथ–घड़ी लेकर भाग गया था ."

"तो तुम क्या हो ? चोर नहीं हो क्या ?"

हुज़ूर चोर हो सकता हूँ, पर गाय चुरानेवाला तो नहीं हूँ ."

रायसाहब ने उसकी प्रार्थना मंजूर नहीं की थी . यद्यपि वे जानते थे कि शिकायत साधारण नहीं है तथा इसके साथ जनमत का समर्थन भी है , किन्तु इसके कुछ दिन बाद ही रतिकान्त ने प्रार्थना की—"हुज़ूर, मुझे किसी दूसरी जेल में भिजवा दीजिए ." बेचारे की हालत पर विचार करके रायसाहब ने उसे जेलर साहब के विशेष बेयरे का पद देकर दफ्तर में बुला लिया था .

●————————

चार्ज सम्हालने के तीन–चार दिन बाद की बात है आफिस में बैठा था कि अकस्मात पैरों पर शीतल–स्पर्श पाकर चमक गया . कहीं साँप तो नहीं है ? किन्तु टेबुल के नीचे से आवाज आई—"मैं हूँ हुज़ूर, रतिकान्त ."

"यहाँ क्या कर रहे हो ?"

"पद सेवा कर रहा हूँ, हुज़ूर . उस हुज़ूर के रोज करता था ."

"रहने दो, इस हुज़ूर के नहीं करनी होगी . बाहर निकलो ."

●————————

कुछ दिन पहले ही रतिकान्त ने अपनी सजा की आधी अवधि समाप्त की है . बीच–बीच में वह आकर कहता—"हुज़ूर, 'मेट' बनने की योग्यता प्राप्त कर चुका हूँ . अब मुझे 'मेट' बना दीजिए ."

कैदियों के जीवन में 'मेट' का पद लाभ करना सौभाग्य की बात है. मैंने पूछा—"मेट बनना चाहते हो ?"

रतिकान्त ने सिर हिलाकर कहा—"हाँ."

—"तुम्हारा जैसा चेहरा है ! कैदी तुम्हारी बात बिल्कुल नहीं मानेंगे "

—"कौन नहीं मानेगा, हुज़ूर ?" रतिकान्त उत्तेजित हो उठा.

रतिकान्त को मेट के पद पर प्रोमोट कर दिया गया. डिप्टी जेलर विनयबाबू एक दिन बोले—"आपके रतिकान्त का कूबड़ शायद अब नहीं रहा, सर.".

सुन कर रतिकान्त की मुस्कराहट कानों तक फैल गई . फिर विगलित-कंठ से बोला—"जी ! मेरा यह नाम मेरे गुरुदेव का दिया हुआ है . पहले मेरा नाम भजहरि था ."

उसके गुरुदेव के रस-ज्ञान की तारीफ की, फिर कहा—"जेल में कैसे आए ?"

—"३७९ के कारण, और क्या होगा !" उत्तर दिया रायसाहब ने . रतिकान्त ने सिर झुका लिया . मैंने पूछा—"क्या चुराया था ?"

मृदु कण्ठ से कुण्ठित उत्तर सुनाई दिया—"गाय ."

जेलवासियों का भी अपना एक अलग समाज होता है . उसके भी विभिन्न स्तर होते हैं . स्तर भेद का मापदण्ड होता है उनके अपराध का महत्व एवं गुरुत्व . खूनी, डाकू, बलात्कारी, ठंडा प्रभृति उच्च श्रेणी के माने जाते हैं . चोरों का स्तर इससे बहुत नीचे का होता है . किन्तु सबसे नीचे जिनका नाम आता है, वे होते हैं गाय चोरी करने वाले . चोर होते हुए भी ये होते हैं चोर जाति का कलंक . स्वजाति की महफिल में भी इनका हुक्का-पानी बन्द रहता है. इसीलिए जेल में आकर ये लोग चुपचाप रहते हैं . मेरे एक सहकर्मी थे , हाजिरी के समय वे प्रत्येक कैदी से पूछते—"क्या किया था ?" जिनका अपराध चोरी नहीं होता, वे सगर्व उत्तर देते—खून, डकैती अथवा छोकरी को भगा लाया था . चोर कहते—रुपए चुराए थे, तिजोरी तोड़ी थी, सेंद लगाई थी . किन्तु ३७९ के कैदी—वे चुप रहते . किन्तु मेरे सहकर्मी बिना पूछे नहीं रहते . अतः बाध्य होकर वे कहते—"हुजूर, गाय की चोरी ." सुन कर मेरे सहकर्मी हो-हो कर हँसते .

किन्तु मैंने देखा, रतिकान्त एक विरल व्यतिक्रम है इस नियम का . वह तो बल्कि दूसरे कैदियों से कहता—"तुम लोगों से तो हमारा काम अच्छा है . इसमें झमेला भी नहीं है . सेंद नहीं लगानी पड़ती, ताले तोड़ने नहीं पड़ते, घर में घुस कर जान हथेली पर रख कर इष्ट-देवी का स्मरण करना नहीं पड़ता . सीधे गाय-घर में जाकर रस्सी खोलो और ले चलो . किसी तरह रात कट जाने के बाद फिर भला तुम्हें कौन पकड़ सकता है ? फिर भी मैं कैसे पकड़ा गया, पूछना चाहते हो ? वह सब तकदीर की बात है . शास्त्र में लिखा है—दस दिन चोर के एक दिन पहरेदार का ."

किन्तु इन्हीं सब बातों के कारण रतिकान्त को कोई भी कैदी अपने पास फटकने नहीं देता . एक बार का किस्सा है . रायसाहब दफ्तर में बैठे-बैठे फाइलों में सर खपा रहे थे कि एक कैदी ने आकर सलाम ठोकी, कहा—"नालिश है. हुजूर ."

"क्या हुआ ?"

"सर, मुझे तेरह नम्बर कमरे से किसी दूसरे कमरे में ट्रान्सफर कर दीजिए ."

"क्यों ?"

"यह तो सर चोरों का अड्डा हो रहा है ." कहकर टेढ़ी नजर से उसने रतिकान्त की ओर देखा .

रायसाहब बोले—"तुमने क्या किया था ?"

—"हुजूर, मालिक ने तनख्वाह नहीं दी थी, इसलिए मैं उसकी हाथ-घड़ी लेकर भाग गया था ."

"तो तुम क्या हो ? चोर नहीं हो क्या ?"

हुजूर चोर हो सकता हूँ, पर गाय चुरानेवाला तो नहीं हूँ ."

रायसाहब ने उसकी प्रार्थना मंजूर नहीं की थी . यद्यपि वे जानते थे कि शिकायत साधारण नहीं है तथा इसके साथ जनमत का समर्थन भी है , किन्तु इसके कुछ दिन बाद ही रतिकान्त ने प्रार्थना की—"हुजूर, मुझे किसी दूसरी जेल में भिजवा दीजिए ." बेचारे की हालत पर विचार करके रायसाहब ने उसे जेलर साहब के विशेष बेयरे का पद देकर दफ्तर में बुला लिया था .

●————————

चार्ज सम्हालने के तीन-चार दिन बाद की बात है आफिस में बैठा था कि अकस्मात पैरों पर शीतल-स्पर्श पाकर चमक गया . कहीं साँप तो नहीं है ? किन्तु टेबुल के नीचे से आवाज आई—"मैं हूँ हुजूर, रतिकान्त ."

"यहाँ क्या कर रहे हो ?"

"पद सेवा कर रहा हूँ, हुजूर . उस हुजूर के रोज करता था ."

"रहने दो, इस हुजूर के नहीं करनी होगी . बाहर निकलो ."

●————————

कुछ दिन पहले ही रतिकान्त ने अपनी सजा की आधी अवधि समाप्त की है . बीच-बीच में वह आकर कहता—"हुजूर, 'मेट' बनने की योग्यता प्राप्त कर चुका हूँ . अब मुझे 'मेट' बना दीजिए ."

कैदियों के जीवन में 'मेट' का पद लाभ करना सौभाग्य की बात है. मैंने पूछा—"मेट बनना चाहते हो ?"

रतिकान्त ने सिर हिलाकर कहा—"हाँ."

—"तुम्हारा जैसा चेहरा है ! कैदी तुम्हारी बात बिलकुल नहीं मानेंगे."

—"कौन नहीं मानेगा, हुजूर ?" रतिकान्त उत्तेजित हो उठा.

रतिकान्त को मेट के पद पर प्रोमोट कर दिया गया. डिप्टी जेलर विनयबाबू एक दिन बोले—"आपके रतिकान्त का रुबाब शायद अब नहीं रहा, सर."-

"क्या मतलब ?"

"मेट बनने के बाद से ही वह तनकर सीधा होकर चलने की कोशिश कर रहा है,"

मैंने भी लक्ष्य किया था. देखा, बेल्ट कमर में ढ़ीला रहता है इसलिए कमर में गमछा बांध कर, उस पर पेंट पहन कर रतिकान्त बेल्ट लगाता है· प्रति दिन पालिश करने के कारण उसका पीतल का तकमा चमकता रहता है.

●————————

मेरे क्वार्टर के सामने एक बगीचा है. उसकी रखवाली तथा उसे उन्नत करने का भार भी मैंने रतिकान्त को ही दिया था क्योंकि सिनियरिटी के हिसाब से जेलखाने से बाहर जा सकने वाले मेटों में से रतिकान्त सर्वाधिक सिनियर था. मेट का चेहरा देखकर मेरी पत्नी तो हंसती-हसती जैसे पागल ही हो गई थी. बोली थी––"इस घी में तले हुए कुबड़े से काम नहीं चलेगा." मैंने प्रत्युत्तर में कहा था–"रस में डुबा हुग्रा कुबड़ा जब तक नहीं मिलता है तब तक घी में तले हुए से ही किसी तरह काम चलाश्रो."

पहले ही दिन रतिकान्त कुदाली, खुरपी ग्रौर साबल लेकर बगीचे की उन्नति करने के महान कार्य में जुट गया. किन्तु उसकी कुदाली का नाच देखने के लिए राह चलते चलते हुए लोग इकठ्टे होने लगे और देखते ही देखते थोड़ी देर में वहां ग्रच्छी-खासी भीड़ इकट्ठी हो गई. ग्रतः बाध्य होकर रतिकान्त को बगीचे की निगरानी ग्रौर उन्नति साधन के महान कार्य से निराश करना पड़ा. मैंने पत्नी को बुलाकर कहा–"बगीचे का काम इसके बश का नहीं है. घर का जो कुछ काम हो करवा लिया करो."

पत्नी श्लेपमिश्रित भाव से बोली––"उसको बरामदे में बिठलादो ताकि राह चलते ग्रादमियों को बैठा-बैठा गिनता रहे, मेरे पास उसके लायक कोई काम नहीं है."

ग्रतः बाध्य होकर रतिकान्त को बरामदे का सहारा ही लेना पड़ा ग्रौर इसी मौके का फायदा उठा कर मेरी सात वर्षीया बेटी मंजु उस पर अधिकार जमा बैठी. मां की दुनियां में बेकार का ग्रादमी होते हुए भी बेटी की दुनियाँ में रतिकान्त विभिन्न कार्य-ग्रकार्य में व्यस्त रहने लगा.

महीने भर बाद एक योग्य मेट मिल जाने के कारण रतिकान्त को फिर दफ्तर के बेयरे का काम सम्हालना पड़ा. किन्तु सम्हाल नहीं पाया. दफ्तर के उसी पुराने [illegible] में एक स्टुल पर ग्राकर बैठा, स्वयं को पुरानी ड्यूटी से बांधने का प्रयत्न भी

किया. किन्तु न जाने कहां कोई योगसूत्र टूट गया था, इसलिए पग-पग पर वह गलती करने लगा. दफ्तर के काम में लापरवाही करने लगा. टेबुल कभी पोछता, कभी नही, सुराही खाली पडी रहती. एक दिन बोला—"मेरी तबियत ठीक नहीं है." मैंने अस्पताल की पर्ची उसे दी और अस्पताल भेज दिया. किन्तु वहां से भी दो दिन बाद लौट आया, बोला—"अच्छा नही लगता." डाक्टर को कह कर उसके लिए थोड़े दूध का इन्तजाम करा दिया. किन्तु बाद में मुझे मालूम हुआ कि दूध पीना भी वह कभी-कभी भूल जाता है.

एक दिन देखा, मेरे दफ्तर मे चुपचाप खडा है .

"क्या चाहते हो ?"

" एक चिट्ठी लिखनी है हुजूर. लडकी की कोई खबर नही है."

रतिकान्त के परिवार का झमेला नही है, अब तक मैं यही समझता था. आज पहली बार मालूम हुआ कि उसके एक लड़की है—सात-आठ वर्ष की. अपने मामा के घर रहती है. उसकी फाइल खोल कर देखी—चिट्ठी पत्री का आदान-प्रदान कभी नहीं हुआ था. पूछा—"वे लोग तुम्हें तुम्हारी लडकी की खबर नहीं भेजते?"

"कहाँ भेजते है ?"

"तुम भी कभी पत्र नही लिखते ?"

उसने कोई जवाब नही दिया. मैंने एक पर्ची लिख कर उसे दे दी—चिट्ठी लिखने का अनुमति-पत्र !

इसके पन्द्रह दिन बाद ही रतिकान्त की छुट्टी का दिन आ गया .

उस दिन दफ्तर से घर लौट कर सुना, मंजु की नाचने वाली मेम गायब है . लड़की रो-रो कर घर को सिर पर उठा रही है और उसकी मा जिस तरह पैर पटक-पटक कर चल रही है, मुझे लगा कि यह घर किसी भी क्षण हमारे सर पर गिर सकता है . सुन कर मेरा मन भी खराब हो गया . अच्छा खिलौना था . एक छोटी-सी चेयर पर एक प्यारी-सी मेम थी, चाबी भरते ही वह नाचने लगती और उसके साथ-साथ ही शिशु-दर्शक का सम्पूर्ण हृदय नाचने लगता . मंजु का दुःख जो कितना तीव्र है, मैंने अनुमान करने की कोशिश की . घर मे कैदियों का आना-जाना लगा रहता है . अतः साधारण नियमानुसार सर्वप्रथम सन्देह उन्हीं लोगों पर किया जाता है . बड़े जमादार ने सबों की भरपेट पिटाई की किन्तु मेम साहब का उद्धार नही किया जा सका . मंजु की मां बोलीं—"यह जरूर तुम्हारे उस बुड्ढे का काम है ."

मैंने प्रतिवाद के स्वर में कहा—"यह कैसे हो सकता है ? वह तो बारह दिनों से घर पर आया ही नही ."

"उसने जरूर उस खिलौने को पहले ही पार कर दिया था . इतने दिनों मे वो

तुम्हारी बेटी को उस खिलौने की याद ही नहीं आई . आज हठात् मेम साहब की याद आई है तो रोने लगी है ." कह कर पत्नी ने मंजु को धमकी दी और इसके फलस्वरूप मंजु का रोना तीव्र गति से हो गया . फिर उसने रूक कर कहा—
"नहीं . कुबड़ा मेट बहुत अच्छा है . वह कभी मेरी मेम को नहीं लेगा ."
अन्त में संन्देह के कारण दो कैदी और वर्तमान मेट को वापस दूसरे काम पर लगा दिया'.

निश्चित तारीख को सुबह आठ बजे रतिकान्त खलास हो गया . उसको जाते समय एक दिन की खुशकी के छः आने तथा अच्छा काम करने के पुरस्कार-स्वरूप दो रुपये दिए गये . जाते समय मेरी नजर उसके पेटेन्ट प्रणाम और कपड़े-लत्तों की एक पोटली पर पड़ी .

उस समय दिन के करीब दस बजे होंगे , दफ्तर में काम की भीड़ थी . दम मारने की भी फुर्सत नहीं थी . अचानक गेट के पास शोर हुआ . मेरे नये चपरासी ने आकर सूचना दी—"पुलिस रतिकांत को पकड़ कर लाई है ."

—"क्यों ?"

—"उसकी पोटली से चोरी का माल बरामद हुआ है ."

बाहर आकर देखा, रतिकान्त मुँह लटकाये खड़ा है और एक पहलवान सिपाही ने उसका हाथ पकड़ रखा है . जमादार के हाथ में खिलौना है. मुझे देख कर गर्वीली चाल से चल कर मेरे पास आकर खिलौने को मेरी ओर बढ़ाते हुए बोला—"उसकी गठड़ी से निकला—मुन्नी का मेम साहब ."

पूरी घटना सुनी . गेट से निकल कर रतिकान्त जब रास्ते की ओर न जाकर मेरे बगीचे की ओर चला,तभी सिपाही को संदेह हो गया था . सिपाही ने उसका पीछा किया. बगीचे में जाकर एक पेड़ के नीचे से मिट्टी हटा कर ज्योंही रतिकान्त ने इस खिलौने को अपनी गंठड़ी में रखा, सिपाही ने झटपट उसे रंगे हाथ पकड़ लिया .

मेरे सहकारी विनयबाबू बोले—"मैंने आपको पहले ही कह दिया था कि सर इसकी कूबड़ में शैतान का खजाना भरा है . अब इसको अच्छा-खासा पाठ पढ़ाना होगा ." मेरे आस-पास खड़े अन्य व्यक्तियों की राय भी यही है, मुझे महसूस हुआ सब प्रतीक्षा सिर्फ मेरे हुक्म की थी . हठात् भीड़ में चांचल्य की सृष्टि हुई . भीड़ को हटा कर मेरी बेटी मंजु मेरे पास आई . उसने एक बार चारों ओर नज़र घुमाई, फिर जमादार के हाथ से मेम साहब को लेकर रतिकान्त के हाथ में देकर बोली—"इसे मुन्नि को देना और कहना, मंजु ने भेजी है . समझ गए ?" उसके बाद किसी भी प्रकार के प्रत्युत्तर की प्रतीक्षा किये बिना ही वह वापस भीड़ को चीर कर चली गई . निर्विकार खड़े रतिकान्त की आंखों से आंसुओं की धारा निकल पड़ी .

—अनु० : डॉ० श्री गोपाल माहेश्वरी 'प्रताप'

जल-अप्सरा

● लक्ष्मीनाथ बेजबरुवा

लोग इसे कहते रुपही, अर्थात् रूपसी—सुन्दरी. यह है एक छोटी नदी, गहरी. किन्तु सूखे मौसम में यह एक पतली धार रह जाती. पानी शीशे-सा चमकने लगता. बरसात में पुन मटमैली हो जाती. शरद ऋतु की रुपही हो उठती लम्बी लजीली-शर्मीली. ग्रीष्मान्त में यह पुन तटों तक उमड़ आती और निर्जन में नाचती—गरजती बहती रहती

रुपही के एक सुनसान तट पर गूलर का पेड़ था. इसके नीचे प्रत्येक सांझ-सवेरे एक कन्या बैठी मिलती. कन्या की आंखें धार के बीच भवर पर टिकी रहती. मन में यह रुपही का मुंह था. क्योंकि घास, उखड़ी हुई लकड़ी, नरकुल जो कुछ भी बह कर आता, नदी के गर्भ में समा जाता

नित्य ही कन्या नरकुल एकत्र करती, एक-एक कर भवर में फेंकती और व्यग्र नेत्रों से देखती कि प्रत्येक नरकुल पहले धीरे-धीरे फिर तेजी से चक्कर लगाता हुआ खड़ा हो जाता और फिर सिर के बल भवर में गोता लगा जाता. लड़की रुपही से बातें करती हुई कुछ ऐसी विचित्र पंक्तियां गाती—

> तुम सुन्दर हो मैं भी सुन्दर,
> दोनों बने और भी सुन्दर ।
> नरकुल भी मैं नाव खे रही,
> बीच धार में डूब गयी, वह ।

१६ साल की लड़की को ऐसे बचकाने खेलों में क्या रस मिलता था, यह केवल वह जानती थी या ईश्वर ही जानता था.

समय का उसके साथ मेल नहीं हुआ. जैसे वह पेड़ के नीचे बैठी समय का अपव्यय करती रहती, समय वैसा नहीं कर सका. अतएव वह उसे पीछे छोड़ आगे निकल गया. समयानुसार उसका वर और विवाह-दिवस उपस्थित हुए. वर दो बीसों दो वर्ष का लड़का था—सुन्दर प्रतिष्ठित और कुलीन. लड़की के पिता-माता ने स्वीकृति दे दी और विवाह निश्चित हो गया. लड़का और लड़की भी मिले और उन्होंने बातें कीं. विवाह के लिए केवल एक सप्ताह रह गया. पर भी कन्या अपने भावी वर की अपेक्षा रुपही को लेकर अधिक भूली रहती. उसके मन में कोई विचार आकर उसे परेशान नहीं करता. पहले की तरह वह दिन के अधिक

भाग में नदी-तट पर ही बैठी रहती. वर उसके ढंग देखकर दुःखी होता.

एक शाम नदी-तट से लौट कर उसे ज्ञात हुआ कि वर उससे विवाह न कर दूर चला जाएगा. यह समाचार उसे चुभ गया. उसने सोचा, वह इसी समय उसके पास दौड़ी जाएगी और उससे न जाने की प्रार्थना करेगी. किन्तु उससे अपने से पूछा, थोड़ा सा भी लज्जा-बोध होते हुए वह ऐसा कैसे कर सकेगी. चिंताओं ने उसकी नींद छीन ली. बाहर स्वच्छ चाँदनी छिटकी थी. अपना बिछौना छोड़ वह छिप कर नदी-तट की ओर चल पड़ी. वहां पहुंची ही थी कि एक क्षण में उसकी चिंताएँ रूपही में समा गयीं. पहले की तरह उसने नरकुल एकत्र किये और उन्हें एक-एक कर भंवर में फेंकने लगी.

तब अकस्मात् उसने अपनी आंखों पर पीछे से दो गरम हाथ महसूस किये. उसने अपने को छुड़ा लिया और घूम कर देखा—यह उसका वर था.

दोनों जोर से खिलखिला पड़े. नदी के उस पार प्रतिध्वनि भी उनके हर्ष में सम्मिलित हुई यहां तक कि गूलर के पेड़ पर बैठा उलूक दम्पति भी हर्ष संवरण न कर सका और जोर से हूक उठा.

जो थोड़े से नरकुल उसके हाथ में रह गये थे, उन्हें भी उसने एक साथ ही भंवर में फेंक दिया. उसने तीन बार ताली बजायी.

'तुमने यह क्या किया ?'—वर ने पूछा.

'सिर्फ एक लड़की अभी-अभी उस भंवर में डूब गयी. किन्तु मैं तो एक चिड़िया हूँ. आओ और मुझे पिंजरे में बन्द कर दो. ●

—अनु० डॉ० रमानाथ त्रिपाठी

समाधान

• वसन्तकुमारी पट्टनायक

दिन बीत गया. एक-एक कर सभी चिड़िया दल बाध कर किचिर-मिचिर करती हुई लौट रही है. अधेरा होने के पहले ही उन्हे अपना-अपना आश्रय खोज लेना होगा. बगले के बरामदे में अकेली बैठ-बैठी एमिली उसी तरह रास्ता देख रही है—इतना समय हो गया—कहा गया वह ? भूख नही प्यास नही ''सवेरे से निकला है, साझ हो गयी. न, इस बार इसे उचित शासन की आवश्यकता है, कोई दड न देने से यह एकदम मुह लाल हो गया है''' दुष्ट'''प्यार का मूल्य नहीं समझता'' ''वह निर्बोध है—क्रोध मिश्रित अभिमान से एमिली का मुख लाल दिखायी देने लगा.

नॉटी. एमिली के लिए प्राण से भी बढ़ कर है यह पिल्ला—यह बात सभी जानते हैं. पहले जिस दिन मि० राबर्ट ब्राउन उडीसा के इस पहाड़ी अचल मे आये, उस दिन उनके साथ केवल एमिली ब्राउन थी.दीर्घ साढ़े छै फुट ऊँचे राबर्ट साहब-बलिष्ठ गठन, लाल मुंह. गभीर चेहरा. और उनकी बगल मे हाथ मे हाथ बाधे समान गति से पैर मिला कर चल रही थी एमिली ब्राउन.

देशी लोग एव देशी जलवायु के मध्य जीवन-यापन पहले इस साहब-दंपत्ति को अवश्य ही कुछ असुविधाजनक प्रतीत हुआ था. राबर्ट साहब ने आफिस के काम मे अपने को अति शीघ्र व्यस्त कर लिया; किन्तु एमिली का समय कैसे कटे ? यहां उनकी भाषा समझने वाले लोगों की सख्या कम है. और जो समझते हैं वे सभी दिन के समय आफिस चले जाते है. इधर घर मे कोई बच्चे-अच्चे नही कि जिनके पीछे कुछ समय देकर एमिली निःसग क्षणो को भूल सके. दिन के समय उन्हे एक-एक पल बिताना कठिन होता.

उसी समय उनकी भेंट हुई इस आवारा देशी कुत्ते नॉटी के साथ. दो मास का गुल गुला पिल्ला''काली काली आँखों से मुटुर मुटुर उनकी ओर देख रहा था. उसकी आँखो की चितवन में न जाने क्या था, कि एमिली ने उसे पास बुलाया—गोद मे खीच लिया. इसके पश्चात् धीरे-धीरे उनके अतर का समस्त अवसाद मिट गया. पत्नीभक्त राबर्ट साहब से उन्होंने जो नहीं पाया, वह सब क्या नॉटी से पाया ?—यह प्रश्न आज भी उनके मन मे क्षण-प्रतिक्षण उठता है, वे नॉटी को क्यों इतना प्यार करती हैं ? हो सकता है नॉटी अत्यन्त उन्हें प्यार करता हो'''

अथवा इसका सम्पूर्ण विपरीत हो सकता है—उसे पाकर उनके हृदय को आघात देने वाले रुद्ध मातृत्व का द्वार अकस्मात् खुल गया.

वे नॉटी को बांध कर न रख पातीं. बांधने पर वह कूँ कूँ कर मुक्त होने के लिए अनुरोध करता. और-खुला रहने पर भी वह सभी समय घर में रहने के लिए राजी नहीं होता. एमिली के समस्त स्नेह-आदर को पीछे फेंक कर झट बाहर भाग जाता. दूसरों के घर में घुस कर जो पाता छिप कर खा जाता. फलस्वरूप उन लोगों के घरों से मार खा कर अनुनय-विनय के लिए लौट आता एमिली के पास. दोष करता किसी के पास और आकर क्षमा माँगता एमिली से. नॉटी का मुँह देख कर एमिली सब समझ जाती. उनके मन पर आघात लगता—किंतु आज्ञाहीन नॉटी को अपने प्राण की व्यथा कैसे समझाए ?

जिस दिन नॉटी को घर लौटने में देर हो जाती, एमिली घर-घर बुलाती हुई खोज करती. किसी दिन मार खाती हुई अवस्था में पकड़ा जाता, किसी दिन किसी के घर में बांध लिया जाता. नॉटी को देखकर उनके मन में कष्ट होता शायद खूब अधिक कष्ट होता—तथापि वे सब सह लेती.

जिस समय पड़ोस के बाबूलोग घर में न होते, एमिली को चिढ़ाने के लिए बाबुओं के नौकरों को सुविधा मिल जाती . वे जानते कि नॉटी को कष्ट देने से एमिली को कष्ट होगा. उसे मार लगाने से यह मार एमिली की देह पर पड़ेगी. इसलिए उन्होंने जितनी भी गालियां एमिली से सुनी होतीं, सुविधा मिलने पर मूल-सूद सहित उनका शोध कर दिया जाता. नॉटी को किसी के घर में प्रवेश करता देखते ही उसका रास्ता बन्द कर जी भर कर पीटने के लिए वे चल पड़ते. इधर वह भी जानता कि उसका चीत्कार सुनकर एमिली निश्चय ही दौड़ी आएगी. अतएव उसे छूने मात्र से वह ऐसी चीत्कार छोड़ता कि अंत में एमिली आकर घटनास्थल पहुंच जाती. बिजली की चमक के साथ कड़क ध्वनि के समान ही जहां नॉटी को मार पड़ती एमिली का स्वर सुनाई पड़ता. वे कहतीं—"मनुष्य ऐसा निर्दय कैसे हो जाता है ?...पशुओं में तुम लोगों की अपेक्षा अधिक दया माया है... जरा सा खा लेने से इतनी निष्ठुरता से मार रहे हो...तुम लोगों को यदि कोई इस तरह मारे, तो तुम लोग सह सकोगे ?" इस तरह सब प्रकार की बातें कह कर नॉटी को छुड़ा लातीं. छूट जाने पर मालकिन का पक्ष पाकर उसका साहस बढ़ जाता और उनकी टांगों के पास खड़ा होकर नौकरों की ओर देखता हुआ खूब जोर से भूंकने लगता,

इस नॉटी को लेकर उन्हें कितनी चिंता है. एक तो आज्ञाहीन उस पर दुष्ट . इसका क्या किया जाय ? कहीं जाने पर साथ ले जाए बिना नहीं बनता—

लौटकर देखेंगी कि उनका गाउन, न मिलने पर मोजा अथवा जुता, कुछ न मिलने पर उनका रूमाल दांत में चीर फाड़कर टुकड़े-टुकड़े कर रख देगा. घर के भीतर बन्द कर देने पर भी निस्तार नहीं—कुछ न मिलने पर मेज-कुर्सी की टांगों को मुंह में भर दांतों से काट कर रख देगा. इसके अत्याचार से सभी चीजों को रखाते रखाते वे परेशान हो गयी थी.

एमिली रह-रह कर हाथ घड़ी देख रही है—ठीक छः बजे यदि न लौटा तो वे स्वयं जाएगी. इसी समय हवा से अकस्मात नाटी की कातरध्वनि तिरती आ पहुंची. एमिली चौंक उठी. तब कान लगा कर भली प्रकार सुनने की चेष्टा की—हूं यह तो उसी का स्वर है... कूं कूं स्वर से जैसे कोई किसी से विनती कर रहा है. एमिली क्या अब और बैठी रह सकती. आंधी के वेग से रास्ते की ओर दौड़ पड़ी. शब्द के अनुसार एक घर में प्रवेश कर उन्होंने देखा, नाटी की चारों टांगें एकत्र कर बांध दी गयी हैं और वह सिमट सिमट व्याकुल होकर कूं कूं कर रहा है. उसे घेर कर कुछ छोटे बच्चे और नौकर हाथ में एक-एक छड़ी लिए हुए मजा देख रहे हैं.

यह दृश्य देख एमिली स्तम्भित रह गयी—क्या करें समझ न सकीं. क्रोध और घृणा से उनका मुख लाल हो गया. दोनों ओठ थर-थर कांप उठे. वे अपनी भाषा में चीत्कार करने लगीं—तुम सब को मैं गोली मार दूंगी...जानवर कहीं के... इस बर्बर देश में मनुष्य रहते हैं ऐसा मुझे विश्वास नहीं होता...तुम सबके विरुद्ध पुलिस स्टेशन में रिपोर्ट करूंगी. मैं कहती हूं उसे शीघ्र खोल दो.

एमिली की धमकी से कोई नहीं डरा. घर में कोई बड़ी आयु का नहीं है. सभी बाहर चले गये हैं. घर में मालिक न होने से—चाकर और बच्चों का राज्य—उन्हें डांटने वाला कोई नहीं. नौकरों ने भी दूने जोर के साथ इशारों से बता दिया कि कुत्ता उनकी रसोई में घुस कर सब जलपान खा गया है—बाबू लौट कर क्या खाएंगे.

एमिली ने देखा धमकी का कोई फल नहीं तो नम्र होकर बोलीं—यदि तुम्हें कोई इसी तरह बांध दे, तो तुम भी क्या नहीं रोओगे ? कुत्ता होने पर भी उसमें जीवन है. केवल मैं ही उसकी बात जानती हूं, क्योंकि मैं उसे प्यार करती हूं. मैं अनुरोध करती हूं उसे दयाकर छोड़ दो.

एमिली के स्वर की नम्रता सह्य कर चाकरों ने नाटी को खोल दिया.

नाटी खोल दिया गया. एमिली उसे गोद में भींच कर जैसी आंधी की तरह आयी थीं वैसी ही लौट गयीं.

इस बीच कुछ दिन बीत गये. राबर्ट साहब अपने देश को लौट जाना चाह रहे हैं वे अत्यन्त चंचल प्रकृति के मनुष्य हैं. किसी नौकरी में दो वर्ष से अधिक नहीं

रह पाते. एक बन्धु के अनुरोध पर भारत आये थे. भारत के विभिन्न स्थलों पर चार-पांच वर्ष बिता कर पुन: उनकी इच्छा हुई कि अपने देश वापिस जाकर वहीं नौकरी करे. उनके चरित्र में एक विशेषता है—उनके मन में जो बात एक बार समा जाए उसे पूरा किये बिना उन्हें शान्ति नहीं मिलती.

रावर्ट साहव ने एमिली से अपने मन की बात स्पष्ट कह दी. एमिली भी यही चाहती थीं. यह देश उन्हें और अच्छा नहीं लगा—वे भी वापिस जाना चाहती थीं. एक मास के पश्चात् चले जाने का उन्होंने निश्चय किया.

मास बीत गया. एक मास के भीतर एमिली ने नॉटी के विषय में बहुत सोचा, उसके लिए बहुत रोयीं, किन्तु काई कूल-किनारा नहीं पा सकीं. रावर्ट साहव ने स्पष्ट मना कर दिया. नॉटी को साथ नहीं ले जाएगें तो उसे किसके पास छोड़ जाएं ?

साँझ हो गयी . एमिली वाहर बरामदे में पड़ी आराम कुर्सी पर आकर बैठ गयी . आकाश के अगणित तारों की ओर देखती हुई उपाय खोजने लगी. बीच बीच में एक–एक उल्का तारा टूट टूट कर गिरने लगा–ठीक उसी तरह जैसे कि उसके मन में नॉटी की एक–एक स्मृति रेखा खींच कर टूट जाती . अनजाने ही उनके नेत्रों से आंसुओं की झड़ी लग गयी . नॉटी को साथ नहीं ले जा सकेंगी . · · · तो उसे किसके पास छोड जाएँ ? कौन इस आशा हीन जीव की शरारतें (दुष्टामि) सहेगा ?

उन्होंने अपने जीवन में अनेक अच्छे कुत्ते देखे हैं किन्तु नॉटी के समान कोई भी उनके मन पर गंभीर रेखापात न कर सका . अपने वेटे के नाम पर यही नॉटी है-कितने दोप किये हैं कितने कष्ट दिये हैं . यह देशी पिल्ला है– तथापि इसके प्राणों ने एमिली के प्राण का स्पर्श किया है . उसके जीवन ने एमिली के जीवन के साथ ताल मिला कर चलने का दावा किया है. एमिली ने सामने देखा. धुंधले अंधेरे में नॉटी पूंछ हिला रहा है . नॉटी का यह आनन्द देखकर उन्हें चोट लगी–उन्हें लगा वे विश्वासघातक हैं .

दीर्घ निश्वास छोड़ कर नॉटी को देख उन्होंने अत्यन्त अस्पष्ट स्वर में कहा, तो तुझे मार दिया जाएगा . उस धुंधले अंधकार में उन्होंने देखा जैसे नॉटी का मुंह उन्हें ही दोषी ठहरा रहा है– इतने स्नेह, इतनी ममता की क्या यह मीमांसा है . परिणति है !! कितने ही लोग आकर प्रतिवाद करते उसे न मारने के लिए . एमिली उसी क्षण में सोच रही है उसे पीछे छोड़ जाने के लिए . इसके पश्चात भी उनका धर्म आकर रास्ता रोक लेना . अपने धर्म के विरोध में जाने का उन्हें साहस नहीं होना . इतना बड़ा दोष प्रथम बार अकेले वहन करने में भय होना .

शेष दर्शन के लिए आने वाले बाबुओं का प्रथम प्रश्न होता — नॉटी का क्या करेंगी ? वे लोग जानना चाहते जिस देशी कुत्ते को एमिली ने इतना स्नेह दिया उसकी शेष परिणति क्या होगी ?

एमिली कहती — उसको मार कर जाऊंगी , पूछने वाले बाबू चकित होते . वे लोग बाहर छोड़ जाने का परामर्श देते — जैसे आया था वैसे ही चला जाएगा . यह बात सुन कर एमिली विरक्त हो जाती — वे नॉटी को शान्ति से रखना चाहती हैं — उसे मार कर स्वयं शान्ति में रहना चाहती है . नॉटी के विषय में वे सोच सोच कर स्वयं नही रोएंगी और उसको भी याद मे छटपटा कर नही मरने देंगी . सब चकित होते —

कुत्ते के लिये जो इतना रोयी है, वही उसे जान से मार डालने की व्यवस्था कर रही है ! यह क्या शान्ति मे रखने का उपाय है !! ये लोग बड़े अद्भुत है, सच-मुच..........इस समय जिसके लिये प्राण दे देने के लिए पीछे नही होते, दूसरे क्षण उसका जीवन समाप्त करने लिये उसी प्रकार आगे बढ़ जाते है .

एमिली ने फिर सोचा—सोचने का जैसे अंत ही नही . इस पूरे मास भर वे नॉटी को जितना ही दूर रखने की चेष्टा करती रही, वह उतना ही उनके पास बना रहा . अपने कष्ट के समय उन्होने नॉटी को अपने पास रखा था, आज नॉटी की विपत्ति के समय उसने उन्हे नही छोड़ा .

इसके दूसरे दिन . सूर्य डूब गया . नॉटी जो सब खाना पसन्द करता—उसे जी भर कर खिला कर एक क्षण के लिये उसे दोनों हाथो से उठा कर चिपटा लिया . उस समय उत्तेजना से उनका सारा शरीर काप रहा था .

नॉटी को गोली मारी जायेगी. वह चली गयी . घर के सामने ऊबड़-खाबड़ जमीन का एक खण्ड है . उसके भीतर राबर्ट साहब ने उसे गोली मारने का स्थान चुन लिया .

बगले के सभी किवाड़-खिड़की बन्द कर सुनसान घर के भीतर एमिली अकेली घुटने के बल बैठ कर ईश्वर की प्रार्थना कर रही थीं अत्यन्त व्याकुल होकर नॉटी की आत्मा की मुक्ति-भिक्षा मांग रही थी .

तीन बार गोली चलने का शब्द हुआ . सच मे जैसे तीनों गोलियां आकर लगीं एमिली की छाती मे . ●

—अनु० : डॉ० रमानाथ त्रिपाठी

(उड़िया साहित्यिक त्रैमासिक 'दिगन्त' से साभार)

गुजराती कहानी

चकती

• सुरेश ह. जोशी

पश्चिमी क्षितिज पर बादल छाये हुए थे, इससे ढलते हुए सूर्य की रक्तिम आभा नज़र नहीं आ रही थी. जहां बादल कुछ छितरे थे, वहां से रक्तिमा की एकाध छोटी-सी लकीर दिखी-न-दिखी कि पसरते हुए अंधकार में विलीन हो गई; मानो किसी नागिन ने सूंघकर अंधकार के ज़हर की थैली को उड़ेल दिया हो. उस उड़ेले हुए अंधकार ने प्रभाशंकर को भी चारों ओर से घेर लिया.

प्रभाशंकर ने आले से पनौटी ली, उसे खोल कर, आँख मिचो कर देखा तो अन्दर मुरझाया हुआ आधा पान ही था. हंसमुख को दो दिनों से पान ले आने का बारबार स्मरण दिखलाने पर भी वह भूल जाता था. प्रभाशंकर ने सावधानी से आधे पान के दो टुकड़े किये. उनमें से एक टुकड़ा बड़ी हिफ़ाज़त के साथ पनौटी में रख दिया और दूसरे पर चूना-कत्था पोतने लगे. पान मुँह में रखा और साथ में तम्बाखू की चुटकी भी.

बाहर की गली के रोशनदान से एक तेज रेखा आगे वाले कमरे में पड़ती थी, उसी रोशनी में खूँटी पर लटकाया हुआ कोट लेकर प्रभाशंकर ने पहना. सर पर टोपी पहनी. एकाध घूंट पानी पीकर ही बाहर निकलने की उनकी आदत थी. जब तक उनकी बूढ़ी पारबती जीवित थीं तब तक तो बाहर जाने का समय होने पर तुरन्त पानी का प्याला लेकर उपस्थित रहती थीं. ऐसे कई छोटे मोटे काम पिछले एक वर्ष से उन्हें खुद ही कर लेने पड़ते थे.

पानी के लिए प्रभाशंकर पनसाल के पास गये. एकाध घूँट पानी पीकर लौटने ही वाले थे कि एकाएक मानों किसी ने पीछे से उनके कोट की आस्तीन पकड़ कर उन्हें रोका. हठात् उनके मुँह से निकल गया: 'क्या है हंसमुख की मां ?'

निःस्तब्ध अंधकार में वह प्रश्न भटकने लगा. प्रभाशंकर आंख खींचकर अंधकार में एक टक देखते रहे. सुँघनी का एक सटाका लेकर, फिर ज़रा खखारा. 'हमने कहा' कहकर, पारबती को बात करने की आदत थी. बड़े लड़के मणिशंकर की मृत्यु के बाद प्रभाशंकर कई बार अन्यमनस्क हो जाते थे, तब पारबती को बहुधा उनकी आस्तीन खींचकर बुलाने की आदत बन गई थी. प्रभाशंकर को स्मरण हुआ. शादी किये दो वर्ष हुए होंगे शायद. तब तो उनके बूढ़े मां-बाप भी घर में मौजूद थे. खाना खाकर प्रभाशंकर नौकरी के लिए रवाना होने को थे. अपनी आदत के

अनुसार घूँट पानी पीकर रसोई से बाहर पाँव धरने वाले ही थे कि ऐसे ही कोट की आस्तीन खींचकर, उन्हें रोक कर पारवती ने 'वह माँ होने वाली है' ऐसा शुभ सम्वाद सुनाया था. संयुक्त कुटुम्ब में मर्यादा का पालन करके रहना होता है, इसलिए एकाध क्षण तनहाई प्राप्त करके दो-एक शब्द बोलने का सौभाग्य क्वचित ही नसीब होता था. रात में माँ-बाप को भागवत-कथा सुनाकर प्रभाशंकर सोने के लिए जाते तब पारवती सारे दिवस के काम-काज से श्रान्त, चढ़ी हुई आँखों से, जागने का प्रयत्न करते हुए बिछौने के छोर पर बैठी नजर आती. वैसे भी प्रभाशंकर उन आदमियों में से थे, जो चार शब्दों के स्थान पर एक ही बोलते हैं.

आँखें पथराने वाली थी, उसी दिन पारवती ने ऐसे ही हाथ थाम कर, सानुनय रोकते हुए कहा था: 'आज न जायें तो नहीं चल सकता ?' लेकिन दूसरे ही क्षण, प्रभाशंकर नित्यनियम में कोई व्याघात बर्दाश्त नहीं करने वालों में से हैं, उसका स्मरण होते ही बात को बदलते हुए कहा था : 'ना, ना यह तो जाने मुझे क्यों ऐसा हो गया, यों ही... लो, एकाध घूँट पानी पीकर ही फिर चलना.'

और, दरवाजे की चरगला में कोहनी परसे फटा हुआ कोट फँस जाने से रुके तो हठात् मुँह से निकल गया 'क्या है हसमुखी की माँ ?' लेकिन वह मुँधनी के सटाके की आवाज़ और 'तुमने कहा' की पुकार नहीं सुनाई दी इसलिए प्रभाशंकर स्वगत ही बड़बड़ाने लगे: 'क्या है ? कोट फट गया है यहाँ कहती हो ना ? तो क्या चकती लगाऊँ ? लेकिन सुई-तागा है कहाँ जो—?'

फिर प्रभाशंकर कुछ देर बेचैन-से, हाथ मलते हुए ज्यों-के-त्यों खड़े रह गये. फिर जाने पारवती का उतरा हुआ चेहरा देखकर बोले. 'अरे तू ही बता न, क्या करूँ मैं ? मैं बहू को बार बार कह सकता और, लगाता हूँ चकती; बस, फिर है कुछ ?' 'चकती शब्द तीन-चार बार बारबार बोले और उन्हें कुछ स्मरण हो आया : लगातार तीन-चार साल अच्छे नहीं गुजरे. घरधराना सब आग की लौ में —भस्म हो गया. जमीन तो कफन खाने भर को भी थी नहीं. पिता ग्रामयाजी थे. बहनों के विवाह-शादी का प्रश्न था. इसलिए पन्द्रह की आयु से ही प्रभाशंकर एक व्यापारी के यहाँ तम्बाकू की पुड़िया लपेटने बैठ गये. वर्नाक्युलर फाईनल तो पास कर लिया था; इसमें पाँच साल की प्रतीक्षा के बाद आखिर बहुत दूर के एक अनजाने गाँव में, पन्द्रह रुपया महीना प्राथमिक शाला के अध्यापक की नौकरी मिल गई. घर-गिरस्ती, बहनों की शादी-विवाह आदि का खर्च उठाते.उठाते पैंतीस तक तो पहुँच गये. अन्ततः प्रभाशंकर को अपना घर बसाने की अनुकूलता भी प्राप्त हुई. विवाहोपरान्त गौने के लिए जब ससुराल गये तब पारवती के साथ जो बात हुई थी उसका प्रभाशंकर को स्मरण हो आया. उन्होंने कहा था. —

"मेरी तो उम्र अब ढलने को है, संसार का बोझ ढोते-ढोते मैं तो दम भी गंवा चुका हूँ . मेरे साथ रहना तुम्हें कैसे सुहाता होगा ?"

तब पारवती ने अपनी आंखों से भरा हुआ उत्तर दिया था, "मेरे लिए तो आप ही सब कुछ हैं, फिर मुझे और कुछ क्या चाहिए ?"

प्रभाशंकर ने जिरह करते हुए कहा था .

"लेकिन हमारे यहां तो 'अठन्नी की आमद और चौरासी का खर्च' जैसा हाल है . संसार-सुख भोगने की अपेक्षा थिगलियां टांकने का ही काम मुझे ज्यादा करना होगा ."

पारवती ने सोत्साह कहा था : 'कोई हर्ज नहीं. आप कहेंगे उतनी थिगलियां लगा दूंगी . थिगलियां लगाने में मैं थकान का अनुभव नहीं करूंगी .'

परन्तु आज है कहां वह ! आखिर वह भी थक गई ना ?

देव के सम्मुख दीया जलाने और लालटेन सुलगाने के लिए प्रभाशंकर ने दीया-सलाई की खोज की, पर नहीं मिली. लेकिन दीयासलाई को टटोलते हुए एक डिब्बे में से सूई-तागा हाथ लग गया . उसे लेकर प्रभाशंकर ओसारे में गये. गली के दीये की रोशनी में उन्होंने कितनी थकली लगानी होगी उसका अन्दाजा निकाला . अपनी बैठने की गद्दी के नीचे एकत्रित लत्तों-चीथड़ों से ठीक नाप का एक टुकड़ा निकाला . उसका रंग कोट के रंग का सा नहीं था; लेकिन ऐसा कपड़ा लाए कहां से ? इस कोट को भी उतने ही वर्ष हुए थे, जितने हंसमुख को . मणिशंकर इसे मिलिटरी के रद्द किये हुए नीलामी कपड़ों से सस्ते दामों में ले आया था .

प्रभाशंकर ने आंख गड़ाकर, दीये के प्रकाश में सूई पिरोने का प्रयत्न किया . धागे को थूक से गीला कर छोर को ऐंठा . लेकिन लाखों कोशिश करते हुए भी सूई का नाका (छेद) दिखे तब न .

तभी गली के दीये से टपकते उजाले में खेलते हुए एक किशोर की दृष्टि उधर पहुँची . कुछ देर तक तो वह कौतूहल से प्रभाशंकर के निष्फल प्रयासों को देखता रहा, फिर समीप आकर बैठा और दीवार की परतें उखाड़ता हुआ प्रभाशंकर की कोशिशों को निरखता रहा .

कर का ध्यान उसकी ओर गया तो उन्होंने कहा . 'कौन है बेटा ? दया-का मनु क्या ?' किशोर ने कहा . 'हाँ, दादा !'

र ने किशोर के मान वाची सम्बोधन से प्रोत्साहित होकर कहा : "भाई रा इस सूई में धागा पिरो दे न ."

मनु ने कहा : "अवश्य दादा, लेकिन एक शर्त . आपको एक कहानी सुनानी होगी ."

प्रभाशंकर ने हँसते हुए कहा : 'कहानियाँ सुनाना तो तेरी दादी को आता था . मैं तो ....'

उनकी बात को बीच ही में काटते हुए मनु बोला : "ना दादा, ऐसे बहाने बनाने से नहीं चल सकता . दादी ने आपको तो बहुत-सी कहानियाँ सुनाई होंगी . उनमें से ही एकाध सही "

प्रभाशंकर पराजित हुए . उन्होंने कहा 'खैर, तू सूई पिरो दे, फिर कहानी सुनाता हूँ .'

मनु ने झट से सूई पिरो दी . प्रभाशंकर कपड़े का वह टुकड़ा जोड़ कर जैसे बन पड़े बखियाने लगे . मनु कौतूहल से विस्फारित नेत्र लिये, सरक कर उनकी बगल में जा बैठा .

प्रभाशंकर ने कहानी का आरंभ किया 'बहुत ' ' ' ' बरसों पहले की बात है........'

मनु ने पूछा : 'कितने ? सौ, दो सौ ' ' ' ' ?'

प्रभाशंकर ने कहा 'ना, एकाध हज़ार साल पहले की बात है तब एक राजा था . उसके एक राजकुमार था उसका नाम था चिरायु . बचपन से ही वह खूब सुन्दर था . उसे जो देखता, उस पर सौ जान से बलिहारी हो जाता . वह दिन दूना रात चौगुना बढ़ता ही गया . वह ज्यों बढ़ता गया, उसकी कान्ति भी उतनी ही ज्यादा बढ़ती गई . राजा और रानी जब उसे देखते, देख कर आँसुओं से मुँह धोते रहते ....'

मनु ने कहा : 'अजीब बात है . ऐसे सलोने कुँअर को देख कर आँखें प्रसन्न करने की अपेक्षा राजा-रानी आँसू गिराये !'

प्रभाशंकर बोले : 'हाँ भाई ! वह ऐसा खूबसूरत था तभी तो उसे देखकर राजा-रानी के दिल में हुआ करता था कि ऐसी कचनमयी काया भी एक दिन मुरझा ही जाने वाली है न ? उन्हें इसका दुःख था और तभी आँखों से आँसू बहते रहते ....'

मनु ने 'हाँ, करते हुए कहा ' हूँ ऽ ऽ ऽ ' ' फिर ?

प्रभाशंकर ने बात का दौर जारी रखते हुए कहा : 'यों ही महीने कटते जाते हैं. साल गुजरते जाते हैं, राजकुमार सोलह वर्ष का हुआ . सारे राज्य में बड़ी धूम-धाम से उसकी सालगिरह मनाई गई . उसी वक्त यह सम्वाद राजा व रानी तक

पहुँच गया कि राजधानी में कोई बड़े चमत्कारी सिद्ध पुरुष आये हुए हैं. वे नगर से बाहर, बरगद के बड़े पेड़ की छाया में, धूनी रमा कर बैठे थे. राजा और रानी उनके सम्मुख हुए. सुवर्णथाल में फल भर कर कहा : 'महाराज, हमारी एक इच्छा पूर्ण करोगे ?'

सिद्ध पुरुष बोले : 'कहो, क्या कामना है ?'

रानी ने कहा : 'हमारा इकलौता राजकुमार हमेशा के लिए ही वैसा ही सुन्दर और युवा रहे ऐसी हमारी इच्छा है.'

सिद्ध पुरुष ने कहा : 'अच्छा. लेकिन एक बार बराबर सोच लो.'

राजा ने कहा, 'महाराज, हम तो दिनरात इसी बात की रटन करते रहते हैं. हमें अब ज्यादा सोचने को क्या रह जाता है ?'

सिद्ध पुरुष ने कहा, 'ठीक है, मैं उसके लिए एक चमत्कारिक रेशमी वस्त्र देता हूँ, जिसे वह अपनी देह से कभी अलग न करे. काल का उस पर कोई असर नहीं होगा और उसकी काया तनिक भी नहीं मुरझायेगी, जब तक यह वस्त्र उसके अंग पर रहेगा.'

राजा और रानी यह सुनते ही आनन्द विभोर हो उठे. उन्होंने झुक कर सिद्ध-पुरुष की चरण–रज को सिर पर चढ़ाया.

फिर सिद्ध पुरुष ने कहा : 'लेकिन एक बात है. यदि तुम दोनों में से किसी एक के भी दिलमें कभी उसके लिए तनिक भी दूषित विचार घुस आया तो उस वस्त्र में छिद्र पड़ जायेगा और फिर वह बड़ा होता चला जायेगा.'

यह सुनना था कि राजा और रानी के चेहरे उतर गये. फिर राजा बोले.– अपनी आंखों के तारे-से बेटे के लिए हमारे दिल में कोई कुविचार तो नहीं आ सकता, पर ईश्वर न करे…'
रानी ने बात का सिलसिला निकालते हुए कहा. 'हां, ऐसा कुछ हो जाय तो उस वस्त्र को सिला नहीं जा सकता क्या ?"

सिद्ध-पुरुष ने कहां : 'सिला तो जा सकता है, लेकिन वह बड़ा दुष्कर कार्य है.
राज-रानी एक साथ बोल उठे: 'क्यों ?'

पुरुष ने कहा, 'उसे सिलने के लिए जितने टांके मारने पड़े उतने वर्ष अपनी यु से प्रदान करने वाला कोई मिल जाय, तब वह उसे जोड़ सकता है, बशर्ते अपने वर्ष प्रदान करने वाले ने उन देय वर्षों के समय में कुछ पाप न किया वे वर्ष बिलकुल निष्कलंक होने चाहिए ?

-रानी यह सुनकर कुछ देर के लिए सोच में पड़ गये, लेकिन फिर तुरन्त कहा.

'अच्छा महाराज, हमें सब कुछ मंजूर है.'

सिद्ध-पुरुष ने कहा, 'अब भी एक बार सोच लो. यदि उसके वस्त्र में छिद्र पड़ गया तो उन सभी बिगत वर्षों का असर उसकी काया पर एक साथ होगा और जब तक वस्त्र सिला नहीं जायेगा, अन्तःप्राणधारी धीरे-धीरे गलता ही जायेगा. फिर भी वह मर नहीं सकता, जब तक शरीर पर वस्त्र रहेगा.'

राजा-रानी को अब कुछ भी नहीं सुनना था. उन्होंने तो आतुरता पूर्वक वह रेशमी वस्त्र माँगा. सिद्ध-पुरुष ने वह वस्त्र, उसके ठीक मध्य भाग में स्वस्तिक अंकित करके दिया. तब राजा-रानी तो राजमहल को लौटे. बड़ा दरबार लगवाया. वहां बड़े ठाटबाट से राजपुरोहित के हाथों, राजकुमार को वह रेशमी वस्त्र पहनाने की विधि सपन्न हुई.'

मनु ने पूछा : 'फिर ?'

प्रभाशंकर ने बखिया करते हुए कहा. 'फिर तो साल पर साल गुजरते चले जाते हैं. राजा बूढ़े हुए. रानी भी वृद्ध हुई ; लेकिन चिरायु तो था वैसा ही सुन्दर और सोलह वर्षीय युवा राजकुमार ही रहा. चिरायु तो अब गुलछर्रे उड़ाने लगा. एक राजकुमारी से शादी की और कुछ उम्र पार हुई ही नहीं कि उसकी ओर से आँखें फेर कर दूसरी को अंगीकार कर लिया. इसकी तो फिर कुछ सीमा ही नहीं रह गई.

एक दिन राजा और रानी झरोखे में बैठे हुए थे कि समीप से किसी को फूटफूट कर रोने की आवाज़ सुनाई दी. उन्होंने देखा तो राजकुमार की आंखों से उतरी हुई (त्यक्त) रानी ही अपने भाग्य के विपाक पर रो रही थी. राजा उसे आश्वासन दे कर शान्त करने के प्रयत्न में ही थे कि उसने जीभ काट कर आत्महत्या कर ली.

राजा-रानी इससे अत्यन्त खिन्न हो गये और उनके मुंह से फूट पड़ा : 'इससे तो यह अच्छा है कि जवानी ही न हो.' और बात की बात में उस सिद्ध-पुरुष के वचनानुसार ही हुआ. चिरायु के रेशमी वस्त्र में छिद्र बन गया और दूसरे ही क्षण राजकुमार का सारा हुलिया ही बदल गया. उसकी देह पर झुर्रियां पड़ गईं, पीब से भरे हुए नासूर किलबिला उठे. उसे देख कर लोग मुंह फेर कर भागने लगे. चिरायु तो गिरता-पड़ता राजा-रानी के पास आया और गिड़गिड़ाकर कहने लगा: 'मेरी रक्षा करो, मेरी रक्षा करो.'

रानी बिलख-बिलख कर रोने लगी. उसने उसे अंक में भर लिया और वह फटे हुए रेशमी वस्त्र को थकती लगाने बैठी. वह बखियाती रही, लेकिन वस्त्र तो टँकता ही नहीं. फिर राजा ने बखियाने का प्रयत्न किया, लेकिन वस्त्र तो जुड़ता ही नहीं.

राजा-रानी थोड़े ही पापमुक्त थे ! फिर तो राजा के दरबारियों ने यत्न किया, किन्तु बेकार !

यों दिन-ब-दिन छिद्र बढ़ता ही चला गया. उसे टांकने के उपयुक्त निष्कलंक वर्ष किसके पास धरे हों ? राजा और रानी ने तो कुंअर की यह दशा देखते हुए आंखें मुंद लीं. फिर चिरायु तो निकल पड़ा · · · · .

मनु ने पूछा, 'लेकिन क्यों उसने उस वस्त्र को उतार नहीं फेंका ?'

प्रभाशंकर बोले, 'उसके मन में ऐसा लोभ जो था न कि शायद कोई वस्त्र को टांकने-वाला मिल जाय और जवानी लौट आये. लोग कहते हैं कि कभी-कभी रात के अंधकार में कोई कंकाल-सा बूढ़ा, चिथड़ों से ढंका हुआ डगमगाते चरण आँगन में आकर खड़ा रहता है और कहता है : 'चकती लगा दोगे ?' फिर प्रतीक्षा में तनिक ठहरता है. आखिर उत्तर नहीं मिलने पर आगे बढ़ जाता है.'

मनु सोच में पड़ गया. कुछ देर तक वह चुप बैठा रहा. फिर कुछ सूझते ही उसकी आँख दमक उठी. हठात् वह बोल उठा : 'दादा, आप तो रात में बड़ी देर तक उसारे में बैठे रहते हैं, आपको शायद वह कभी दिखाई दे तो मुझे पुकारना हम दोनों मिल कर उसका रेशमी वस्त्र उतार फेंकेंगे . फिर उसे भटकना तो न होगा. ठीक है न ?'

प्रभाशंकर ने कहा, 'हाँ' .

मनु संतुष्ट होकर उठ खड़ा हुआ और चला गया. प्रभाशंकर उसकी ओर आँखें गड़ा कर क्षणभर अविचल भाव से बैठे ही रहें, तब बखिया करते हुए उंगली की नोक में सूई चुभ गई तो सूई तागा निकाल कर उठ खड़े हुए और फिर घर के भीतर के अंधकार में गायब हो गये.

——अनुवादक : राजन कड़िया

मराठी कहानी

कमली और चन्द्र

• मंगेश पदकी

ढोरों के गोठ में खट खट की आवाज होती ही रहती है. कमली के छोटे से नये-नये नये सींग रस्सी बांधने के खूंटे से टकराते रहते हैं. किसी ने उसे ब्राह्मण के घर दान में दे दिया है और वह मस्ती में आ गयी है. भीमाचाची उसे दो-दो गाम बांध कर जकड़ देती है पर गाम बांध कर उसे थामना कठिन है. वह झटके में ही पगहा तोड़ देती है

रसोईघर में यमू की अंगुलियां चावलों में अनदेखे ही फिरती है. चावल के खुरदरे स्पर्श से उसके शरीर पर दानेदार रोमांच उठते हैं. हल की तरह बार बार अंगुलियां चावलों में फिरती है. अंगुलियों को स्पन्दित करना वह खुरदरा स्पर्श न हो, ऐसा भी नहीं लगता.

"यमू री, अभी तक तू बाहर हो कैसे?" भीमाचाची ने बहुत पहले पिछले आंगन से पूछा था.

'जी'. बाहर बरामदे में दीये को रखते यमू ने आवाज दी थी.

"तुम अभी तक बाहर कैसे, मैंने कहा, चूल्हे में आग जलायी?"

"जलाती हूं."

"चावल ले लो साफ करने का." भीमाचाची ने कहा था.

वह हांडे में से पानी लेकर घिस घिस कर हाथ-पांव धो रही थी. केले के थुंबे पर कुल्ले करती जाती थी

"बड़ी मस्ती में आई है गाय की. मरी को दांभ ही देना चाहिए, पांडु को कहना होगा."

"आं···? यमू घर में बैठे बैठे ही सहम उठती है.

"तुझे नहीं, कमली से कहती हूं. अभी-अभी फाटक का डंडा ही तोड़ डाला 'मरी' ने. पांव ही तोड़ देती हूं." आंगन के कोने में खड़े बांस के फाटक से लगी भैंस बेचारी समझदारी से रुक कर जुगाली कर रही थी पर कमली को गले से अटकाये हुए डंडे की परवाह भी नहीं थी. चौकड़ी भर कर उसने फाटक पार किया था. उसके खुरों से सबसे ऊपर का डंडा खट से टूट कर उड़ गया था. पीछे पीछे लड़खड़ाती आती भीमाचाची के सर में ही गिरने को था.

"धत् तेरा मुर्दा निकले . आग लगे तेरे थान को . बैल सी मस्ता गई . ठहर तुझे ठिकाने लगाती हूँ ." भीमाचाची बड़बड़ाती रही . कमली को खूंटे से बांध कर उसे धोबी की लय में पीटती रही .

यमू अपना पल्ला सँवारती हुई मंझले घर में जाती है . झटपट चूल्हे में आग सुलगाती है . सूप में चावल लेके बैठती है . मिट्टी के तेल के दीये के धूंए से आंखों में कांटे से गडते हैं. पानी झरने लगता है. नंगी लौ की आँच से माथा-गर्दन पसीने से तर हो जाते हैं .

उसकी अंगुलियां चावलों में अनोखेपन में घूमती हैं .

"पांडू आया ?"

"ना ." उसकी अंगुलियां अचानक रुक जाती हैं . आवाज़ मुंह से यूं ही निकल पड़ती है .

"ठीक . मैं कहती हूँ, उसके होते हुए बाहर काम क्या चल रहा था तेरा ?"

"तुलसी को दीया करती थी . बार–बार हवा से बुझता था .

"बरामदे में रखना था ."

"रखा भी ."

"पांडू के लिए भी चावल रखने हैं, ध्यान में है न ?"

"जी ."

"उसके होते हुए बाहर बरामदे में जाने का कोई काम नहीं ."

"हाँ." यमू ओठों पर जीभ फेरती है और चावल में सारे ख्यालों को गाड़ लेती है.
"क्या ताकती हो इतना ?" दोपहर पूजा करते समय भीमाचाची ने पूछा था. तब भी उसके होंठ ऐसे ही खुश्क हो उठे थे . अकस्मात कुंए पर उलटी दिशा में छूटे हुए रहट की तरह उसके मन ने भी धड़धड़ किया था .

पिछले आँगन में पानी के गिरने की धड़ धड़ आवाज़ उसने सुनी . यूं ही उसने उस तरफ झांका था . एक सीढ़ी उतर कर उसने आवाज़ की दिशा में देखा था .……और झट से नज़र फेर ली थी . चट ही वह घर में भी आ चुकी थी .

पर इतने में भीमाचाची ने उसे टोका था . पांडू नहा रहा था; भीमाचाची जानती थी . खिड़की में से वह दिखाई देता था . उसके घने काले पत्थर जैसे अंगों पर से पानी की धारा बहती थी. बहते पानी की धार सीधी धूप में कलाबत्तू जैसी चमकती थी . भरी गागर को एक ही झटके में सहज उठाते समय उसके शरीर की प्रत्यञ्चा झंकृत–सी हो उठती है——उसमें ठोस कर भरी ताकत की

श्रद्धा प्रेक्षक के मन में छलक उठती है . गागर का भार और भुजदण्ड की शक्ति दोनों का प्रत्यय हो उठता था .

"सर्प सा कुछ है ." यमू ने भीमाचाची के प्रश्न का तुरन्त जवाब दिया था .

"अरी कहाँ ?"

"नारियल के 'ताल' के तले .'

"नागिन होगी . ठंडक के लिए क्यारी में जाती होगी ."

चालाकी से झूठ बोलने पर यमू स्वयं ही चकित हुई थी . झूठ बोलने की वस्तुतः कुछ जरूरत नहीं थी . और फिर तभी से ऐसा लगता था कि सभी क्रियाओं में मानो ऐंठन सी आ गई है

देव पूजा के कोने में दीप की स्थिर ज्योति जरा भी थिरकती नहीं . भीमाचाची जपमाला लेकर वहीं बैठी है . चेहरा नये ताजे टँके पत्थर जैसा निर्विकार था . उनके होंठ मात्र स्वरहीन मूक पुट पुट करते है . बीच-बीच में गले पर से ढुला हुआ साड़ी का पल्ला बायें हाथ से सँवार लेती है . पल्ले की किनार को दोनों कानों के पीछे स्थिर कर लेती है . माला में एक-एक मणि बड़े वेग से सिसकती रहती है . लेकिन भीमाचाची के कान अति जागरूक रहते है बाहर के, मंझले घर के, पिछले आँगन के चारों ओर से ध्वनि-फुपारों को चूस लेने में वे तृप्ति पाला सी तत्पर हैं .

आठ दिन पहले बाजार से तात्या से मिलते ही भीमाचाची ने उसे खेती के कुछ काम से बुलाया था . जमीन के दो चार टुकड़े थे उनमें हल तो चलाना ही होगा. वैसे गाँव में काम के आदमी बहुतेरे थे पर उसने तात्या को ही आग्रह से बुलाया . भीमाचाची का उससे खानदानी सबंध था . भीमाचाची को वह भाभी कहता था . जवान था तभी से इस घर में मेहनत-मजूरी की थी .

"..............ठीक ही किया तुमने आकर, तात्या . अब मैं अकेली क्या करूँ और कहाँ कहाँ नजर डालूँ ? घरबार, खेतबाड़ी की तरफ देखूँ कि डंडा लेकर श्रीधर की इस पत्नी की रखवाली करूँ ? ना, ना, बाबा ! ....वैसी तो ठीक ही है . पर उमर है न ? यह बात कोई कहने की थोड़े ही है ? जिसकी है वह पति हाजिर होता तो मेरे पीछे यह चिन्ता तो न होती .

"..........श्रीधर क्यों चला गया, कहाँ गया, मैं भी तो नहीं जानती ? बाजार के लिए जाता हूँ ऐसा कह कर जो गया सो गया. यह भी तो नहीं कहा उसने." "झगड़ा तो नहीं था," उससे मैंने पूछा, तो उसकी आँखों से आंसू बहने लगे . वैसी देखने में बड़े कद की लगती है . पर स्वभाव से बड़ी नाजुक है . तो, यूँ ही

बिना झगड़े के, बिना कहे सदा के लिए चला ही गया और मुझे अब उसकी यह धरोहर संभालते रहना पड़ता है. नहीं तो कुंए में कूद कर मैं तो छूट जाऊं.' तात्या के सामने तो अपनी मनोव्यथा को कहने देना संभव था. उसने भी इधर उधर जरा ध्यान दिय होता किन्तु उसने तो अपने लड़के को काम के लिए भेजा था. कल तक "हर्र र्‌·········हो ऽ ऽ" करके ढ़ोरों को हाँकने वाला पांडू तेजी से बढ़ गया था. उसके अंग–प्रत्यंग जवान तात्या के अंग–प्रत्यंगों का स्मरण करा रहे हैं. तात्या ने व्यर्थ ही भीमाचाची की छाती पर यह पत्थर रखा.

'पांडू ? क्यों रे पांडू ?' भीमाचाची को बाहर के दरवाजे पर से आहट सुनाई पड़ी. उसने अन्दर से पुकारा·

'जी हां, चाची.'

'बैठो जरा. बाहर ही बैठो, हां. हाथ-पांव तो धोकर आये हो ?'

पांडू 'जी, हां.' वह खखार कर आंगन में थूकता है. भीगा चेहरा हथेलियों से पोंछपोंछ कर सुखाता है. शरीर को मोड़ कर पीठ की हड्डियों की ऐंठन को दूर करता है.

यमु पानी में चावल उबालने रखती है. पांडू की दानेदार मोटी निचली आवाज और पीठ की कड़ कड़ करती हुई हड्डियों की ध्वनि से उसके हाथों से ढकनी गिरने को ही होती है. चावल मुश्किल से गिरते-गिरते बच जाते हैं.

भीमाचाची के चित में उन आवाजों से एक चेतना जागृत होती है. जप माला को हाथ से अलग करके झट से बाहर आती है. मंझले घर के दरवाजे की तरफ एक नजर फैंकती है. वहां यमु नहीं है, वह तो रसोई में व्यस्त है., भीमाचाची जरा सी टेढ़ी पड़ती है, दरवाजे में बैठती है.

'पांडू सभी काम निबट लिए ?'

'निबट ही गये, चाची.' अदब से उठ खड़ा होता है. सीधा खड़ा वह मानों छत को [illegible] ता, ऐसा लगता है., बरामदे में औरों के लिए जैसे उसने कोई जगह ही [illegible] हो, ऐसा लगता है.

[illegible] के करीब का टुकड़ा ? उसमें भी अब हल्का काम हो गया.'

[illegible]'

[illegible] ?'

[illegible]'

'नाई की ?'

हर जमीन के टुकड़े को कोई नाई का, कोई कुम्हार का इस तरह गिना जाता है. काम की छानबीन होती है भीमाचाची जमीन पर हथेलियां टेकती हुई उठती है. 'ठीक. तुम्हारे कितने दिन होते हैं, कुछ गिने भी तो हैं ? पिछले बुधवार काम पर आये हो. अब बैठो जरा. रसोई को देखती हूँ, क्या हुआ.'

'जी.' पाटू निश्चित होकर दीवार से पीठ लगा कर बैठता है गों की ओसरी में जरा गड़बड़ चली है चाची ?'

'यह भी कहना भूल ही गई' भीमाचाची दरवाजे से सट कर खड़ी है. 'वह है कमली, बड़ा तूफान करती है यह बछिया आजकल तुम्हारे आने के कुछ पहले फाटक का डंडा ही तोड़ दिया उसने मैं मरते-मरते बच गई सर फोड़ देती मेरा. लाल्या को एक सदेश कहोगे ? भूलोगे तो नही !'

'जी हां, क्यों नही'

'अगर उनका इस तरफ आना हो तो, यूँ कहना कि कमली को ले जायें नही तो, ऐसा कर.'

'जी'

'कल तो घर जाओगे न तुम ? तो तू ही अपने साथ ले जा उसे लाल्या को कहना कि जब दूध देने लगे तब इसे वापिस भेज देना. क्यों ?'

'जी, चाची''

भीमाचाची अन्दर की तरफ मुड़ती है., रसोई के काम से निबट कर खाली बैठी हुई यमू बाहर की तरफ ध्यान लगा के सुनने की क्रिया से हड़बड़ा कर उठती है, और काम में लगती है दाल में यूँ ही चमच घुमाने लगती है उसकी आंखों के सामने हवा में बरामदे पर बैठे पाटू की प्रतिमा तरंगित होती है छोटे दरवाजे से दिखाई देने वाली उसके शरीर की अधूरी मस्तहीन भांकी उसे लगता है मानो किसी बे-सर जानवर ने घर में प्रवेश किया है सारा बरामदा, सारा घर उसने अपने शरीर से व्याप्त किया हो. केवल हाथ, पाव, पेट और जांघो वाला ही यह जानवर है.

कुछ क्षण पूर्व तुलसी के पास दीया रखते भी उसे कुछ ऐसा ही अव्यक्त आभास हुआ था और उसकी हस्ती का आधार ही डावाडोल हो उठा था.

घर तो पूर्वाभिमुख था किन्तु हवा के जोर शोर की कोई रुकावट नही थी. नित्य-नियम के अनुसार बड़ी सावधानी से कदम रखते हुए दीये को हवा के झोंके से बचाती-बचाती वह आगन में गई थी किन्तु जब वह उसे तुलसी के सामने रखने

बन्द खिड़कियां

● कुलवन्त सिंह विर्क

सिनेमा देखकर घर लौटते समय रास्ते में वह अपनी परिचित लड़की के कमरे की खिड़की के सामने खड़ा हो गया. लड़की अन्दर कुर्सी पर बैठी बिजली के प्रकाश में पढ़ रही थी. उनकी पिछली बातचीत में हलके से प्यार का प्रतिबिम्ब दृष्टिगोचर होता था. कुछ वर्ष पहले जब वे आँख मिचौनी खेला करते थे तो वह लड़की सदा उसके पास आकर छुपती और जब आँखें बन्द करने की उसकी बारी आती तो भी वह उसी को ढूंढने की कोशिश करती. जितनी बार वह उनके घर आती केवल पुस्तकें सामने ही नहीं आती थीं. कथा कहानियों की इतिहास की पुस्तकें यद्यपि उन राजाओं के बारे में हो थी जिनके बारे में छोटी कथाओं की, परन्तु उसे मुश्किल पुस्तकें पढ़ कर क्या लेना था ? इसीलिये कमरे की एक दीवार पर उसने पेन्सिल के साथ उसके आने की सारी तारीखें लिखी हुई थीं और जब उसके चक्कर उसके अनुमान से कम होने लगते तो वह मुस्कराते हुये उसे वे तारीखें दिखा देता था. स्कूल के खाना पकाने की तैयारी वह उनके घर आकर ही करती और दोनों मिल कर समोसे बनाते, पूरियां तलते और फिर स्वयं ही खा जाते.

मेरी पुस्तक पर से आंख उठा कर लड़की ने उसकी तरफ देखा और फिर बिना बोले पुस्तक पर आंखें जमा दीं. घरवाले सब सोये पड़े थे. लड़की नहीं जानती थी कि वह क्या चाहता है और न ही उसे स्वयं यह पता था कि वह वहां क्यों खड़ा हो गया था, शायद लड़की के मुस्करा देने से वह वहां से चला जाता, लेकिन लड़की तो इस तरह थी जैसे उसने उसे कभी देखा ही नहीं हो. थोड़ी देर बाद लड़की ने फिर उसकी ओर देखा. वह वहां स्थिर खड़ा था. कुछ देर के पश्चात् लड़की उठी और हौले से उस खिड़की के कपाट बन्द कर दिये. वहां खड़े होने का अब कोई फायदा नहीं था. लड़की उसे दिखती नहीं और न ही उसे देख सकती थी. आहिस्ता २ वह अपने घर की ओर चल पड़ा.

किसी के घर मेहमान बन कर जाना कितनी अच्छी बात है. सभी प्यार करते हैं और साथ में इतनी बातें हो जाती हैं. उनकी लड़की को वह अंग्रेजी की कवितायें पढ़ाता और वह लड़की उससे बातें करके बहुत खुश होती. उसे पहले ऐसा कोई लड़का नहीं मिला था जिसकी आंखों के सामने से दुनिया का इतना बड़ा भाग गुजरा हो और जो हर विषय पर इतनी मनोरंजन की बातें सुना सकता हो. वह घन्टों एक ही कविता पर लगे रहते.

खेती-बाड़ी के महकमे की ओर से 'फ्रूट शो' देखने का बुलावा आया हुआ था. "मैं नहीं जा सकती" "उसकी मां ने कहा" "तुम दोनों कार में चले जाओ और भोली को भी साथ ले जाओ." भोली उसकी छोटी बहन थी. पहले कार में वह बैठ गया और फिर वह लड़की और जब भोली कार के दरवाजे के सामने आकर खड़ी हुई तो उस लड़की ने बैठे बैठे ही उसे उठा कर अपने और उसके मध्य में बैठा लिया जिस तरह कि बिजली लगाने वाली दो तारों के बीच में एक लकड़ी रख दी जाती है.

कालेज के दिनों में उसका राजनीति में दूसरे लड़कों की अपेक्षा अधिक शौक था, और इस काम में उसकी एक सहपाठिन उसकी साथिन थी. लाहौर जैसे शहर में राजनैतिक हलचल की कोई कमी नहीं थी। रोज ही उस लड़की को किसी न किसी बात पर सलाह करनी होती, किसी नेता का स्वागत करने के बारे में, किसी जलसे में स्वयं जाने और दूसरे लड़कों को वहां जाने की प्रेरणा देने के बारे में, किसी जुलूस की रौनक बढ़ाने के बारे में. वह कालिज में एक साथ घूमते फिरते कितनी देर बातें करते रहते, लीडरों के भाषण के बारे में, उनकी दूसरे लीडरों से तुलना के बारे में, उनके व्यक्तिगत जीवन के बारे में, उनके प्रकाशित हुये वक्तव्य के बारे में, और उनके लिखे लेखों के बारे में. जब वह उसे साथ लिए कालेज की लायब्रेरी में जाता तो सभी विद्यार्थी अखबारों और पत्रिकाओं पर से आंखें उठा-कर उनकी ओर चोर आंखों से देखते.

बेडमिंटन खेलने के बाद कालेज के ग्राऊंडों के एक तरफ वह और उसका एक मित्र और वह लड़की बैठे हुए बातें कर रहे थे, वह स्वयं कम बोल रहा था. जब मनुष्य को स्वयं किसी दूसरे के प्यार पर विश्वास हो तो दूसरों को इस प्यार के लिये ललचाते हुए देखकर बड़ा स्वाद आता है. खेलने के कारण उन्हें प्यास लगी हुई थी. वह स्वयं कैंटीन पर पानी के लिए कहने चला गया. ग्रांऊंड के इर्द गिर्द लगी मेंहदी के पीछे से जब वह वापस उनके पास आया तो वह लड़का और लड़की एकाएक चुप कर गये. उसे विश्वास था कि उन्होंने उससे छुपाने के लिए बात चीत बीच में ही काट ली है. उस बात का थोड़ा सा अंश उसे हवा में लटकता हुआ दिख रहा था.

उसके एक अभिन्न मित्र का विवाह हो गया था. उसे मित्र की पत्नी के प्यार में भी वह अपना कुछ हक समझता था. प्यार बांटने से कम थोड़े ही हो जाता है. विवाह के कई महीने बाद वह बड़े चाव से उनके घर गया [illegible]. गुमान से कहीं ज्यादा उसका स्वागत हुआ. उसके घर की [illegible]
[illegible] तो अपनी [illegible]

[illegible]

पत्नी दोनों मित्रों के अगाध प्रेम से अपरिचित नहीं थी. ऐसे लगता था जैसे उसने अपने दिल में पति के इस मित्र के लिये विशेष स्थान बना लिया था. रात्रि के समय वे तीनों पास पास अपने बिस्तरों पर पड़े थे.

"सुनाओ, कुछ दोस्ती की शुरुआत हुई है या नहीं ?" उसके मित्र ने मजाक से पूछा.

"शुरुआत होकर बल्कि और काफी आगे बढ़ चुकी है." इन्होंने मुझे बड़े प्यार की एक बात कही है."

"कौन सी बात ?"

"मैं नहीं बताता ?"

"अच्छा भाई, करो बातें, मुझ तीसरे आदमी ने पूछ कर क्या लेना है ?

"तीसरा आदमी यही है." उसकी पत्नी ने फैसला दिया और प्यार से अपने पति का हाथ चूम लिया.

उसकी लड़की की शादी हो गई थी. लेकिन इसमें क्या नुकसान था. लड़कियां केवल शादी करने के लिये ही नहीं होतीं. वह लड़की तो अब भी उसी की थी. शादी से पहले उनकी कितनी घनिष्ठता थी. जब दोनों को एक दूसरे की सभी बातों का पता हो, जब कोई बात बताते हुये नये सिरे से भूमिका न बांधनी पड़े, जो कोई भी किसी के दिल दिमाग में बस रहा हो उसकी जान पहचान एक दूसरे से करा दी हो, जब एक दूसरे के बारे में राय पक्की हो गई हो और किसी नये कारण से न बदल सके, जब अपनी कमजोरियों का वर्णन भी दूसरे के हृदय में सहानुभूति के लहरा रहे समुद्र में डूब जाता हो, बात-चीत का असली स्वाद तभी आता है.

उसे विश्वास था कि यदि उस लड़की को पता लग जाये कि उसने पगड़ी किस रंग की बांधी हुई है तो अब भी वह अपना दुपट्टा उसी रंग का रंगा ले, लेकिन अब तो वह बहुत दूर थी. कभी-कभी पत्र आते थे, उनके नये शहर के बारे में, वहां की धरती और लोगों के बारे में, और बीच में जानकारी के लिये कई प्रश्न होते कि वह अब भी अचकन पहनता है कि नहीं, उसके बगीचे के फूल अभी खिले हैं कि नहीं उसका घोड़ा अभी भी ज्यादा तंग करता है कि तांगे में जुड़ गया है.

और फिर एक पत्र आया. उसके घर लड़का हुआ था. उसे अफसोस था कि वह उसे अपना लड़का दिखाने जल्दी नहीं आ सकती थी, लेकिन लड़का बहुत सुन्दर था.

आदत से मजबूर, वह अब भी उसकी तस्वीर अपनी आंखों के सामने लाता, पर

उसकी अब जो शक्ल उसे दिखती उसके साथ उसका लड़का होता. उस का गोल मटोल सिर और भूरे भूरे बाल धूप में चमक रहे होते और उन बालों के पीछे लड़की का मुख छुप जाता. हजार कोशिश करने पर भी वह लड़की के चेहरे को उस लड़के के सिर से अलग न कर सकता. आखिर झुंझला कर उसे आंखों के सामने से हटा देता.

अनुवादक : मुखबीर

●

काश्मीरी साड़ी, ताजमहल और कुतुबमीनार

● सुन्दरी उत्तमचन्दानी

'चुप हो जाओ, वह आ रही है.'

'गोपाल जी, मैंने सब सुन लिया है. अब एक्टिंग की जरूरत नहीं है.' शीला ने कमरे में दाखिल होते हुए कहा.

'अच्छा भाभी, भला बताओ तो सही क्या ?' गोपाल ने सेक्रेटेरियट टेबल पर रखते हुए पूछा.

'यही तो कि तुम सब लोगों को चुप रहने के लिए कह रहे थे'

'तब तो तुमने खाक भी नहीं सुना' गोपाल ने फिर सेव करना शुरू कर दिया कमरे में बैठे हुए सब लोग खिलखिला कर हंस पड़े.

'अच्छा, तो सब लोगों ने मिलकर मुझे चिढ़ाने की साजिश की है, तो मैं भी तुम्हारे साथ हंसती हूँ. गई न तुम्हारी साजिश बेकार ?'

'बस भी करो शीला, बहुत हुआ अब जरा जल्दी से तैयार हो जाओ, वरना कान्फ्रेंस में जाने में देर हो जाएगी." शीला के पति राम ने कहा

'नहीं, पहले मुझे बताओ कि क्या बात हो रही थी ?'

बिस्तर लपेटते हुये लक्ष्मण बोला—'बड़ी चालाक हो, बात सुनने के लिए दम निकला जा रहा है और कहती हो हमारी साजिश बेकार गई.'

शीला का चेहरा शरम के मारे पानी-पानी हो रहा था. फिर भी प्रकट न करने के लिए बालों में इस तरह कंघी करने लगी मानो उसे कोई चिन्ता नहीं.

भगवन्ती जो अब तक अपनी हंसी रोके बैठी थी, शीला की सूरत देखकर कहकहा मार उठी. शीला बिफर गई और दौड़ कर भगवन्ती की चोटी पकड़ली, और बोली—

'सच बताओ, मेरी कौन सी बात पर तुम सब हंस रहे थे ?'

'उई—उई... अच्छा ठहरो, बताती हूँ.' कहती हुई भगवन्ती शीला के हाथों से अपनी चोटी छुड़ाकर उसे सहलाने लगी.

'तोबा-तोबा, इस बेचारी ने तुम्हारा क्या बिगाड़ा था ?'

'अब बहाना बाजी छोड़ो, ठीक-ठीक बताओ वरना...'

'सुनो शीला, बात तो मैं बताने की नहीं. हाँ, तुम्हारे पति ने एक शर्त हारी है और बस. !"

'बस की बच्ची!' कहती हुई शीला ने जैसे ही भगवन्ती की चोटी पर दोबारा हाथ डाला, उसकी ज़बान से निकल गया—"तुम अपने पति से चोरी छिपे इतने रुपये क्यों ले आई ?"

'तो यह बात है, मेरे पीछे मेरे बैंक की तलाशी ली गई है.'

राम चुपचाप खड़ा था. शीला ने पूछा—'आपने शर्त किस बात की हारी है ?'
'यह सब बाद में पूछना. पहले तैयार हो जाओ.' राम ने जवाब दिया.

'ऊं•••हूँ, पहले मुझे बताइए.'

'पगली मैंने समझा था, तुम मुझसे पैसे नहीं छुपाती, मगर दोस्तों की ज़िद थी कि स्त्री की प्रकृति कभी नहीं बदलती और मैंने भी शर्त रख ली.'

उसके बाद राम आहिस्ता से मुस्कराया. मगर शीला जान गई कि वह नाराज़ है.

लक्ष्मण बोला—"मगर बहन, तुम्हारे बैंक से रुपयों का निकलना कोई बड़ी बात तो नहीं. इधर हम सब की जेब खाली हो चुकी है. किशन कल ही बम्बई लौट रहा है. वह आज भी कान्फ्रेन्स में पैदल गया है.'

शीला के हाथ से कंघी गिर पड़ी. ज़मीन से कंघी उठाते हुए बोली—'हाय राम, ऐसी कड़ाके की सर्दी में चार मील पैदल ?'

गुलाब ने अपनी टाई ठीक करते हुए कहा—'मुझे अगर मालूम होता कि देहली में खाने-पीने और किराये-भाड़े पर इतना खर्च आयेगा तो एशियाई तो क्या मैं दुनिया के लेखकों के भी कान्फ्रेन्स में भी नहीं आता. इस खर्च की वजह से तो मैं हर साल सफ़र की फैमिली पास रेलवे से नहीं लेता.'

कमरे का वातावरण गम्भीर बन गया था. कोई बूट के फीते बांध रहा था, तो कोई बालों में कंघी कर रहा था, किसी ने कमीज़ पहनते-पहनते कलम उठाकर शेर लिखना शुरू कर दिये थे, तो कोई किताब पढ़ने लगा था. मगर सब चुप से और एक किस्म की घुटन सी अनुभव होने लगी थी.

राम ने मौन को तोड़ते हुए कहा—

'क्यों विष्णु भगवान, तुम कब रजाई को छोड़ोगे ? अन्दर पड़े अपनी पार्वती को याद कर रहे हो या कोई कहानी सोच रहे हो ? जल्दी उठो, अभी तो तुम दाढ़ी पर एक रन्दा लगाओगे.'

सिन्धी कहानी

काश्मीरी साड़ी, ताजमहल और कुतुबमीनार

● सुन्दरी उत्तमचन्दानी

'चुप हो जाओ, वह आ रही है.'

'गोपाल जी, मैंने सब सुन लिया है. अब एक्टिंग की जरूरत नहीं है.' शीला ने कमरे में दाखिल होते हुए कहा.

'अच्छा भाभी, भला बताओ तो सही क्या ?' गोपाल ने सेफ्टीरेज़र टेबल पर रखते हुए पूछा.

'यही तो कि तुम सब लोगों को चुप रहने के लिए कह रहे थे.'

'तब तो तुमने खाक भी नहीं सुना.' गोपाल ने फिर शेव करना शुरू कर दिया. कमरे में बैठे हुए सब लोग खिलखिला कर हंस पड़े.

'अच्छा, तो सब लोगों ने मिलकर मुझे चिढ़ाने की साजिश की है, तो मैं भी तुम्हारे साथ हसती हूँ. गई न तुम्हारी साजिश बेकार ?'

'बस भी करो शीला. बहुत हुआ अब जरा जल्दी से तैयार हो जाओ, वरना कान्फ्रेंस में जाने में देर हो जाएगी." शीला के पति राम ने कहा.

'नहीं, पहले मुझे बताओ कि क्या बात हो रही थी ?'

बिस्तर लपेटते हुये लक्ष्मण बोला—'बड़ी चालाक हो, बात सुनने के लिए दम निकला जा रहा है और कहती हो हमारी साज़िश बेकार गई.'

शीला का चेहरा शरम के मारे पानी-पानी हो रहा था. फिर भी [illegible] के लिए बालों में इस तरह कंघी करने लगी मानों उसे कोई चिन्ता नहीं.

भगवन्ती जो अब तक अपनी हंसी रोके बैठी थी, शीला की सूरत देखकर [illegible] मार उठी. शीला बिफर गई और दौड़ कर [illegible] पेटी [illegible], और बोली—

'सच बताओ, मेरी [illegible]

'सुनो शीला, बात तो मैं बताने की नहीं. हाँ, तुम्हारे पति ने एक शर्त हारी है और बस. !"

'बस की बच्ची!' कहती हुई शीला ने जैसे ही भगवन्ती की चोटी पर दोबारा हाथ डाला, उसकी जुबान से निकल गया—"तुम अपने पति से चोरी छिपे इतने रुपये क्यों ले आई ?"

'तो यह बात है, मेरे पीछे मेरे बैंक की तलाशी ली गई है.'

राम चुपचाप खड़ा था. शीला ने पूछा—'आपने शर्त किस बात की हारी है ?'
'यह सब बाद में पूछना. पहले तैयार हो जाओ. ' राम ने जवाब दिया.

'ऊँ'''हूँ, पहले मुझे बताइए.'

'पगली मैंने समझा था, तुम मुझसे पैसे नहीं छुपाती, मगर दोस्तों की ज़िद थी कि स्त्री की प्रकृति कभी नहीं बदलती और मैंने भी शर्त रख ली.'

उसके बाद राम आहिस्ता से मुस्कराया. मगर शीला जान गई कि वह नाराज़ है.

लक्ष्मण बोला—"मगर बहन, तुम्हारे बैंक से रुपयों का निकलना कोई बड़ी बात तो नहीं. इधर हम सब की जेब खाली हो चुकी है. किशन कल ही बम्बई लौट रहा है. वह आज भी कान्फ्रेन्स में पैदल गया है.'

शीला के हाथ से कंघी गिर पड़ी. ज़मीन से कंघी उठाते हुए बोली—'हाय राम, ऐसी कड़ाके की सर्दी में चार मील पैदल ?'

गुलाब ने अपनी टाई ठीक करते हुए कहा—'मुझे अगर मालूम होता कि देहली में खाने-पीने और किराये-भाड़े पर इतना खर्च आयेगा तो एशियाई तो क्या मैं दुनिया के लेखकों के भी कान्फ्रेन्स में भी नहीं आता. इस खर्च की वजह से तो मैं हर साल सफ़र की फैमिली पास रेलवे से नहीं लेता.'

कमरे का वातावरण गम्भीर बन गया था. कोई बूट के फीते बांध रहा था, तो कोई बालों में कंघी कर रहा था, किसी ने कमीज पहनते-पहनते कलम उठाकर शेर लिखना शुरू कर दिये थे, तो कोई किताब पढ़ने लगा था. मगर सब चुप थे और एक किसम [illegible]न सी आ[illegible] थी.

राम ने [illegible]

'क्यों [illegible] पड़े अपनी पार्वती को [illegible]ो, अभी तो तुम दाढ़ी

विशन ने रजाई फेंकते हुए कहा—'दाढ़ी तो भैया रात को ही बनाकर सोया था.'

'और स्नान ?'

'ऐसी सर्दी में रोज थोड़े ही नहाया जाता है.'

'तो गई छुट्टी. तब तो पांच मिनट और सो लो.' राम हंसते हुए बोला.

विशन फिर नहीं सोया. उठकर वाश्बेसिन में जाने की तैयारी करने लगा.

शीला कहने को तो बालों में कंघी कर रही थी, मगर उसके दिमाग में सुबह का दृश्य घूम रहा था. वह सवेरे नल पर ••—••••••करने गई तो विशन उससे पहले ही वहां खड़ा दातून कर रहा था. उसकी नजरें जमीन में गड़ी हुई थीं. शीला ने पूछा, विशन आज तुम उदास क्यों हो ?

विशन ने थोड़ी देर के लिए अपनी लाल-लाल आंखें ऊपर उठाईं और बोला—मैं आज मर गया हूं. और दातून फेंककर कुल्ला करता हुआ जल्दी-जल्दी चला गया. उस समय तो शीला विशन के मर जाने की बात नहीं समझ सकी थी, मगर अब उसके कानों में कोई चीख-चीख कर कह रहा था कि आज विशन के सहकर्मी मर चुके हैं. कान्फ्रेंस के पिछले पांच दिन विशन बराबर हंसता-हंसाता रहा था. दो दिन पहले विशन ने ही तो कहा था—

'मैं यहां कुतुबमीनार जरूर देखूंगा.'

दोनों ने जब पूछा था किसलिए ?

विशन ने जवाब दिया था—

"दिल कहता है कि जो दुनिया मुझे अब तक गरीब की आंखों से [illegible] देखती रही है उसे मैं कुतुबमीनार पर चढ़कर अपने से बहुत नीचे देखूं."

दोनों ने खूब-खूब हंसकर [illegible] आसमान पर उठा लिया था, और विशन भी खुश हुआ था. एक ने तो यह भी कहा था कि विशन कुतुब पर पहुंच कर सचमुच एक बड़ा शेर बनेगा

थोड़ी में विशन खाते हुए शीला की आंखों में आंसू आ गए. फिर भी हिम्मत करके कहने लगी— 'विशन आज इतनी दूर देख सका, क्योंकि उसकी [illegible] और मेरे देश में एक छोटा सा बच्चा है, जिसमें [illegible] [illegible] छिपी हुई है, [illegible] की [illegible]."

'सभी जानता, आज का [illegible] है लेकिन और [illegible] के लिए [illegible] होते जाते हैं, और मैं उनके [illegible] [illegible] कि [illegible] किसी को [illegible] से छुट्टी दे दी जाए"

'सुनो शीला, बात तो मैं बताने की नहीं. हाँ, तुम्हारे पति ने एक शर्त हारी है और बस. !"

'बस की बच्ची!' कहती हुई शीला ने जैसे ही भगवन्ती की चोटी पर दोबारा हाथ डाला, उसकी ज़बान से निकल गया--"तुम अपने पति से चोरी छिपे इतने रुपये क्यों ले आई ?"

'तो यह बात है, मेरे पीछे मेरे बैंक की तलाशी ली गई है.'

राम चुपचाप खड़ा था. शीला ने पूछा--'आपने शर्त किस बात की हारी है ?'
'यह सब बाद में पूछना. पहले तैयार हो जाओ.' राम ने जवाब दिया.

'ऊँ...हूँ, पहले मुझे बताइए.'

'पगली मैंने समझा था, तुम मुझसे पैसे नहीं छुपाती, मगर दोस्तों की ज़िद थी कि स्त्री की प्रकृति कभी नहीं बदलती और मैंने भी शर्त रख ली.'

उसके बाद राम आहिस्ता से मुस्कराया. मगर शीला जान गई कि वह नाराज़ है.

लक्ष्मण बोला--"मगर बहन, तुम्हारे बैंक से रुपयों का निकलना कोई बड़ी बात तो नहीं. इधर हम सब की जेब खाली हो चुकी है. किशन कल ही बम्बई लौट रहा है. वह आज भी कान्फ्रेन्स में पैदल गया है.'

शीला के हाथ से कंघी गिर पड़ी. ज़मीन से कंघी उठाते हुए बोली--'हाय राम, ऐसी कड़ाके की सर्दी में चार मील पैदल ?'

गुलाब ने अपनी टाई ठीक करते हुए कहा---'मुझे अगर मालूम होता कि देहली में खाने-पीने और किराये-भाड़े पर इतना खर्च आयेगा तो एशियाई तो क्या मैं दुनिया के लेखकों के भी कान्फ्रेन्स में भी नहीं आता. इस खर्च की वजह से तो मैं हर साल सफ़र की फैमिली पास रेलवे से नहीं लेता.'

कमरे का वातावरण गम्भीर बन गया था. कोई बूट के फीते बांध रहा था, तो कोई बालों में कंघी कर रहा था, किसी ने कमीज पहनते-पहनते कलम उठाकर शेर लिखना शुरू कर दिये थे, तो कोई किताब पढ़ने लगा था. मगर सब चुप थे और एक किसम की घुटन सी अनुभव होने लगी थी.

राम ने मौन को तोड़ते हुए कहा--

'क्यों विष्णु भगवान, तुम कब रजाई को छोड़ोगे ? अन्दर पड़े अपनी पार्वती को याद कर रहे हो या कोई कहानी सोच रहे हो ? जल्दी उठो, अभी तो तुम दाढ़ी पर एक घण्टा लगाओगे.'

"तोबा, काश कोई सूरत पढ़ना न जानता. अब तो तुमसे कुछ छुपाये नहीं बनेगा." सीता पति के चेहरे की तरफ देखकर मुस्कराने लगी, और धीरे से बोली—किशन को कुतुबमीनार और भगवन्ती को ताजमहल देखने की इच्छा है. और मुझे काश्मीरी साड़ी पहनने की आकांक्षा है. मगर मेरे बटुए में इतनी रकम कहां जो सब की इच्छा पूरी हो सके."

राम के बगल में बैठा हुआ लक्ष्मण बोला—

"मेहरबानी करके बातें घर में चलकर कीजिएगा. यह लेक्चर हाल है."

मगर सीता भाषण न सुन सकी. वह कल्पना कि दुनिया में उड़ती हुई अपने बम्बई वाले छोटे से घर में पहुंच गई जहां उसकी सहेली निम्मी अपनी काश्मीरी साड़ी का आंचल सीता के कंधे पर फैलाये हुये कह रही थी—"ऐसी एक साड़ी अपने लिए देहली से जरूर लेती आना. दोनों सहेलियां एक जैसी साड़ी पहन कर ठाठ से घूमेंगी."

वह पता नहीं कब तक इस विचार में डूबी रहती कि राम ने ईयर-फोन उठाकर उसके कानों पर लगा दिया—रूसी लेखक कह रहा था—

"हमारे देश में लेखक को लिखने के लिए रोजगार और किताबें छपवाने की चिन्ता नहीं करनी पड़ती••••••••••"

सीता की नजरें झट किशन की तरफ उठ गई, जिसकी आंखें रोजी की तलाश में भटकते-भटकते अन्दर को धंस गई थी. सीता फिर भाषण सुनने में लीन हो गई.

" ••••••हमारे यहां कोई भी साहित्यकार, कवि या लेखक, कोई ऐतिहासिक इमारत ••• ••• ••• ••• देखना चाहे तो उसका प्रबन्ध हमारी सरकार करती है. लेखक को उसकी चिन्ता नहीं करनी पड़ती ••• ••• •••"

सीता की आंखें पास में बैठी हुई सहेली के चेहरे पर पड़ गई ••••••••—भगवन्ती ने सिर नीचा करते हुए पूछा •••   ••• ••• फिर क्या देखने लगी मेरे चेहरे पर ?"

सीता ने भगवन्ती के हाथ पर आहिस्ता से थपकी मारते हुए पूछा—"तुम शाहजहां और मुमताजमहल के प्रेम का दृश्य देखना चाहती हो ना ?"

"नहीं सीता, मैं शाहजहां और मुमताजमहल के प्रेम का दृश्य देखना नहीं चाहती." भगवन्ती ने जवाब दिया.

सीता हैरान होकर भगवन्ती की तरफ देखने लगी ••• ••• •••

"मैं तो उन मजदूरों के हाथों की कारीगरी का दृश्य देखना चाहती हूं जो मेरे

लक्ष्मण के हाथों की तरह प्यारे थे, जिन्होंने झोंपड़ियों के अन्दर रहनेवाली प्रेमिकाओं को जीवित रखने के लिए और अपने मासूम बच्चों को सर्दी से बचाये रखने के लिये दिन रात मेहनत करके इस प्रेम की समाधि को खड़ा किया था. मैं उन हाथों की मेहनत को ही देखना चाहती हूं, शीलू."

शीला ने एक प्यार भरी नजर भगवन्ती पर डाली. और दिल ही दिल में सोचा- कितनी खूबसूरत इच्छा है--और उसने अपने दिल में एक फैसला कर डाला. उसने अनुभव किया कि उसके विचारों का तूफान एकाएक थम गया था. पर वह ध्यान से सभी साहित्यकारों के भाषण सुनती रही........

रात को कान्फ्रेन्स से लौट कर शीला ने कपड़े भी नहीं बदले. सबसे पहले जाकर अपने बैग से बटुआ निकाला. उसमें से कुछ रुपये निकाल कर किशन के बैग में डाल दिए.

सारे दोस्त कान्फ्रेन्स की कार्यवाही पर आलोचना करने में लीन थे. शीला ने भगवन्ती को बाहर ले जा कर उसकी साड़ी में बाकी रुपये बांध दिए.
भगवन्ती ने मुस्कराते हुये पूछा --"यह क्या ?'

"ताजमहल...—... ." शीला उससे ज्यादा कुछ न कह सकी. दोनों सहेलियां गले मिलीं, तो उनकी आंखों में निर्मल पानी झलक रहा था, और दिल में एक अनमोल खुशी उमड़ रही थी.

भगवन्ती के चले जाने के बाद शीला आंगन की ठंडी सीढ़ी पर बैठ गई. दूर बड़े कमरे से दोस्तों के कहकहों की आवाज़ वातावरण में कुछ गरमी पैदा करके वापिस चली जाती थी. अचानक किसी ने आकर उसके हाथों को पकड़ा, वह डर गई.

"अरे, इतने में डर गई." राम ने कहा.

शीला शरमा गई. राम उसके पास बैठ गया और बोला--

"यह बटुआ............मगर शीलू, तुमने मुझ से पैसे क्यों छिपाये ?"

शीला अपने होंठ काटते हुये बोली --"आपको उसकी वजह से शर्त हारनी पड़ी. मुझे इसका बहुत दुख है."

"मगर बटुआ तो खाली पड़ा है ?" "रुपये कहां गये ?"

"मैंने किशन और भगवन्ती को दे दिये."

राम खुशी से पागल हो उठा --"शीला का हाथ अपने हाथ में लेते हुये बोला--
"तो फिर मैंने दोस्तों से शर्त जीत ली."

अनुवादक : सुखवीर

उर्दू कहानी

दुआ

● मसऊद मुफ्ती

सदर बाजार में मेरी दुकान है . कुछ साल पहले तो मैं मनिहारीवाला कहलाता था लेकिन अब उन्नति करते-करते जनरल मर्चेन्ट बन गया हूँ—क्योंकि मुझे अपना कारोबार बढ़ाने का स्वप्न है और मैं नित नए प्रयोग करता रहता हूँ . जिस चीज़ में ज़रा से मुनाफे की भी सम्भावना नज़र आए, तुरन्त मंगवा कर दुकान में रख लेता हूँ . अगर चल निकली तो ठीक नहीं तो जैसे-तैसे बेच-बट कर पीछा छुड़ा लिया . और इसीलिये मेरी दुकान पर हर प्रकार के ग्राहक आते रहते हैं—बच्चे बूढ़े, पुरुष, स्त्रियां, धनवान, निर्धन इत्यादि .

कुछ लोग मेरे स्थायी ग्राहक भी हैं जो अधिकतर पास—पड़ोस में रहते हैं दुकान से कुछ ही कदम के फासले पर जो मोड़ है वहां एक गिरजा है और शायद कान-वेन्ट भी . उसमें बहुत से पादरी और नन महिलायें रहती हैं ये लोग आपस में बात करते हुए किसी को फादर कहते हैं तो किसी को ब्रदर इसी प्रकार महिलायें एक दूसरी को मदर या सिसटर कह कर पुकारती हैं . मुझे मालूम नहीं कि कौन क्या है . मैं तो हर पादरी को 'सर' और हर नन को 'मिस साहिबा' कहता हूँ—क्योंकि मुझे मालूम है कि नन महिलायें आयु भर कंवारी रहती हैं .

मेरी दुकान में आम तौर पर ये सामूहिक रूप में आती हैं एक तो वैसे ही योरूपियन होने के कारण वे गोरी-चिट्टी और सुन्दर हैं इस पर उनका ढीला-ढाला सफेद और काला लिबास भी अपने आप में निराला होता है, इसलिये उन्हें देख कर आस-पास के बच्चे तथा अन्य लोग भी मेरी दुकान में आ जाते हैं और यों मुझे दोहरा लाभ हो जाता है . वैसे ये स्वयं बड़ी गम्भीर होती हैं . आपस में ज्यादा बात नहीं करती और शृंगार की कोई वस्तु खरीदना तो जैसे उनके लिये हराम है . केवल कुछ एक चीजों में ही उन्हें दिलचस्पी है . आईं, उनके दाम पूछे, पैसे दिये या अपने उधार के खाते में लिखवाए और चल दीं—सिवाए एक नन के जो उन सबसे भिन्न है .

वह आयु में उन सबसे छोटी है और सबसे सुन्दर और सभ्य भी . यही कोई बीस बाईस की होगी वह भी जब अपने ग्रुप के साथ होती है तो बहुत गम्भीर और बहुत ही कम बोलने वाली होती है और उनके साथ ही चीजें खरीद कर वापस चली जाती है लेकिन जब कभी अकेली आती है तो चीजें खरीदने के साथ-साथ

मुझसे खुल कर बात चीत भी कर लेती है—ऐसे समय में उसे वापस जाने की भी जल्दी नहीं होती . वह काफी देर तक मेरे पास खड़ी रहती है और इसीलिये वह मुझे उन सबसे ज्यादा पसन्द है .

एक दिन जब वह मेरी दुकान में आई तो उस समय दूसरा कोई ग्राहक नहीं था और मैं अपने सामने काऊंटर पर तस्वीरें फैलाए बैठा था . ये तस्वीरें मैंने फिल्मी पत्रिकाओं से काटी थीं ताकि एक ऐसा एलबम बनाऊं जिसमें मेरी प्रिय अभिनेत्रियों के अच्छे-अच्छे पोज हों . कोई और ग्राहक होता तो शायद मैं ये तस्वीरें छुपा लेता लेकिन उसे देखकर मैंने उन्हें वैसे ही काऊंटर पर पड़े रहने दिया और उससे पूछा "क्या चाहिये मिस साहिबा ?"

"ओ नाटी !" वह मेरे प्रश्न का उत्तर देने की बजाय तस्वीरों की ओर देखकर बोली "यह क्या करना है ?"

"एलबम बनाना है मिस साहिबा ."

"एलबम ! वो क्यों ?"

"दिल खुश करने को······मिस साहिब" मैंने हँस कर कहा .

"न न न" वह दायें हाथ की पहली उंगली से मना करती हुई बोली "दिल खुस करना बुरी बात है—बहुत बुरी ."

"बुरी क्यों है मिस साहिब ?" मैं उस समय मज़ाक के मूड में था .

"बहुत बुरी" उसने फिर कहा और गले में लटकी हुई सलीब को हाथ में पकड़ कर बोली "दिल पर कन्ट्रोल करो—पूरा कन्ट्रोल ."

"और मिस साहिबा ! अगर दिल न माने ?" मैंने हँस कर पूछा .

"तो दुआ पढ़ो ."

"कौन सी दुआ ?"

"हमारा बाईबल में बहुत दुआ है . दिल न माने तो हम फौरन पढ़ता है .

"मिस साहिबा, हमें भी बताइये ."

"तुम अपना दुआ पढ़ो, अपना रेलीजन का······मगर दुआ जरूर पढ़ो . इससे बुरा बात दिल से निकल जाता है ."

और उसने सारी तस्वीरें इकट्ठी करके कोने में डाल दी . लेकिन उसके जाने के बाद मैंने पुनः उठा ली और एल्बम में सजाने लगा .

ऐसी ही बातों के कारण वह मुझे पसन्द थी और मैं उसकी कई ऐसी बातें भी

नज़र अन्दाज़ कर देता था जो अगर कोई दूसरा ग्राहक करता तो मैं कभी सहन न कर पाता . दरअसल उस की आदत थी कि जब कभी वह अकेली आती थी तो अपनी आवश्यकता की वस्तु खरीदने के बाद वह दुकान में इधर-उधर घूमती रहती थी और ऐसी वस्तुओं के दाम पूछती रहती थी जो न कभी उसने पहले खरीदी थी और न ही कभी खरीदती थी. कोई अन्य ग्राहक यदि ऐसी हरकत करता तो मैं आपे से बाहर हो जाता लेकिन उस से मैंने कभी शिकायत नहीं की . मैं जानता था कि नन महिलायें कभी सुर्खी पाउडर आदि नहीं खरीदती लेकिन जब वह उन के बारे में भी पूछती तो मैं बड़ी तफसील से बताने लग जाता और लुत्फ की बात यह थी कि उस के अधिकतर प्रश्न इन्हीं वस्तुओं के बारे में होते थे .

"वो क्या है ?" वह शेल्फ में रखे हुए किसी सुन्दर से डिब्बे की ओर संकेत करती .

"वो कोटी है, सिस्टर साहिबा "

"कोटी क्या ?"

"ये पाउडर होता है "

"अच्छा ! ज़रा दिखाओ "

"मैं शेल्फ का शीशा हटाता, डिब्बा निकालता, झाड़न से पोछता और उसके सामने रख देता . वह उसे उलट पलट कर देखती बड़े लगाव से उस की चिकनी सतह पर हाथ फेरती . दाम पूछती और फिर बेदिली से वापिस कर देती .

"कोई और भी ब्राण्ड है ?" वह पूछती

मैं बड़ी प्रसन्नता से क्यूटीक्यूरा या ईवनिंग इन पेरिस का डिब्बा निकाल कर उसे दे देता जो वह उसी प्रकार देखने के बाद वापिस कर देती इसी प्रकार उसने मेरी दुकान में पड़ी हुई लग भग हर लिपस्टिक, सुर्खी, इत्र आदि चीजों का निरीक्षण किया था और दाम पूछ कर वापिस कर दी थीं—हां, बाहिर निकलते समय वह उस शेल्फ पर एक नज़र ज़रूर डाला करती थी .

उसे छोटी बच्चियों से भी बहुत लगाव था उस की उपस्थिति में यदि कोई बच्ची दुकान में आ जाती और आश्चर्य से उस के काले लिबास, सफेद सिरबन्द और गले में लटकती हुई चमकीली सलीब की ओर देखती तो नन सहसा मुस्करा देती. बच्ची के सिर पर स्नेह से हाथ फेरती और पूछती "बच्चा क्या देखता है ?" और बच्ची लज्जा कर इधर-उधर सरक जाती.

एक दिन मेरी दुकान में एक छः सात साल की बच्ची आई वह बड़ी सुन्दर और गोल मटोल थी . उसके भूरे सुनहरे बाल सोने की झालर की तरह लटक

रहे थे और कुछ उलझे हुए भी थे . अभी वह सोच ही रही थी कि वह नन आ गई . कुछ देर तक तो वह उस बच्ची की ओर देखती रही और फिर उस ने मेरे शोकेस में से एक लाल रिबन खुद निकाला . आधे गज का टुकड़ा उसने खरीदा और बच्ची के बालों में बांध दिया . वह शायद बच्ची को प्यार भी करती लेकिन वह अपना लाल रिबन अपनी हमजोलियों को दिखाने के लिए इतनी उत्सुक हो उठी थी कि हुमक कर उस की बांहों में से निकल कर सरपट बाहर की ओर भाग गई .

कुछ दिन बाद एक और मजेदार घटना घटी , मैं बिक्री के लिए काफी मात्रा में टाफी और ड्राप्स ले आया था लेकिन उनके बिकने की रफ्तार काफी सुस्त निकली . अतएव बच्चों को लुभाने के लिए मैंने एक नया तरीका सोचा . गाढ़े लाल रंग की घटिया सी नाखून-पालिश की एक शीशी खोली और जो बच्चा कोई भी सौदा खरीदने आता, मैं उसकी एक उंगली के नाखून पर पालिश लगा देता . शर्त यह थी कि जब वह बच्चा अगली बार आएगा तो दूसरी उंगली भी रंग दी जाएगी . बच्चे अपनी उंगलियां रंगवाने के लिए बार बार आते और उनके लिए सब से आसान खरीद टाफी या ड्राप्स की ही होती . मेरा स्टाक जल्द-जल्द समाप्त होने लगा ••• —

उन्हीं दिनों एक बार जब वह नन अकेली शापिंग करने आयी तो उसकी उप-स्थिति में छः-सात बच्चों का एक ग्रुप आ पहुँचा और उन सबने अपनी-अपनी उंगलियां मेरे सामने फैला दी. मैं प्रत्येक की उंगली पर पालिश लगाता रहा लेकिन उन्होंने शोर मचाना शुरू कर दिया कि दो-दो नाखून रंगे जायें. मैं इन्कार करता रहा और वो शोर मचाते रहे. इस सारे तमाशे को नन बड़ी दिलचस्पी से देखती रही और हंसी के मारे लोट-पोट होती रही . अन्त में उसने सिफ़ारिश की कि इतने ग्राहकों के एक साथ आजाने से दो उंगलियों की मांग अनुचित नहीं . अब इस सिफ़ारिश को कौन काफिर रद्द कर सकता था . अतएव मैंने तुरन्त सभी के दो-दो नाखूनों पर पालिश कर दिया . बच्चे तालियां बजा-बजा कर उछलने-कूदने लगे . ऐसे प्रसन्नता के वातावरण में न जाने मुझे क्या सूझी कि मैंने कहा "लाइये मैं मिस साहिबा, आप के नाखून भी रंग दूं ."

उस समय वह हंसी से दोहरी हुई जा रही थी . उसी प्रकार हंसते-हंसते अना-यास ही उसने अपना हाथ आगे बढ़ा दिया. लेकिन जब मैंने ब्रुश डुबा कर बाहर निकाला तो उसने एक दम हाथ पीछे खींच लिया . उसकी मुस्कराहट गायब हो गई और उसके होंठ जल्दी जल्दी हिलने लगे .

मैंने हंस कर कहा "मिस साहिबा, आप अपनी बाइबल की दुआएं पढ़ रही हैं

क्या ?"

इस पर उसने भयभीत-सी होकर गले में लटकी हुई सलीब को थाम लिया, उंगली से सीने पर त्रास का निशान बनाया और लगभग भागती हुई दुकान से निकल गई.

इसके बाद वह कई दिनों तक गायब रही. फिर एक बार दूसरी नन महिलाओं के साथ ग्रुप में आई और उन्हीं की सी गंभीरता के साथ सौदा खरीद कर चली गई. अब उसने मेरी दुकान में आना बहुत कम कर दिया था और अकेले आने का तो शायद उसने विचार ही छोड़ दिया था

काफी समय बाद, एक दिन जब दुकान में कोई ग्राहक नहीं था और मैं दीवार में विशेष रूप से बनाया हुआ छोटा दरवाजा खोल कर भीतर गोदाम की चीजों को ठीक कर रहा था और मुझे वहां से दुकान का काफी भाग नजर आता था और मैं अंधेरे में था --एकाएक मैंने नजर उठाकर देखा तो वह काले लिबास में सुसज्जित शोकेस के सामने खड़ी नकली मोतियों का एक हार देख रही थी. मैं भीतर खड़ा चुपचाप उसकी ओर देखता रहा. कुछ देर बाद उसने साथ वाले शेल्फ से एक आईना उठाया और उसमें अपना चेहरा देखने लगी. फिर धीरे से सिर का कपड़ा जरा ऊपर सरकाया ताकि आईने में अपने बाल देख सके लेकिन जैसे ही मेरी आहट सुनाई दी, उसने आईना रख दिया और गोदाम में खुलने वाले दरवाजे की ओर देखने लगी. मैं बाहर आया तो उसके होंठ हिल रहे थे --शायद वह होंठों ही होंठों में दुआ पढ़ रही थी--फिर उसने बड़ी गंभीरता से कुछ सूइयां और धागे खरीदे और चली गई.

मैं अपना कारोबार बढ़ाने के सिलसिले में नए-नए प्रयोग करता ही रहता था. कुछ मित्रों के कहने पर मैंने मक्खन, डबल रोटी, केक, रस और बिस्कुट इत्यादि कई चीजें दुकान में भरलीं और इनसे मुझे पर्याप्त आय भी होने लगी.

एक दिन वही नन दुकान पर अकेली आई. उसने जो चीजें मांगी थीं, उन्हें लाने के लिए मैंने अपने कर्मचारी को गोदाम में भेज दिया था और वह काऊंटर के पास खड़ी प्रतीक्षा कर रही थी कि इतने में एक फौजी सिपाही दुकान में आया और उसने मुझ से डबल रोटी मांगी

मैंने बक्स खोल कर डबल रोटी निकाली और पत्थर की सिल पर रख कर टोस काटने के लिए छुरी उठाई लेकिन फौजी ने मुझे रोक दिया. फिर उसने हाथ से डबल रोटी को दबाया और कहने लगा यह डबल रोटी सख्त है कोई नर्म-सी दो. मैंने दूसरी निकाली. फौजी ने उसे हाथ में लेकर दबाया तो उस की उंगलियां भीतर धंस गईं. वह कहने लगा "असल में डबल रोटी मुझे कल के लिए चाहिए

और कल तक यह बिल्कुल लोहा बन जाएगी . इस लिए कोई इससे भी नर्म निकालो ."

दूसरा बक्स खोल कर मैं बिल्कुल ताज़ा डबल रोटी निकाल लाया जो बहुत ही नर्म थी .

फौजी ने उसे पकड़ कर दबाया तो उस की उंगलियां उस में लगभग गायब हो गईं . डबल रोटी बिल्कुल पिचक गई . सिवाय उस उभार के जो अंगूठे और उंगूठे के साथ वाली उंगली के बीच से बाहर झांक रहा था . उस ने अपनी पकड़ ढीली की और एक दो बार फिर दबाकर कहने लगा—'यह ठीक है ."

जब उस ने डबल रोटी मेज़ पर रखी तो उसके पिचके हुए भाग धीरे धीरे बाहर को उभरने लगे .

जितनी देर तक वह फौजी सिपाही अपने मज़बूत हाथों की सख़्त पकड़ में डबल रोटियों को भींचता रहा, नन टकटकी बांधे उस के हाथ को देखती रही और उस के गालों पर लाली उभरती गई .

मैंने लिफ़ाफ़े में डबल रोटी डाली, फौजी को दी और वह चल दिया . जब मैं पुनः नन की ओर मुड़ा तो उसका चेहरा एक दम लाल हो चुका था और होंठ बड़ी तेज़ी से हिल रहे थे .

सौदा ले कर जब उसने मुझे पैसे दिये तो उस के हाथ बुरी तरह कांप रहे थे और वह मुझ से नज़रें चुरा रही थी .

उस के जाने के बाद मैं दूसरे ग्राहकों के साथ व्यस्त हो गया और उसे भूल गया . उससे अगले दिन की सुबह को अभी मैंने दुकान खोली ही थी कि वह मुझे सामने का मोड़ मुड़ती दिखाई दी . सड़क पार करके जब वह सीधी दुकान की ओर आ रही थी तो मुझे आश्चर्य हुआ क्योंकि इस से पहले वह कभी इतने सवेरे नहीं आई थी .

मैंने हंस कर कहा 'गुड मार्निंग मिस साहिबा !'

उसने बोलने की बजाय केवल सिर हिला कर उत्तर दिया. आम तौर पर जब कभी वह अकेली आती थी तो मुझसे खुलकर बात चीत करती थी लेकिन उस दिन वह कुछ खामोश और परेशान-सी थी. जब वह काऊंटर के पास आई तो उसका चेहरा मुझे ऐसा लगा जैसे सदियों से बीमार हो. आंखों के गिर्द काले घेरे गालों की ओर फैल रहे थे. मालूम होता था वह रात भर जागती रही थी . पास आकर उसने अपने खुश्क होंठों पर ज़बान फेरी और अपने ज़िम्मे निकलने वाले उधार का हिसाब पूछा- जब मैं कापी निकाल कर उसका हिसाब देख रहा था तो

वह घबराहट में उंगलियां चटखा रही थी.

'मिस साहिबा ! आप को हमारे ग्यारह रुपए पचीस पैसे देने है.'

उसने अपने ढीले लिबास में से एक रूमाल निकाला, उसे खोला तो भीतर नोटों का बंडल था. उसके पास इतनी रकम एक साथ देखने का यह मेरा पहला अवसर था. नोटों के उस बंडल में से उसने एक दस का और एक पांच रुपए का नोट निकाला और काउंटर पर रख दिया

दराज़ खोल कर बाकी पैसे निकालते-निकालते मैंने पूछा 'और कुछ चाहिये मिस साहिबा ?'

उसने एक झुर-झुरी सी ली और उत्तर देने की बजाय होंठ भींच कर इन्कार में सिर हिला दिया

मैंने बाकी पैसे वापस किए तो पचास पैसे का एक सिक्का उसके हाथ से गिर पड़ा, काउंटर पर किनारे के बल लुढ़कता हुआ सिरे तक गया. वहां से नीचे गिरा और लुढ़कता-लुढ़कता उस शेल्फ से जा टकराया जिसमें पाउडर और सुर्खी आदि चीजें रखी थीं. सिक्के के पीछे-पीछे मैं वहां तक गया, झुक कर सिक्का उठाया और जब मुड़ने लगा तो मैंने देखा, नन उस शेल्फ की ओर देख रही थी. काउंटर पर वापस आकर जब मैं वह सिक्का उसे देने लगा तो उसने हाथ नहीं बढ़ाया बल्कि एक बड़ी विचित्र हरकत की

उसने नोटों के बंडल में से दस रुपए का एक और नोट निकाल कर काउंटर पर रख दिया. बाकी नोट तह करके लिबास की सलवटों में कहीं छुपाए और फिर बाहर के दरवाजे की ओर देखा. वहां कोई नहीं था वह मेरी ओर बढ़ी. काउंटर के पास वाला तख्ता उठाकर भीतर घुस आई मेरे पास से गुजर कर शेल्फ तक गई. जल्दी से शीशे का दरवाजा हटाया पाउडर के दो डिब्बे, इत्र और नाखून पालिश की दो-तीन शीशियां उठाई. शेल्फ खुला छोड़ कर वापस मुड़ी और लगभग दौड़ती हुई दूकान से बाहर निकल गई.

इस घटना को हुए कई मास गुजर चुके है लेकिन उस दिन के बाद से वह मुझे उस इलाके में कभी नजर नहीं आई न जाने कहां चली गई है. मैंने कई बार दूसरी नन महिलाओं से उसके बारे में पूछा भी लेकिन जब कभी मैं उस नन का जिक्र करता हूं वे मुझे कोई उत्तर नहीं देतीं, बल्कि गले में लटकती हुई सलीब को थाम लेती है. उंगली से सीने पर क्रास का निशान बनाती है और उनके होंठ बड़ी तेज़ी से हिलने लगते है. ●

अनुवादक : प्रकाश पंडित

कन्नड कहानी

नये प्रकाश की लोरी

● श्रीकाँत

पतालीस की सीमा पर पहुँच कर जब उसने मुड़कर देखा तो उसे क्या देखने को मिला ?

बिस्तर कहलाने वाली चिथड़े की चादर पर सोये हुए छः बच्चों की कतार. (यद्यपि बड़ी की उम्र सोलह है, उसके लिए वह बच्ची ही जो थी !) उनकी आँखों में नींद का नशा, बिलकुल बेहोश . दीवार पर का मिट्टी के तेल का दिया, आँखें फाड़ फाड़ कर उनकी आकृति बना रहा था .

"ये सब मेरे ही कारण न ? इन सबों का सिरजनहारा मैं ही हूँ न ! (एक ज़माने में ये नही थे .)"

सवा पांच फुट वाला उसके भारी शरीर में रहने वाला वह मुट्ठी भर हृदय फूल कर बहुत धड़कने लगा अभिमान की नदिया में ज्वार आया, जो अंगुष्ठ के ऊपर से गाल के बालदार स्थल पर पहुंचा और वहां से भाल को लांघ कर रोमांच में परिवर्तित हुआ.

काठ-सा उसका बांया हाथ, आठ दिन पहले धोये हुए कुर्ते के भीतरी भाग तक पहुँचा और छाती की हड्डियों को गिनने लगा . (उसने छाती को अनेक वर्षों से दमे के लिए पनाह दे रखा था .)

फिर से---

जब यह सत्य नग्न हुआ कि सवा पांच फुट वाला, हड्डीदार छाती का, दमे का घोंसला काठ के हाथों का, दूसरे दर्जे के क्लर्क का वह शरीर. छः बच्चों के जनन का कारण है, तो---

बिस्तर पर पड़ा उसका शरीर उठ खड़ा हुआ . उसके ऊपर से ओढ़नी खिसक गयी और वह ---

टहलने लगा . (पैंतालीस वर्षों की वह घड़ी गुमराह हो कर धड़कने लगी .) सामने रसोई घर . सदियों पुराने डिब्बे . (उनका पौन भाग हवा से भरा होगा) वहीं खूँटी पर टंगी दो शुद्ध साड़ियां . रात को बच्चों के खा चुकने के बाद बाकी रहे बासी बरतन .

पैंतालीस वर्षों के पहले दो आँखों ने ससार को आशा भरी दृष्टि से देखा था.

आज भी वे दो आँखें। (किन्तु जीवन अब पैंतालीस की सीमा को पार कर चुका था.)

कभी की खरीदी एक जीर्ण पेटी, जिसके रंग को पहचान कर बताना किसी भी संशोधक के लिए असम्भव था। (उसमें दो गुदड़ियाँ, एक मणियों का हार, पहली के पैदा होते समय खरीदी हुई ऊन की टोपी, उसकी स्त्री की, पतंगों से जर्जर व झकोलवाली साड़ी.) उसके बगल में एक कोने में खड़ी एक छतरी। (धूप में खोलो तो उसके अन्दर से छन-छन सूर्य झांकने लगते.) रैक के ऊपर टंगा वह ऊनी कोट, जो इसका साक्षी दे रहा था कि किसी वर्ष में उसका विवाह हुआ था. उस कोट को ससुर ने दिया था. कोट का लालच दिखाकर ससुर ने उसके साथ और कुछ दिया था··· नारी का मुलायम हाथ

उस कोट को पहनकर उसने इसका पाणिग्रहण जो किया, सालिया वैसा और एक कोट सिलवाने का नसीब उसके माथे पर बदा नहीं था

उन मुलायम हाथों को पकड़ने के परिणाम-स्वरूप······एक कतार में सोये हुए थे ये छः······

तब उसे लगा कि हॉल की दो दीवारों के बीच वाला वह अंतर दो दिगंतों के बीच के अन्तर के जैसे है। पात्र फिसलने से लगे, जमीन उलटती-पुलटती लगी, उसमें वह, उसका जीवन, परिवार, सब कुछ, सबके सब मेरी गो राउंड में घूमते से दिखाई पड़े.

ससुर की दी हुई वह दूसरी चीज ···

वहीं, उस हॉल से सटे कमरे में, बन्द किवाड़, लोहे के सींखचों वाली खिड़की के पीछे से, बिखरे हुए बाल और बेमेल कपड़ों के साथ, उसीकी तरफ घूरकर देख रही थी—

ससुर की याद फिर आयी "पगली को मेरे गले मढ़ दिया पापी ने, चाण्डाल कहीं का!"

(विवाह के समय तो वह सुन्दर लगी थी! विवाह के बाद भी सात बच्चे हुए.)
"सभी सब पापी है; चाण्डाल है; अचरज यह है कि इन सबके कारण मैं खुद पागल नहीं हुआ."

उसी को एक टक देखती उस पगली की आँखें सजल हुईं, आँख की पुतलियाँ साफ पानी के सरोवर में डूब गयीं. वहां से प्रकाश की एक किरण चमक निकली, जो

गालों में घूमकर अधखिले होठों में से छूटने लगी——

"पापिन मुझी को देख कर हँस रही है. यदि वह मेरे मत्थे चढ़कर घर नहीं वसाती, तो मैं क्या जिन्दगी वसर नहीं कर सकता था ? इसके पीछे पड़ने के कारण ही मेरी यह हालत हुई है. सहस्र संतान वाली मनहूस कहीं की."

अधखिले वे होंठ अब पूरे खिल उठे. मुँह से हँसी का फौव्वारा छूट निकला.

वह पगली हँस पड़ी. खिलखिलाकर हँस पड़ी. उसमें स्थित नारी हँस पड़ी. उस नारी का हृदय मुक्त हो हँस पड़ा. जब हँसी की वह तरंग खिड़की के लौह सीखचों को पार कर उसके हृदय को सीधा भेदने लगी, तब वह वड़वड़ाने लगा ——

'हँसो, कंगालिन, मुझे देखकर हँसती हो न ? हड्डियों की इस छाती को देखो और हंसो. दम के इस घोंसले को देख कर हँसो. पेड़ तो वीज की तरह ही होगा न ? उसी तरह योग्य पिता की लायक पुत्री हो जो तुम."

"(वह अपने वाप से कितना प्यार करती थी. हमेशा, वाप को देखने के लिए लालायित रहा करती थी. विवाहित होकर मेरे घर आ जाने के दिन से यही एक ज़िद——कम से कम एक वार मुझे अपने वाप के पास भेजो कहकर ! परन्तु औरतों की वात सुनने के लिए क्या मैं पानवाला हूँ ? कदापि नही. एक दिन खत आया था कि उसका वाप वीमार है. सोचा कि दिखाने पर तंग करेगी. इसलिये उसे छिपा लिया. दूसरे दिन उसके उस वाप की मौत के वारे में भी पत्र आया. मन को दृढ़ वनाकर उसको भी छिपा डाला. (पुरुप के लिये कम से कम उतना अधिकार तो होना चाहिये.) वहुत दिनों के वाद वे सब पत्र उसके हाथ लगे. उस दिन से मुझसे द्वेप करने लगी. हमेशा मुझे घूरकर देखती - नफ़रत से हँसती ·········पापिन·········)

ज़मीन पर गतप्राण पड़े उसके विस्तर ने अपने वीर को वुलाया. सुस्त देह और जलता मन एक दूसरे से जूझते वहाँ लौट गये.

(जब तीसरा वच्चा पैदा हुआ, तब वह पगली हुई थी. उस दिन से लेकर इस छठे वच्चे के पैदा होने तक, उसको भी लेकर सवों को पाला पोसा था. समय समय पर उनका खाना, नाश्ता, कपड़ा आदि सव कुछ पूरे किये थे उसने. पुरुप कहलाने वाला वह प्राणी, औरत की तरह वरतन माँज कर, मुख पर कालिख [illegible] पने देकर, सुवह से शाम तक कोल्हू के वैल की तरह काम करता और इनके [illegible] मरता था.)

परिवार, मनहूस वच्चे और यह पगली पत्नी——किसने यह सौभाग्य मांगा

था . ? काश, पगली बन जाने के बाद इसके बच्चे पैदा नहीं होते . (एक बार उसने अपने आप को समझाया था कि इन बच्चों के लिए वही जिम्मेदार है)

तब उसके मुख पर पानी की छींटे पड़ने के जैसे भासित हुआ विचारों की रेलगाड़ी पटरियों पर से उतर गयी . पानी के स्रोत के बारे मे विचार करते हुए वह बायें हाथ से अपना मुख पोंछ रहा ही था कि उसने देखा कि वहीं बगल में सोयी हुई उसकी छठी कृति--केवल तीन बरसों वाली---के जांघों के बीच मे से एक फौव्वारा बुझ रहा था

'धत् तेरी"---गालियां देते हुए उसका पैतालीस बरस वाला पांव, उस तीन वर्षों के बच्चे की पीठ पर जा लगा .

आगे का सीन रोने चिल्लाने का था चीखना, चिल्लाता---गला फट जाने तक. उसका सिर फट जाने तक इसकी चिल्लाहट . (इस नाटक का प्रत्येक दृश्य उससे चिर परिचित था)

इस शोर मे, वहीं सोती उसकी बड़ी लड़की जाग उठी और तीन बरसा के उस बच्चे को अपने किशोर नारी हृदय से लगाया और बाप की ओर टक टक देखने लगी . (पहले भी अनेक बार उसने इसी तरह किया था .) बाद को उसे अपने बगल मे लिटा कर सोने लगी .

उसके बाप को लगा कि किसीने गालों पर जमाकर थप्पड़ मारे और दांत तोड़कर हाथ में दिये .

सबों की आंखों मे नफरत थी .

पैंतालीस की सीमा पर खड़े होकर जब उसने मुड़कर देखा ---

"पगली पत्नी, छः भूखे बच्चे किराये का घर, दमे का घोंसला, पुराने डिब्बे, रग पेटी, जालीदार छतरी"

सबों ने उसे देखा. नफरत से देखा उनकी आंखों मे व्यंग था, हंसी थी, ललकार थी .

उसको लगा कि अपनी देह को खुरच ले . सिर से बाल को निकाल ले . तब छाती मे दमे की टांय टांय वाली ढोल पीटने की आवाज निकल पड़ी .

---उसको लगा कि उसे अब जीते नहीं रहना चाहिये.

बाद को इन सब बच्चों का क्या होगा ? ---होगा सो होगा.

अपनी पत्नी का ? ---अपने बाप की तरह उसे भी घुटघुटकर मरने दो

"मुझे मरना चाहिये. सचमुच मरना चाहिये."

परन्तु मरे कैसे ? किसी भी तरह मरने वाले को मरने के रास्ते का पता क्यों चाहिये ?

रस्सी या पानी या विष--इनमें से कोई एक. यदि कुछ भी नहीं मिला तो आखिर ब्लेड का टुकड़ा, (क्या उससे भी खुदकशी करने वाले नहीं है ?) किसी भी प्रकार से मरना चाहिए. वह भी पौ फटने से पहले.

जब इस तरह मन मौत की सोच रहा था तब उस रोते बच्चे को अपनी बगल में लेकर सोयी हुई पहली लड़की ने कुछ अटपटी बातें बोलते हुए करवट ली. करवट लेते समय छाती के ऊपर ओढी हुई साड़ी सरक गयी और उस साडी का पौन भाग चौथे पर छा जाने में चूक गया.

उसने देखा. "यह लड़की नहीं, औरत हो रही है"--मन में कहने लगा--दूसरे पल में उसके सामने उस महान सत्य का पर्दाफ़ाश हुआ कि वह उस लड़की का बाप है. बहुत शर्मिदा हुआ वह.

किसी की हंसी की आवाज़ आयी. उसने मुड़कर देखा. वहां वह थी--खिड़की के सीखचों को पकड़कर इसी की तरफ़ देखते हुए हंस रही थी !
वह पगली हँसी ! उसका स्त्रीत्व हँसा. उसके स्त्री के हृदय कोने-कोने से हँसी का फौव्वारा छूटा और उन लौह-सीखचों को लांघकर आया...

उसकी छाती कांपने लगी. मैंने जो कुछ सोचा था वह सचमुच इसे मालूम हो गया है. वह देखो उसकी आंखों में, उनके मुख की प्रत्येक कहर में मेरे प्रति हास, व्यंग भरे पड़े हैं.

वह और हंसने लगी. बार-बार हँसने लगी. उसकी हँसी का फौव्वारा, लोह सीखचों को लांघकर इसको हड्डीदार छाती में सोते नाग के सामने बीन बजाने लगा.

वह उठ खड़ा हुआ...लपककर चला...उसकी तरफ़. (सवा पाच फुटवाला, हड्डीदार छाती का, दमे का रोगी, काठ का हाथ वाला, छः बच्चों का वह जनक--उन बच्चों की जननी की तरफ़ क्रोध से चल पड़ा !)
"तुझे पहले मारूंगा. बाद को मैं मरूंगा. पापिन..."
बन्द दरवाजा खुल गया. भीतर की स्त्री फिर हँस पड़ी. धावा बोलने वाले मर्द के क्रोधी हाथों को मिला था स्त्री का मुलायम शरीर...फिसलन फि...स...ल...न (आगे का छापा नहीं जा सकता)
जिस यांत्रिक को इति के रास्ते पर जाना था, उसको अथ ने रास्ता दिखाया था. "मेरी बाहुओं में यह क्या है ? पापिन कहीं की. धत्" कहते हुए उसने उस स्त्री

को धकेल दिया.

ज़मीन पर पड़ी वह स्त्री सामने खड़े उस पुरुष को देखकर हँसी. जब उसने अपनी आँखों में संसार की सारी मृदुता को संचित किया और पुतलियाँ उस तरल सरोवर में तैरने लगीं तब इसकी आंखों में क्या देखा ?

"नये प्रकाश की लोरी !"

—अनु० के० एस० रमानन्द

तेलगु कहानी

उस रात नींद ही न आई

● आचंट शारदा देवी

सारी दुनिया सुख की नींद सो रही हो लेकिन खुद को नींद न आवे, और वह भी जबकि बाजू के पलंग पर सोया हुआ व्यक्ति खुर्राटे भर रहा हो, कितने दुःख की बात है भला कहो.

उस रात नाटक देखने गये थे. नाटक देखते समय जो सिर का दर्द शुरू हुआ वह अब तक मिटा ही नहीं······जाने कैसा नाटक है······"वेनिफिट शो" था कहते हैं······हूँ · .

ऐरे-गैरे नत्थू खैरे मिलकर नाटक खेलकर , आराम से जीने वालों के सिर यह चपत न लगाये तो क्या हो,······"सिर्फ धर्मार्थ" कहकर क्या नाटक नहीं खेला जा सकता······?

हे भगवान ! नींद नहीं आती है तो जाने कहाँ-कहाँ के विचार चक्कर काटने लगते हैं. एक तो सिर दर्द और उस पर यह ढ़ेर से विचार······दिमाग चकरा रहा है.

जाने कैसी-कैसी पागल कल्पनायें आ रही हैं.

वह पूरा दिन याद आ रहा है. असल मे नाटक देखने की बात ही उन्होंने सोची न थी. सवेरे ही सवेरे मालती आ पहुँची. "सुनिये भाई साहब, आज कालेज में हम लोग नाटक खेल रहे हैं . "वेनिफिट शो" है . इसे देखने आपको अवश्य आना होगा "

"अं···—हां, हाँ ठीक है. ठीक है." यों ही ज़ोर जोर से हँसते हुए वे बोले. लिपस्टिक और जार्जेट देखते ही इन मर्दो की रही सही मति भी जाती रहती है.

"पच्चीस रुपये वाले दो टिकिट दे रही हूं"—मालती बोली.

रसोई घर में बातें सुनाई पड़ रही थीं. इसे सुना तो जैसे मेरी छाती पर पत्थर पड़ गया. यह मर्द लोग कितनी भी वाक्चातुरी दिखायें , कितना भी अधिकार जतायें, सब केवल पत्नी के पास ही. पराई स्त्रियों को देखा नहीं कि मंत्रमुग्ध से हो होंठ तक हिला नहीं सकते. चुपचाप कहीं टिकटें तो नहीं ले लेंगे. "भगवान जाने क्या करेंगे"—सोच ही रही थी कि वे भीतर आये.

"सुनो ! जानकी ! ! मालती आई है."

"हां, हां सब कुछ सुनाई दिया है. " कहिये कि आज दूसरा काम है. आ सकने की ज़रा भी संभावना नहीं है. अन्यथा न समझें और बुरा न मानें—कहकर चलता कीजिये.—अच्छा जाने दीजिये, मैं ही कह दूं."

"अरे नहीं, बेचारी बुरा मान जायेगी."

"तो फिर क्या करें ?"

"सुनो, तुम्हारे पास पचास रुपये हैं न, उसे दे दो. तुम्हारे लिए साड़ी तो बाद में भी खरीदी जा सकती है. वैसे अभी साड़ी की उतनी जरूरत भी तो नहीं है."··· जाने कब से वह साड़ी खरीदने की सोच रही हूं और अब क्या लोकाचार के लिए तकलीफ सही जाये ?

जो कुछ भी होता है सब मेरे ही मत्थे पड़ता है घूम फिर कर. नहीं तो क्या, उन्हें कहीं तकलीफ न हो जाये, सोचकर हर चीज के सिलसिले में मैं अपने को हर परिस्थिति के अनुकूल ढालती जाती हूं बाप रे ! कितने दिनों से मैं उस गुलाबी रंग की साड़ी को खरीदने का प्रयत्न कर रही हूं सच कहूं तो उन्हें वह रंग ही पसन्द नहीं है. इसीलिए तो, हमेशा किसी न किसी बहाने खरीदने की बात पीछे हटती जाती है.······

"अच्छा आपकी मर्जी. सुनिये, एक ही टिकट खरीदियेगा. मेरा आना न हो सकेगा. मैंने सुब्बुलक्ष्मम्मा को वचन दिया है कि आज मैं उनके साथ सिनेमा देखने जाऊंगी. अगर मैं नहीं जाऊंगी तो उन बेचारी का जाना भी रुक जायेगा."

"ऊंहू—. कहां की बात की तुमने जाने भी दो. आज उनके साथ सिनेमा देखने न भी जा सको तो क्या, आगे फिर कभी देख लेना."

इधर सुब्बुलक्ष्मम्मा की हालत यह है कि जब तक ऐड़ी चोटी का जोर लगा कर प्रयत्न न करें तब तक उनका घर से बाहर निकलना नहीं हो पाता. आज मेरे कारण उनके सारे किए पर पानी फिर जायेगा साथ आने का वचन देकर अब मैं न जाऊं तो वे न जाने क्या सोचेंगी

इधर नाटक खेला जा रहा था और उधर पूरे समय मेरे मन में यही विचार आ रहे थे. "मालती को वचन दिया है न कि नाटक देखने अवश्य आयेंगे. फिर यदि न आयें तो कैसे भला लगेगा."—उनकी ज़िद.

मैंने भी तो सुब्बुलक्ष्मम्मा से अवश्य आने का वादा किया था, क्या इस बात की कोई कीमत नहीं ? बेचारी पढ़ी लिखी जो नहीं है. उनको दिया हुआ वचन पूरा हुआ तो क्या और न हुआ तो क्या.

असल बात यह है कि उनके साथ मेरी मैत्री हो, यह उन्हें फूटी आंख नहीं सुहाती.···

"...उनके साथ क्या बातें करनी हो जी . सारे वक्त चूल्हे चौके की बात के और वहां है भी क्या."......कितनी तीखी अवहेलना !

......पढ़ी लिखी औरतें सारे वक्त जाने किस विषय पर बातें करती होंगी. सच देखो तो यह पढ़े लिखे पुरुष लोग ही आखिर सारे समय किस विषय पर बातें करते होंगे. चौबीस घंटे सिर्फ अपने आफिस की ही बातें करते हैं.—और नहीं तो क्या. जब सारा दिन आवश्यक रूप से रसोई घर में ही बीतता हो तो और किस विषय के बारे मे बातचीत हो सकती है, भले ही कोई कितनी भी पढ़ी लिखी क्यों न हो.

घर की ड्योढ़ी तक एक बार झांक आने के लिए पल भर का समय तो मिलता नहीं है.......बेर सबेर कोई न कोई मित्रजन पधारते ही रहते हैं—काफी पीने, भोजन करने... . कितनी बार ऐसा नहीं हुआ है कि अपने लिए लगाई हुई थाली अचानक आये हुए अतिथि को परोस कर अपने लिए नये सिरे से फिर से रसोई बनानी पड़ी है. रात के चाहे नौ भी क्यों न बजे हों पर यदि कोई महाशय आये नहीं कि काफी के लिए फिर चूल्हा जलाना पड़ता ही है. यह मित्र वर्ग बातचीत करने आता है कि काफी पीने......भगवान जानता है. हूं—अपनी अपनी सनक जो ठहरी भरपेट भोजन कर जाने वालों को काफी पिलाने की भला क्या आवश्यकता है.

हूँ ...अतिथि सत्कार है !... यदि कुछ कहूँ तो कहते हैं कि—"तुम्हारी तो सारी रीत ही पुराने ढ़ग की है तुम क्या जानो आजकल की पद्धति"...बाप रे बाप, क्या अहम् है

विचार करते करते जानकी को लगा कि वे वास्तव में उसके प्रति अन्याय कर रहे हैं. उन्हें यह क्यों नहीं लगता कि मेरी भी अपनी कुछ कल्पनाएें, आशा—आकांक्षायें रहती है. यदि यह पूरी न हुई तो किसी न किसी मात्रा में मुझे दुख होता है.

उन्हें लगता है कि मेरी पसन्दगी, मेरी आशायें----सब उनकी इच्छा के अनुकूल ही हों. उन्हें जो रंग पसंद न हो उस रंग की साड़ी मैं न पहनू. उन्हें जो सिनेमा पसन्द न हो, उसे मैं न देखू.......उन्हे जो पुस्तकें पसन्द हों वही मुझे भी पसन्द आनी चाहिये. कहीं इत्तफाक से ऐसी कोई पुस्तक मुझे पसन्द आ गई, जो उन्हें पसन्द न हो, तो बस....उनके चिढ़ाने के डर के मारे सिवा इसके कि मैं उसे चोरी छिपे पढू....और कोई चारा नहीं है.

कुछ तो मेरी अपनी भी पसन्दगी हो सकती है—क्यों न हो ! क्या यह संस्कार—

सम्पन्नता का गर्व है या निसर्गदत्त पुरुषों का अपना अहम् है. क्या मेरे लिए वे अपने में कुछ फेर बदल नहीं कर सकते अपनी आदतों को थोड़ा बहुत क्यों नहीं बदल सकते. दो साल होने आये लेकिन सिगरेट की बू बर्दाश्त नहीं कर पा रही हूँ. "सिर घूमता है इस बू से" कहती हूँ तो क्यों नहीं सुनते ?

उनके लिए, उनके आनन्द के लिए मैं कितना अधिक प्रयास नहीं कर रही हूँ उनके लिए और उन्हीं के सुख चैन के लिए मैं कितना नहीं सह रही हूँ

खुद की इच्छा न होने पर भी जाने कितनी चीजों के बारे में मन को समझा कर मना लेती हूँ••• यह सब क्या कभी उन्हें पता चलेगा. यह तो मुझे भी पता नहीं रहता है. वैसे ही कभी किसी रात नींद न आये तो यही ऊल जलूल बातें याद आती है

•••अचानक हवा के झोंके से खिड़की खुल गई. कमरे के अन्दर चांदनी घुस आई. बाहर मंडप पर फैली जूही की महक फूट उठी

चांदनी की शीतलता ने उसके हृदय को थोड़ा शान्ति दी क्या सारी रात चांदनी इतनी अधिक मोहकता बिखेरती रहती है नींद के नशे में चूर दुनिया को इस मोहक चांदनी को क्या आवश्यकता

इस खूबसूरत चांदनी को देखकर कौन खुश होने वाला है शायद यही है "उन्मादिनी चांदनी."

हाय ...नींद के बिना तो सिर चकराने लगा. दूर कहीं घंटियों की आवाज शायद ग्वाले गायों को हांक कर लिए जा रहे हैं

पौ फटी. •••हे भगवान, कोई पांव पड़ा हो नहीं, जरा आंख लगे तो कितना अच्छा हो और जलना शायद कुछ कम हो. नहीं तो सवेरे उठकर मुझसे काम ही न हो सकेगा

"जानकी ! काफी दे रही हो क्या ?" आंख मींचे ही मींचे उन्होंने पुकारा हर सुबह जब तक काफी का प्याला हाथ में न आये तब तक उनकी आंख नहीं खुलती. कभी-कभी तो पत्नी को उठाकर काफी बनाने का कह कर सो जाते हैं

आज तो जानकी ने जानबूझ कर बात अनसुनी करदी उसी समय जानकी को जरा जरा झपकी आने लगी थी. लेकिन साथ वाले पलंग से "काफी, काफी" का आर्तनाद जानकी के उठने तक आता ही रहा.

"ओ मां"••••••अभी ठीक से खुमारी उतरी न थी इसीलिए ऐसी तकलीफ .

काफी का कप हाथ में देकर जानकी चली गई.

'सुनो तो. आज इतवार है न ! मैंने श्यामल राव और गणपति का दोपहर

खाना खाने बुलाया है ताकि यहीं ताश की बैठक जमे . क्या भोजन जल्दी बन सकेगा ?"

जानकी का चेहरा पलभर के लिए एकबारगी उतर गया . लेकिन दूसरे ही क्षण हमेशा के उत्साह भरे स्वर में बोली .

"अरे इसमें क्या . जल्दी क्यों नहीं बनेगा . – – –अखबार ऊपर ही ला दूं या आप नीचे उतरेंगे ?"

"ये मैं अभी नीचे आया ."

जाने कौन कौन सी बातें करते हुए वे दोनों नीचे उतरे .

उन्होंने जानकी की रतजगी आखें देखीं लेकिन उन्हें सूझा ही नहीं कि पूछें क्या रात ठीक से नींद नहीं आई . "या"

"मुझे रात भर नींद नहीं आई है." जोरों का "सर दर्द है. तबीयत ज़रा भी ठीक नहीं ." बतलाना उसे भी सूझा ही नहीं .

.........हंसते हुए जानकी ने उनके हाथों में काफी का दूसरा प्याला दिया . काफी की घूंट के साथ वे अखबार की तहों में खो गये .

अनुवादिक : श्रीमती हेमलता आँजनेयुलु.

तमिल कहानी

नशा व रिश्ता

• अखिलन

गोपाला !

"जी हुजूर"

गोविन्दा !

"जो हुजूर"

कहाँ जा रहे हो !

बाजार में

"किसके लिये"

"बीड़ी लेने"

कौन सी बीड़ी !

बन्दर मार्का

ओहो ! गज़ब हुआ रे ! पी कर देखो ! पीने वालों से पूछ कर देखना ! बन्दर-मार्क ! मजे की बीड़ी "पीकर देखो" .

खुली सड़क पर बीड़ी वालों के जुलूस में सिरताज बने छाती तान कर मास्टर जी बड़ी शान से आये . उनके शिष्य व मुसाहिब, गोपाल और गोविन्द का दल राज सी ठाट से उनके पीछे-पीछे आ रहा था .

चिलचिलाती धूप उनके लिए शीतल चांदनी बरसा रही थी। गला सूखने पर रास्ते के नल से प्यास बुझाते हुए वे लोग सप्तम स्वर में अपना वही राग अलापते हुए शहर की गलियों में घूम रहे थे .

बीड़ी का यशोगान करते वे थकते न थे .

इस दल में हमारा नायक है स्वामीकण्णु . कमर में एक हाफ पैंट . फटा पुराना वह पैंट बार-बार कमर से खिस रहा था , उसे बाँध रखने के लिये एक पतली रस्सी . सिर पर फटे पुराने कपड़ों का साफा . कमर की रस्सी बड़े काम की थी . ढोल नचाते समय रस्सी के बदले सिर का साफा फेंटा बन जाता था .

उस दिन की मजदूरी उसे आठ आने मिली थी . इसमें से दो पैसे के लिये, इतनी

देर जिसका प्रताप गा गा कर गला सुखा रहा था, वही-वही बन्दर मार्का बीड़ी खरीद ली . दो आने एक पैसे को गुलबकावली—हिन्दी फिलम के लिए अलग रख लिया . शाम की चाय के लिये दो आना . जो बचा रहेगा, उसी में रात का खाना, सुबह का नाश्ता संभाल लेगा . देखें फिर क्या होता है ?

स्वामी कण्णु जब होश में आया, तब इस विशाल, विस्तृत दुनियाँ में वह अकेला था . चार-पांच की उस उम्र में, सात बार जठराग्नि को भड़का देने वाला पेट ही उसका अपना बना था . और कोई नहीं . उसका जलता पेट और वह अकेला . लंगोट के लिये फटे-चिथड़े अध जली बीड़ियों की कमी व अभाव कभी न खटकते थे . बसों का अड्डा ही उसका निवास स्थान था .

वह बसों के सामान उतारता, और चढ़ाता था . माल असबाब ढोता, ड्रैवर, और कण्डैक्टरों के लिये घर से खाना-वाना लाता; मौका मिले तो मुसाफिरों से भीख माँगा करता था . परिस्थिति और जरूरत के अनुसार उसके पेशे की रंगत बदल जाती थी .

कभी मन उखड़ा-उखड़ा रह जाता तो वह अपने मां, बाप की याद कर लेता . पिता की याद कहीं स्वप्न में देखी हुई सी हलकी-हलकी उभर आती थी . वह लंगड़ा था . उसी ने उस को यह प्यारा गीत सिखाया था . "संसार माया है री सजनी" यह गाना उसी लंगड़े पिता की सीख थी . मां को वह बिल्कुल न जानता था . कोई धुँधली सी याद तक उसकी न रही . इसी बात पर वह बेचारा बहुत परेशान था . उस परिचित अनजानी मां की कल्पना उसे कितनी सुखद लगती थी . मरा कैसा निगोड़ा है . यदि मां होतीं, उसे ऐसे अनाथ (राह का भिखारी) होने देती ! या वह लंगड़ा ही किसी दूसरी का पल्ला पकड़े भाग जाता ? ओह ! बाबा ! मां ही जाने ममता क्या है ! और क्या जाने ?······स्वामी कण्णु इन सब बातों पर विचार करते-करते क्षुब्ध हो जाता . दूसरों के मुँह से······सुनी इन शब्दों का मानो उसने कंठस्थ कर लिया था . अक्सर अकेले में गुन-गुनाता—मां ही जानती ममता क्या है . और क्या जाने ?—एक लंबी आह उसके भोले उदास हृदय को भेद कर निकलती .

मां की याद में, खोया सा बैठे स्वामी कण्णु को किसी बस का हारन जड़ जगत में में खींच लायेगा . वह हड़बड़ा कर उठ खड़ा हो जायेगा . अगले क्षण, बिस्तर-बोरी उठाते, इधर इधर भटकते सज्जनों की ओर याचक दृष्टि से देखता हुआ गुनगुनाता जी साहब . दो आने दीजिए ! मैं आपका बोझा उठा लाऊँगा . कोई मजदूरी न मिलती तो, बड़ी ठाट से जेब में पर्स डोले-झूमते फिरते शौकिनों की जेब काटता फिरेगा .

नशा

स्वामी कण्ण अकेला उस्ताद नही था. उसके बराबर दो चार और उचक्के वही हाजिर थे . पाँच से लेकर पचास उम्र तक के कई एक किस्म के रंगरूट मौजूद थे अड्डे पर . उस वर्गहीन समाज में मौजी के पेशे निराले थे उनका खेल-कूद व मनोरंजन कई थे . गिल्ली-डंडा, ताश, सिनेमा, शतरंज इत्यादि ,

इस वर्ग की शोभा बढाने वाली रानियों की भी कमी न थी छोकरी से लेकर बूढ़ी तक कई एक दर्जे की औरतों का जमघट इनमें बड़ा रंग लाता था . गाना-बजाना बच्चे••••••ये इनके साधन थे पेशा था भीख मांगना ."

एक दिन कहीं से एक सुंदर पगली उनमें आ गयी बिलकुल शांत अपने में मौन कहीं न कहीं बैठी रहती मगर, नव जात शिशु, छोटे लड़के, व औरतों पर नजर पड़ते ही उसमें पागलपन सवार हो जाता एक दम उन्मत्त सी हो कर किसी माँ से उसका बच्चा छीन लेती . बस के अड्डे में बच्चों की क्या कमी !

पगली हर वक्त आनन्द में चूर रहती, माँ की गोद की बच्ची को धड़ाक से अपनी गोद में भर लेती या छाती से लगा लेती •••••• प्यारा लाल मेरा राजा ! अब तक तुम कहां गया था बेटा ••••••••••••यही उसका प्रलाप था

रास्ते में चलते बच्चे को छाती में भर लेती दुकानों पर सजी मिठाइयां और फल उठा उठा कर उनमें बाँट देती . पलक झपकने के पहले यह हो जाता और पगली इसकी सजा चुपचाप भुगत लेती . वे लोग उसे पीटते पीटते अधमरा कर देते .

मेरे लाल को कपड़ा चाहिये . भाई जी धरम कीजिये ! साहब ! क्षमा कीजिये . •••••••••मुसाफिरों के सामने हाथ पसारती वह खड़ी हो जायेगी सारे अड्डे पर फिरती रहती . कहीं किसी बच्चे को देखते ही उधर भाग जाती . भीख मांगना भी भूल जाती. —देवी••••••मेरा लाल इधर•••••••भाई•••••मेरा लाल मेरा बेटा••••••स्नेहविह्वल स्वर में वह बिलखती रहेगी .

कहने वालों ने कहा . सुनने वालों ने सुना उसे बच्चे का पागल पन चढ़ा है . बांझी होने से पगली बनी है या माँ बन कर गोदी के लाल को लुटा दिया है . कौन जाने

पेट की क्षुधा बुझाने ही जिस का धर्म था . वह स्वामी कण्णु अब सयाना हो गया था . उसके हाथ चार पैसे आने लगे थे . आज कल साबुन लगा कर धोती को मल मल कर के धो लेता था . जहां तक हो सके चोरी चारी से हाथ खींच लेता था . पहले एकांत में रहते समय उसे माँ की याद आती थी—लेकिन अब चढ़ती रंगों के रंग में यौवन के उबाल ने कई समगत कल्पनाओं का जाल बिछा रखा

था . वह तमिल सिनेमा में जाना न चूकता था . कई नायक और नायिकाओं के प्रणय संवाद उसे कंठस्थ थे .

आज भी वह थियेटर हो आया . नाईट शो में गया था . फिलम का नाम था "माँ !" एक अबला माँ अपने बच्चे के लिए बेहद कष्ट उठाती है . लड़के की समस्त भूल और अक्षय अपराधों को भी माफ कर देती है . उसका प्यार अनोखा था . आखिर वह माँ अपने बच्चे के सुख के लिए अपना प्राण तक दे देती हैं .– स्वामी कण्णु कई बार फफक कर रो पड़ा था . कई दृश्य बड़े हृदय वेधक रहे थे . सोचा······मेरी भी एक माँ हो तो !············

तमिल फिलम कहें तो बिना प्रणय संवाद के दृश्यों के कैसे होते ? बिना प्रेम का फिलम चलता कैसा ? उस फिलम में इण्टरवेल के बाद जो लव सीन्स आये थे वे उसे बेहद पसन्द आये थे . उसकी धमनियों में उष्ण रक्त का संचार होने लगा था . प्रेम व सवाद ······संस्कार की सीमा लांघ चुके थे .

"शो" से छूटकर स्वामी कण्णु चाय पी कर सीटी बजाता हुआ अड्डे पर लौट आया . कहीं एक बजने की आवाज़ आयी .

युद्ध का जमाना था . गली की बत्तियां बुझ गयी थीं . सड़क के लैंप पोस्टों ने नकाब खींच लिया था .

अड्डे में आकर उसने इधर-उधर देखा . अंधकार में कुछ सूझ नहीं रहा था . कहीं इतनी सी जगह खाली दीख पड़ी तो अपना तौलिया बिछा कर लेट गया कि मालूम हुआ कोई वहीं पर उससे सटकर···सोया पड़ा है .

अंधकार में आँखें अभ्यस्त हो गयीं तो स्वामी कण्णु ने टुकर-टुकर कर देखा कि बगल में कौन पड़ी है ?

वह कोई औरत थी . स्वामी कण्णु ने उसकी ओर आंखें फाड़ कर देखा . कोई गरीब भिखारिन अस्त-व्यस्त पड़ी है . बेचारी तन ढकने के लिये नौ गज साड़ी कहां से लाती ? लाज-शरम छिपाने को ओढ़नी कैसे पाती ? फटी पुरानी साड़ी में उसके अनवृत अंग इधर-उधर खुले पड़े थे . अर्धनग्न अवस्था में पड़ी उस नारी को स्वामी कण्णु ने गौर से देखा .

वह कोई और नहीं . कुछ दिनों से उस अड्डे में जो भटकती रही . वही सुन्दर पगली थी . वह हाँ वह सुन्दर थी .

सिनेमा में देखे अनोखे, प्यार के दृश्य स्वामी कण्णु की आँखों के सामने उभर आये उन्मुक्त प्रेम प्रदर्शन की श्रृंगारिक चेष्टाएँ याद आयीं . नस-नस में उत्तेजना भरने लगी . स्वामी कण्णु अपनी चेतना खो बैठा . यौवन की मस्ती ने उसे विचलित

कर दिया . धीरे से अपना हाथ बढ़ा कर उसके तन पर रखा .
वह करवट बदल कर फिर सो गयी . उसके स्पर्श ने बिजली सा उसे झटका दिया .
उसका सारा शरीर काँप उठा .
इतने में उसकी आँखें खुल गयी . उसने स्वामी कण्णु की ओर देखा .
स्वामी कण्णु की कल्पना तीव्र हुई . 'फिल्म की नायिका ने अपने प्रेमी की ओर वैसी ही मदभरी दृष्टि डाली थी न ?" हाय•••कितना मुग्ध है . ••••••
अगले क्षण .
हाय बेटा ! मेरा लाल ! मुझे छोड़ कर इतने दिन कहाँ गये थे बेटा !•••••• •••
पगली बड़बड़ाती उठी और उसे बाहों में भर लिया .

स्वामी कण्णु जड़ पड़ा था . उसे लगा उसी की वह अनोखी माँ स्नेह पूर्ण आग्रह से उसे पुकार रही है . स्वप्न में भी मातृत्व के जिस सुख की, ममता की कल्पना करना तक उसके लिये असंभव था वही प्यार, वही ममता, वही आहतपूर्ण पुकार उसे अपनी लपटों में ले रही है क्षण भर वह स्तब्ध रहा. अगले क्षण उसने अपने को जबरदस्ती से छुड़ा लिया .
राजा बेटा ! मेरे गोद के लाल हो न ! आओ मेरे पास ! – पगली उठ गयी .
स्वामी कण्णु होश में आया उसका शरीर बुरी तरह से काँप रहा था . सिर चकराया . लगा सारा संसार चकरा रहा है कोई मौन चीत्कार हृदय में आर्त-नाद कर उठी•••••••••
माँ—मेरी माँ . ••• ••• ••• •••
स्वामी कण्णु भागने लगा . उसके पैरों में आँधी का सा वेग आ गया था .
वह दौड़ा–दौड़ा दौड़ता ही रहा .

अनुवादिका : सरस्वती रामनाथ

मलयालम कहानी

यमुना बहती है

• केशवदेव

वह प्रणय इतना स्पष्ट हो गया कि छिपाने से भी छिप न पाता. छिपाने की आवश्यकता या छिपाने की इच्छा उनकी हुई नहीं.

उस प्रणय ने कॉलेज की नियमावलियों की अवहेलना नहीं की. सामूहिक नियमों का उल्लंघन भी नहीं किया. नियमावली की चार दीवारी के अन्दर ही, आन और अभिमान का पालन करते हुए वह प्रणय सिर ऊँचा करता ही रहा.

मधु और रवि सगे साथी हैं, अभिन्न भी. मधु प्रेमी बन गया और रवि कवि.

निश्चित समय के पहले ही रवि और मधु कॉलेज पहुँच जाते. और दूर तक आखें बिछाये यमुना की प्रतीक्षा में खड़े रहते. उसके आराधक और भी थे. किसी बहाने से सभी उसके आगमन की प्रतीक्षा करते. वह फाटक से होकर अन्दर घुस जाती तो वहां निःस्तब्धता छा जाती, विशेष तरह के एक स्तंभन की सी अवस्था हो जाती.

किताबों को छाती में दबाती, मुख में गिर पड़ने वाली अलकों को हटाती वह बरामदे में दाखिल होता. अर्धनिमिलित स्वप्नात्मक आँखें खिल उठतीं. वह उस खंभे के आसपास अपनी नज़र दौड़ाती ताकि आनन्ददायक सपना देख सके.

चार आँखें! उसकी निगाह का स्वागत करने उधर चार आँखें प्रतीक्षा कर रही है. प्रेमी की आँखें उसे देखती, देखती ही रह जातीं. लेकिन कवि तो बस, एक बार देख भर लेता.

रवि ने एक बार एक कविता लिखी थी जो काफी चर्चा का विषय बन गयी थी. शीर्षक था, "यमुना बहती है." कॉलेज की साहित्यिक गोष्ठी में वह कविता पढ़ी गयी तो सबने भूरि भूरि प्रशंसा की.

पहाड़ी प्रदेशों से हो कर उछलती कूदती मानों जंगली जानवरों से डर कर, टेढे-मेढे रास्तों से हो कर हांफती हुई नदी बहती है — ऐसा ही था कविता का प्रारंभ फिर धीरे धीरे टीलों के किनारों से हो कर गानालाप करती हुई, निर्भय और उन्मेष के साथ वह नदी बह रही है.

चलने वाली, ले जाने वाली ठण्डी एवं स्फटिक सदृश्य उस सरिता को सभी देखते रहते. लेकिन किसी को भी उसमें उतरने का धीरज न हुआ. उसकी सुन्दरता

सब को आकर्षित करती, उसकी निर्मलता सबको भयमयी लगती .

"किधर ? वह वसन्त काल यमुना किस ओर बहती है ." कवि पूछता है . वह सरिता किस ओर बहती है यह सब जानते हैं . कवि गाता है—"न जाने किसी ओर, किसी भी लक्ष्य की ओर उसे बहने दो . हम क्यों उस सुन्दर बहाव मे बाधा डाले ? सिर्फ उस बहाव का गाना, उसका ताल और उसका सौन्दर्य ही हमारा हो, और कुछ नहीं."

जाने क्यों यमुना की आकृति झुक गयी . मधु ने यह देखा तो अनजाने ही मुस्कुरा उठा . यमुना और मधु दोनों का प्रणय, एक यथार्थ के रूप मे अवगणित या विस्मरित हो गया . उसके बदले रवि की कविता बात चीत का मुख्य विषय बन गयी . रवि ने सभी के ध्यान को आकर्षित कर लिया वह विद्यार्थियो की आराधना का केन्द्र हो गया .

यमुना बहती है – सभी विद्यार्थियो के कापियो के कोने–कोने में ऐसा उल्लेखन किया गया . डेस्को में, दीवारो के कोनो मे, विद्यार्थियो के निवास स्थानो मे, ऐसा क्यो सब कही यही पंक्ति दिखाई पड़ती

सभी छात्र और छात्राओं ने यह कविता याद करली कॉलिज के प्रागण मे स्थित आम के पेड़ की ओर से वह कविता गूंज उठती . क्लासो के चहल पहल और अट्टहासों के बीच मे से भी यह गीत कभी कभी सुनाई पडता . कभी स्नान गृहो से और भोजनालयो से भी वह कविता बहती होती .

यमुना रोज़ कॉलिज आती . वह उस खंभे के पास देखती . मधु आवेग से देखता रहता . रवि तो सिर्फ एक बार उसे देखता और अपनी निगाहे किसी ओर घुमा लेता .

यमुना मुस्कुराती . गौरे बादलो से आच्छादित चाँदनी की चमक जैसी कोई निगूढ वस्तु उस मुस्कुराहट मे तैरती !

उसके बहाव को कोई भी विघात न करता . उस गीत के ताल को कोई अवताल भी नहीं बनाता . उस श्रुति की कोई अपश्रुति भी नही बनाता

●

मधु धनी है . तन्दुरुस्त और सुन्दर भी . ऐसा लगता कि उसकी सृष्टि मानो यमुना के लिए हुई और यमुना की उसे के लिए .

दोनो के माता-पिता ने आपस में सोच विचार करके विवाह का निश्चय भी कर डाला .

यह खबर कॉलिज मे यत्र–तत्र सर्वत्र फैल गयी . किसी को आश्चर्य तो नहीं हुआ .

उनके प्रणय साफल्य में सहपाठियों और प्रोफेसरों ने उनका अभिनन्दन किया .

परीक्षा हो चुकी . विजय की प्रतीक्षा के साथ, पराजय की आशंका के साथ और सौ सौ तरह की अन्य स्मृतियों के साथ एक एक करके सब अपने अपने घर रवाना हुए .

रवि की भी असंख्य स्मृतियां हैं-मीठी एवं कड़वी,हंसाने वाली और रुलाने वाली. एक शोकात्मक गाने की पंक्तियों को गुनगुनाता हुआ रवि यात्रा की तैयारी कर रहा है . किताबें और कपड़ों को 'ट्रंक' के अन्दर रखा . बिस्तरा भी बांधा. तो भी उसे लगा कि कुछ न कुछ भूल गया है .

वह खिड़की के पास जा खड़ा रहा . दूर सुदूर में काली कलूटी पूर्वी पहाड़ियां नील–निर्मल आकाश को चूम रही हैं . उसके सांवलेपन और अनलल नील वर्ण, दोनों के प्रणय बंध को ताकता रवि निश्चल खड़ा है .

बन्द दरवाजे में धीमी टकराहट ! फिर तीन चार बार !!··· ············ रवि धीरे से दरवाजे की ओर चला. दरवाजा खुला .

वह एक दम चौंक गया .

"कौन !" उसका हृदय धड़कने लगा .

"यमुना !··· ········· यमुना !··· · ·····–······" उस नाम को उसने दोहराया मानों एक सपना देख रहा है .

वह पीछे की ओर चला . खिड़की के पास जा खड़ा हुआ .

"यमुना·········यमुना बहती है ··—···" फिर वह धीरे बोला .

वह कमरे के अन्दर आई हाँफती हुई . चेहरा पसीने से नहा आया . बंधी अलका-वल्ली बिखरने-सी लगी .

हथेली से पसीना पोंछ कर बालों को संवारती हुई, मेज पर उसने घुटना रखा, मानों सहारा लिया हो . स्वप्नात्मक वे आंखें विलक्षण सौन्दर्य को प्रकट करती जैसी खुल गयीं . दबी मुस्कान मुंदे अधरों से बाहर की ओर झांकने लगी . लेकिन वह माथा झुकाए खड़ी थी .

"यमुना बहती है" उसने फिर भी दोहराया मानों सपने में हो .

यमुना ने पलकें ऊँची की . उस नदी से गान फूट पड़ा .

"बहती हुई वह नदी अब सागर की तरंगों में विलीन होने के लिये इन्तजार कर रही है" . उसने एक दीर्घ-निःश्वास छोड़ा · बिखरे बालों ने उसके कमरबन्ध के नीचे कल्लोल मालाओं की सृष्टि की .

खिड़की को पकड़ता हुआ रवि बोला :

"सरिता और सागर का मैं अभिनन्दन करता हूँ"

यमुना की आकृति ऊपर उठी . दृढ स्वर मे बोली : 'मेरा इधर आने का उद्देश्य अनुमति ले लेना नही था .'

"सागर की तरंगों मे विलीन होने के लिए . मधु के हाथों में बध कर निवृति पाने के लिए··········क्या इसी के लिये नही ?"

वह मुस्कुरा दिया . सन्ताप भाव मे तपते हुए वह बोला .

"लेकिन अब मधु इधर नही है" .

"इसलिये ही मैं इधर आई" उसने मुह मोड़ लिया .

रवि का शरीर कापने लगा . फिर से वह फुस-फुसाया . "यमुना बहती है" .

"सागर की ओर"—"सागर की तरग मालाओ की ओर" . आवेग के साथ रवि की ओर, उसने मुँह ऊचा कर देखा .

"इस छोटे कमरे में··········" उस वाक्य को रवि पूरा कर न सका . उसने खिड़की को जोर मे पकड़ा .

"हाँ, इस छोटे कमरे में सागर लहरा रहा है . उसने दोहराया . एकदम मुख झुका-कर रवि को आखो के कोनो से देखती उसने सवाद जारी रखा .

'सागर की तरंगो मे विलीन होने के लिये . उन हाथो मे··············" बातें उसके गले मे रुक गई .

"यमुना !" रवि का कण्ठ निरुद्ध हो गया . उसके पैर आगे की ओर बढे . लेकिन खिड़की से हाथ हिला नही .

'रवि !' उसकी शब्द गंभीरता टूट गई .

एक बिजली ! वह, रवि के बाहुपाशों मे जकड़ गई . सरिता सागर की तरगो में विलीन हो गई .

निःशब्द ! निश्चल !!

उनके मुख आपस मे मिले . सांसों की सुगन्ध को एक दूसरे ने अनुभव किया . उनके अधर जुड गये .

वह मुस्कुरा दी—अनाच्छादित चाँदनी की चमक .

वह मुस्कुराया नही—उसका मुख मुरझा गया .

वे अलग हो गये . वह मेज़ की ओर चली और रवि खिड़की की ओर .

उसकी आँखों में संतृप्ति का भाव नाच रहा था . उन आखों का स्वप्नात्मक भाव बदल गया . विशेष तरह की चमक ! वे विजय की भाड़ियाँ थीं .

"रवि !" उसने नि:स्तब्धता को तोड़ा

उसने प्रत्युत्तर दिया नहीं . उस खिड़की से होकर दूर सुदूर देखता वह निश्चल खड़ा रहा . पूर्वी पहाड़ियां क्षितिज को चूम रही है .

उसका स्वर फिर से उस नि:शब्द वातावरण में गूँज उठा .

"हमारी शादी के शुभ मुहूर्त में आने का मैं आमंत्रण करती हूँ ."

रवि चौंक उठा. निर्निमेष दृष्टि से उसकी ओर देखा. यमुना के मुख में एक अपूर्व शांति विराजती थी. और निश्चय भी. बिखरी, लहराती अलकों को एकदम संवारती हुई वह बोली:—

"शादी के शुभ मुहूर्त में मैं आपकी उपस्थिति चाहती हूं.

खास तरह की ठण्ड ! उस कमरे में सर्वत्र व्याप गई.

रवि स्तब्ध खड़ा रहा. वह उस ठण्ड में सिकुड़ गया और एक शिला प्रतिमा बन गई.

"आ जाना······क्या आयेंगे ?" दृढ़ स्वर में उसने पूछा.

प्रतिमा के होंठ हिले.

"···· ·· ···उस घटना के बाद ?"

"हाँ," उसके स्वर में दृढ़ता आ गई . आज्ञा-रूप में वह बोली.

'हाँ, उस घटना के बाद ! सरिता उस सागर की तरंगों में विलीन हो जाने के बाद ! आपके हाथों में·········" बीच में वह चुप हो गई और सिर झुका लिया. फिर से मुंह ऊँचा करके उसने निवेदन किया.

"आप आ जाना आपकी उपस्थिति में हमारी शादी होगी." उसका सिर ऊंचा हुआ. ऊंची छाती खिल गई. उसके भाव से यह प्रतीत होता कि वह सागर की तरंगों में विलीन होती नहीं, उन तरंगों के सिर चढ़ कर, वह विजेता के रूप में नाच रही है.

रवि के, नहीं, शिला प्रतिमा की आकृति में निगाहें टिकाए, वह एक महामांत्रिक की तरह, धीरे से चल कर उसके पास जा खड़ी हुई. वह मुस्कुरा दी.

प्रतिमा के अधर भी मुस्करा दिए.

उसने पूछा—"क्या आयेंगे ?"

प्रतिमा बोली—"किधर ?———···क्यों ?·········"

"हमारी शादी के लिए" वह बोली.

प्रतिमा का हाथ हिल गया. हाथ को मुख में दबाया. उन आंखों को चैतन्य मिला. प्रतिमा के होंठों से स्वर प्रस्फुटित हुआ.

"चन्द निमिषों के पहले······इस सागर की तरंगों में विलीन होने, उत्कण्ठा के साथ, इन्तज़ार करने वाली······अनियंत्रित आवेग से, मेरे हाथों की ओर कूद पड़ी······"

"अपूर्ण वाक्य !" निगूढ़ रूप में मुस्कुराती वह बोली.

"कहिए, आप कहिए रवि. मेरे जीवन की अविस्मरणीय उस घटना को—प्रणय साफल्य मिले उस दृश्य को"······प्रचोदन के साथ उसने संवाद जारी रखा.

"उसका वर्णन करने—उसे कलापूर्ण बनाने—उसे महत्व, रवि आप ही दे सकेंगे——···."

रवि का शरीर कांप उठा. खिड़की पर हाथ टिकाए विस्फारित हो उसने देखा

क्या मुझे गाना चाहिये ? मेरे हृदय को ठुकरा कर तुझे प्रणय साफल्य मिले उस दृश्य को कला सौंदर्य प्रदान करना, गा कर उसका महत्व बढ़ाना, नहीं ? उसका मुख लाल हो गया. गरजते स्वर में संवाद को उसने जारी रखा.

तेरी नागिन सी सुन्दरता को, तेरी क्रूरता को अमरत्व प्रदान करना. क्या ऐसा नहीं ?"

यमुना के मुख से एक मृदु मुस्कान फूट पड़ी. तात्त्विक की शान्तता एवं गांभीर्य उसके मुख में दौड़ आया. बातों को एक-एक करके उसने कहा मानो बातों को तोल रही है.

"रवि, आपका कोप—उस कोप का भाजन, मेरे लिये आनन्द दायक है······जीवन में समालोचक एवं कवि के रूप में आप जीवन को धार्मिक, अधार्मिक दो रूपों में विभाजित करते हैं. जीवन के धार्मिक रूप को आप अधिक प्राधान्य और कोमल देते हैं ·········मैं तो जीवन का निर्माण करने वाली हूँ. मैं जीवन में फिर घुलकर रहती हूँ ···मैं जीवन हूँ······.···—रवि आप जीवन को गति देते हैं.······आप तो बहाव के उल्टे तैरते हैं······मैं तो बहाव के अनुकूल तैरने वाली हूँ······मैं बहाव ही हूँ.······रवि आप जीवन की समालोचना करते हैं. जीवन को गति देते हैं.······मैं तो जीवन को अमरत्व दे देती हूँ."

रवि स्तब्ध हो गया. एक प्रतिमा की अद्भुत विजय ! हर्ष आनन्द के और गौरव सहित अहंकार के साथ यमुना फिर बोली:

"रवि, जीवन का गीत आप गाइए. गाते-गाते मिट्टी में मिल जाइए. सिर्फ आपके गाने अमर बने······गाने की मुझे फुरसत नहीं. मैं जीवन हूँ. मुझे जीना है······ कवि की नहीं, मुझे पति की ही जरूरत है जो मेरा रक्षक हो."

अधिक समय तक वह बोल नहीं सकी. गला रुँध आया. मुख में उमड़ती पसीने की बूंदे उसने पोंछ डाली. बिखरे बालों को ठीक से संवारा . उसने रवि के हाथों को पकड़ लिया.

प्रतिमा न हिली, न डुली,

उसके मुख से गांभीर्य कहीं जा छिपा. एक अपूर्व सौन्दर्य उसकी आंखों में दौड़ आया.

"रवि, क्या मैं जाऊँ, आप शादी में भाग लेंगे न ?" उसकी वाणी फिर संगीतमय बन गई.

प्रतिमा बोली नहीं, हिली भी नहीं.

पीछे की ओर मुड़कर उसने एक कदम रखा. एकदम वह फिर से मुड़ ली.

"एक बार भी !······एक बार भी !······" आवेग के साथ उसने प्रतिमा को छाती से लगाया.

"एक बार भी !············एक बार भी !" उसका मुख, मुख से मिला, हौंठ हौंठों से.

एकदम वह अलग हो गई······बिना विलंब के कमरे से दौड़ गई.

प्रतिमा हिली. वह दरवाजे की ओर धीरे से चला.

फूलों से मुस्कुराते पौधों से होकर यमुना अबाध गति से बहने लगी, और बहती चली. तब तक रवि देखता रहा जब तक वह अपनी आँखों से ओझल नहीं हुई.

शून्यता की ओर देखता हुआ वह खड़ा रहा. लेकिन कब तक खड़ा. रहा दरवाज़ा बन्द किया. फिर खिड़की के पास आया. उसे लगा कि उसके ओष्ठ गीले हैं.······

झट जेब से रूमाल निकाला. ओष्ठों को पोंछा. फिर रूमाल को खिड़की से बाहर फेंका. और खिड़की से बाहर झांक कर एकटक देखता कितनी देर खड़ा रहा, उसे स्वयं को पता न चला. बाढ़ के वेग से उसकी आँखों में आँसू उमड़ आए. पोंछने के लिए रूमाल जेबों में टटोला, पर नहीं मिला.

कोशिश करने पर भी रवि आंसू रोक नहीं सका. अश्रु-धारा ने उसकी आँखों की

मलिनता को हमेशा के लिए धो डाला. सर्वत्र एक नई रोशनी दिखाई दी. एक नई उज्वलता भी. उस उज्वल प्रकाश में नकली नीलिमा को उस अनन्त एवं पवित्र नीलिमा से आश्लेषण करते हुए उसने देखा, देख कर अनजाने मुस्करा उठा, उस मुस्कुराहट में शोक का भाव भरा हुआ था. ●

अनु : करमना मणिकण्ठन नायर
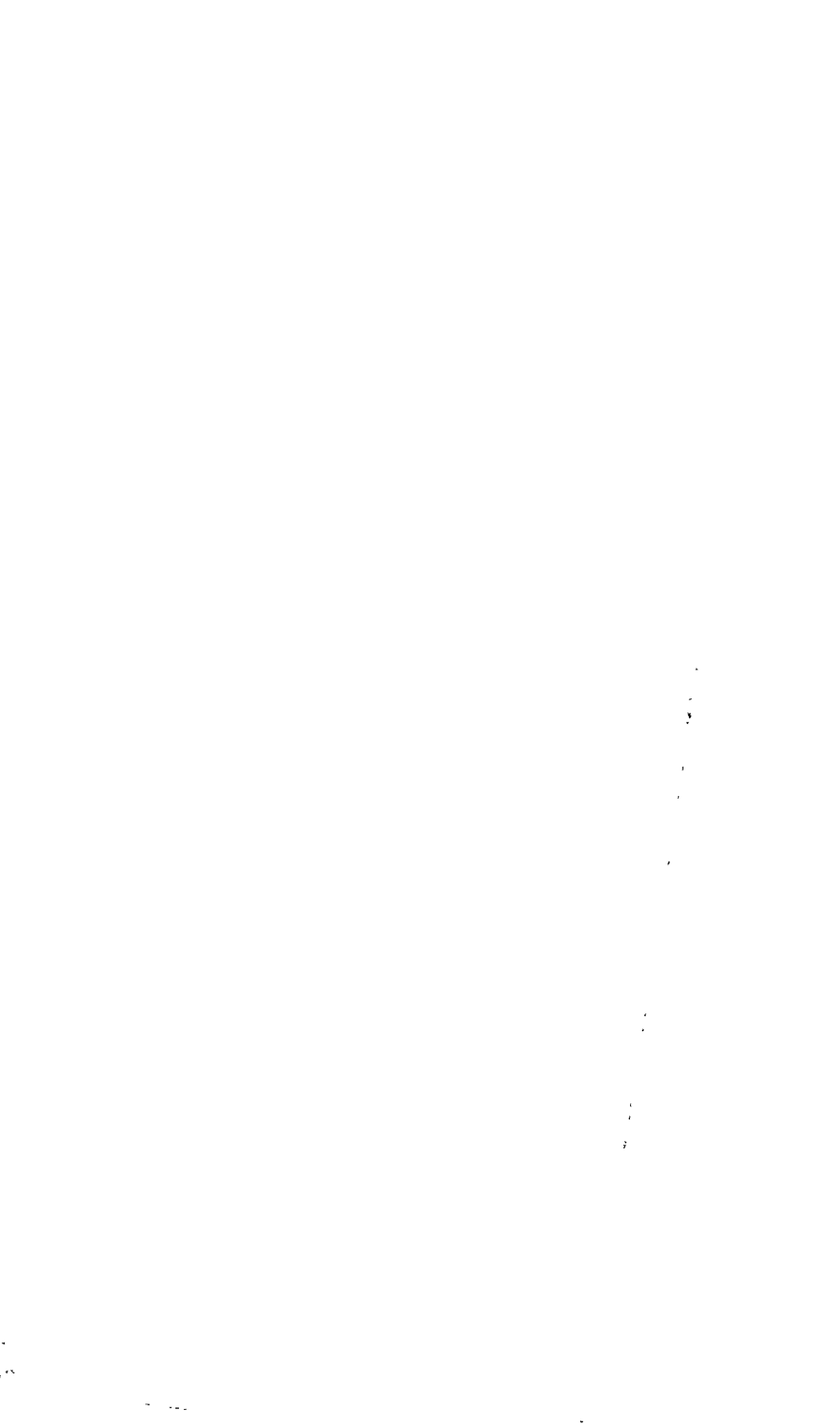
ये कथाएं

हिन्दी

अनुक्रम

होतीलाल भारद्वाज	मेरा अपना	१४६
हिमांशु जोशी	बाद का एक दिन	१५५
दुर्गा माहेश्वरी	सड़क की इज्ज़त	१५६
मागर	एक उदास दोपहरी	१६२
श्रीहर्ष	शहतीरों से ऊपर	१६५
अशोक मात्रेय	दो चेहरे	१६८
शुभ्र पटवा	सलवटें : भीतर-बाहर	१७४
राजानन्द	राहत-राहत	१७८

मोहनलाल अनियंत्रित भाव से बड़बड़ाया, 'क्या औरत है? ज़रा सी बात पर दुनियां से लड़ते फिरो.' लेकिन एक बात विद्या ने बिलकुल सही कही है. आज तक किसी से कुछ कहा है जो आज ही कह दोगे? ठीक ही है. वह आज तक किसी से नहीं लड़ा-भिड़ा. कभी किसी से तू तू मैं मैं का अवसर आया भी है तो उसने हमेशा चुपचाप पराजय स्वीकार करली है. दूसरों के अनुकूल ढलना ही उसने सीखा है. उसके विषय में लोगों की सदैव ही यह राय रही है, 'बड़ा ठंडे दिल का आदमी है. जाने कैसा खून है, कभी गर्म ही नहीं होता.' और तो और वह अपने विषय में इस प्रकार के वाक्यों को भी चुपचाप पीता आया है······क्या मर्द है? जाने अपनी औरत से भी कैसे निपटता होगा?'

औरत से यानी विद्या से?······ विद्या के समक्ष भी वह सदा पराजित ही रहा है. आज तक गुस्से से कभी उससे एक शब्द भी उसने नहीं कहा है. मोहनलाल निढ़ाल होकर चारपाई पर लेट गया. वह छत की ओर देखने लगा. शायद छत में उसके गत जीवन के चित्र टंगे थे जिन्हें वह देख रहा था.

o———

जब उसकी शादी हुई वह बहुत खुश हुआ था. उसकी खुशी का कारण विद्या की सुन्दरता थी. विद्या सुन्दर थी अपूर्व सुन्दर. गोरा रंग, भरी पतली देह, नाक-नक्श से देखने-दिखाने लायक.

एक और दिन भी उसने विद्या को देखा था. उस दिन विद्या उसे सबसे सुन्दर लगी थी. उसने सोचा था कि दुनियां में विद्या से अधिक सुन्दर कोई स्त्री नहीं हो सकती.

सूरज छिपा नहीं था. उसकी आखिरी किरणें अपना पीलापन बखेर रहीं थीं. विद्या छत पर बैठी थी, अपने आप में बेसुध सूरज की ओर मुँह किए. सूरज की पीली किरणें उसके चेहरे पर पड़ रहीं थी. मोहनलाल बाहर से आया था. उसने विद्या को देखा और देखता रह गया. विद्या के चेहरे पर पराग बिखरा हुआ था. उसके होंठ सफेद शीशे में मढ़ी लाल गुलाब की दो पंखुड़ियां लग रहे थे. एक ऐसी आभा जिसकी वह कल्पना भी नहीं कर सकता, विद्या के चेहरे पर बिखरी पड़ी थी. उसने धीरे से जाकर विद्या के लाल गुलाब की पंखुड़ी जैसे होंठ चूम लिए थे और उसके चेहरे पर बिखरे पराग को एक झटके में पी गया था.

किन शायद कुछ ऐसे ही क्षण रहे होंगे जब उसके मन में यह हीन भावना

किसी कोने में घुस आई थी, कहीं ऐसा न हो कि मैं विद्या को सन्तुष्ट न कर पाता हूं? धीरे धीरे यह विचार उसके दृढ़ विश्वास में बदल गया था. यद्यपि इसका कोई कारण उसके पास नहीं था. विद्या से उसने इस बात का कभी जिक्र भी नहीं किया न उसके प्रति अपने प्रेम में कमी आने दी. किन्तु मन ही मन में वह यह महसूस करने लग गया कि विद्या को शारीरिक सन्तुष्टि दे पाना उसकी सामर्थ्य के बाहर है.

● ————

उसके जीवन में अनेक व्यक्ति आये. मोहनलाल ने सभी को निबाहने का प्रयत्न किया. कई ने उसका शोषण तक किया किन्तु अपनी ओर से उसने कभी किसी से शिकायत नहीं की. जिससे भी उसकी आत्मीयता बढ़ी उसे उसने अपना सर्वस्व दे देना चाहा. वह अपना रक्त तक अपने आत्मीयों को दे देने की स्थिति में रहा. आज भी उसकी इस आदत में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है. विद्यार्थी जीवन के कई साथी अब भी उससे सम्बन्ध बनाए हुए हैं. यों लोगों का स्नेह भी उसे काफी मिला है

शादी के पश्चात उसके जीवन में एक व्यक्ति आया नारायण. नारायण उसका दूर का रिश्तेदार भी था. दो चार दिन ही उसे नारायण के साथ रहने का मौका मिला कि उसने नारायण को अपना बना लिया. वैसे नारायण ने मोहनलाल के जीवन को एक मोड़ दिया वह इस रूप में कि मोहनलाल को अच्छी सरकारी नौकरी दिलवा दी थी. नौकरी के बाद दोनों को साथ ही रहने का अवसर मिल गया. मोहनलाल चाहता कि नारायण पर वह अपना सर्वस्व न्यौछावर कर दे वह अपने पास उससे कुछ भी बचाकर न रखना चाहता था. नारायण बहुत शिष्ट, चतुर और बुद्धिमान व्यक्ति था. मोहनलाल नारायण के साथ अधिक से अधिक रहना चाहता, उससे अनेक प्रकार की बातें किया करता. मोहनलाल जानता था कि औरत नारायण की कमजोरी है किन्तु उसमें कुछ ऐसे भी गुण थे जिन पर मोहनलाल मुग्ध था. नारायण उसे जीवन की अनेक बातें समझाया करता.

उसे याद है नारायण ने एक दिन नैतिकता पर बातें करते हुए बताया था, 'नैतिकता हम लोगों की ओढ़ी हुई चीज़ है। मोहन तुमने ऊंची सोसायटी से मूव नहीं किया। वहां नैतिक बंधन टूट चुके हैं अब तुम स्त्री के सतीत्व को ही लो—हमारे घरों की औरतें तो जैसे छुई-मुई हैं. वे किसी से बात करना तो क्या किसी की ओर देखना भी पसन्द नहीं करतीं लेकिन फारवर्ड और

सभ्य सोसाइटी इस ओर ध्यान ही नहीं देती. बड़े-बड़े ऑफिसर अपनी पत्नियों के साथ क्लबों में जाते हैं. वहां एक दूसरे की पत्नियों के साथ नाचते हैं और......। बताओ वे लोग किस तरह गिरे हुए हैं.' और तभी मोहनलाल को बोध हुआ कि वह स्वयं तो बहुत पिछड़ा हुआ है. नारायण कितना महान है कि उसे हर विषय का अपटु डेट ज्ञान है.

उसने सोचा कि ऐसे महान व्यक्ति के लिए वह क्या करे ? उसके मन में यकायक विचार आया था कि नारायण के समक्ष विद्या को भी क्यों न समर्पित करदें ? क्या बिगड़ता है ? ऊंची सोसाइटी में यह सब चलता है. उसके मन में यह खयाल आया था कि यह ठीक ही रहेगा क्योंकि वह स्वयं विद्या को पूरी संतुष्टि नहीं दे पाता. उसे अपने इस निर्णय पर अपार सुख की अनुभूति हुई थी.

एक दिन बातों में विद्या के सामने यह प्रस्ताव रख ही दिया, विद्या ने उसे बहुत बुरा-भला कहा और साफ इंकार कर दिया. किन्तु मोहनलाल तो नारायण के प्रति सर्व समर्पण चाहता था . उसने नैतिकता को लेकर ऊंची सोसाइटी की वे सारी बातें विद्या के मस्तिष्क में यह भर देना चाहता था कि यह सब चरित्रहीनता न होकर गौरव की बात है और समय भी तो ऐसा ही है. हमें समय के अनुसार चलना चाहिए. उसे हार्दिक प्रसन्नता हुई थी जब विद्या ने हां भरली थी. वह आश्वस्त था कि नारायण ना नहीं करेगा.

लेकिन नारायण को राजी करने में उसे जरा दिक्कत आई. उसने स्पष्ट कह, दिया 'मोहन तुम्हारे साथ यह सब नही चलेगा. मैं तुम्हारी नज़रों में गिरना नहीं चाहता. जो आदर तुमसे मिलता है उसे यों ही खो जाने दूं. मोहनलाल को लगा था कि नारायण यह सब तो दिखाने के लिए कह रहा था. अन्दर से वह स्वयं यही चाहता था. कई बार उसने विद्या कि सुन्दरता के पुल बांधे थे. खैर, हुआ वही जो मोहनलाल चाहता था.

विद्या किसी काम से कमरे में आई लेकिन मोहनलाल ने उसकी ओर ध्यान ही नहीं दिया. वह तो छत में लटके भूत के चित्रों में खोया था.
नारायण के प्रति आज भी उसका वही बलिदानी भाव है. किन्तु परिस्थितियों के कारण नारायण का साथ काफी पहले छूट चुका है. अब तो मिलना क्या पत्र- व्यवहार भी नहीं हो पाता.

मगर बाद में उसने स्वीकार किया कि नारायण को विद्या समर्पित करके उसने बहुत बड़ी भूल करदी थी और आज भी उसके लिए वह पश्चाताप करता है. आखिर वह भी तो मर्द था. उसे भी लोक लिहाज का ख्याल रहना ही था.

मगर विद्या को आवश्यकता से अधिक छूट उसने दे दी थी. एक बार सतीश को उसने विद्या के साथ देख लिया था. बाद में ऐसे ही राधावल्लभ भी पाया गया. दोनों उसके आफिस के साथी थे और दोनों का उसके घर आना जाना था.

लेकिन यह सब उसे चुपचाप पी जाना पड़ा. चाहकर भी वह विद्या तक से कुछ न कह सका. कहता भी क्या ? कहने का अधिकार उसे रह भी क्या गया था ? लेकिन इन बातों ने उसे अन्दर से तोड़ कर रख दिया. फिर भी वह परिस्थिति से समझौता करता रहा. यही उसके जीवन की नियती थी.

इसी बीच गिन्नू का जन्म हुआ. अन्दर से उसे कोई प्रसन्नता नहीं हुई. जाने क्यों? कारण वह जानता था. लोगों ने उससे मिठाइयां लीं, दावतें लीं पर उसके लिए यह सब समझौता मात्र था.

उसे बच्चों के प्रति बड़ा ममत्व रहा है लेकिन अपने गिन्नू के लिए उसका मन कभी स्नेह से नहीं उमड़ा. यों वह उसे बहलाता, खिलाता-पिलाता, उसके साथ स्वयं खेलता लेकिन यह सब भी जैसे उसके लिए समझौता मात्र था. जब भी वह गिन्नू को गोद में लेता तो लगता कि एक पिलपिला सा मांस का लोथड़ा उसकी गोद में है. उसका मन उसे एक ओर फेंक देने को होता लेकिन कभी ऐसा नहीं कर सका

अचानक उसके मस्तिष्क में एक प्रश्न कौंध गया, "उसके साथ यह सब क्यों हुआ ?" कि विद्या कमरे में आ गयी. मोहनलाल ने धीरे से कहा, 'जरा चाय ही बना लो." "अभी लो" कह कर विद्या चली गयी प्रश्न अब भी उसके सामने ज्यों का त्यों लटक रहा था.

वह बचपन से ही दब्बू रहा है. जब वह छोटा था तो गली में और बच्चे उसे अक्सर पीटा करते. वह रो जाता और चुप होकर बच्चों में खेलने लगता और फिर पिट लेता. यही उसके बचपन का क्रम रहा. एक दिन उसने अपनी मां से एक लड़के की शिकायत भी की थी. लेकिन मां ने और तो और उससे सहानुभूति भी नहीं दिखाई. अपने पिता से उसे कुछ उम्मीद ही नहीं थी. वह उस दिन बहुत रोया था. उसने रोते-रोते अपनी शक्ल शीशे में देखी थी. उसके चेहरे पर एक अजीब सा संत्रास थी. उसे स्वयं अपने ऊपर दया आई थी. उसे लगा था यह एक ऐसा चेहरा है जिसका अपना कोई भी नहीं है. बस बचपन से ही उसने उप-लब्धों से समझौता करना सीख लिया था. दूसरा कोई मार्ग भी तो नहीं था.

वह बेबस हो गया और कुछ बैचेनी सी अनुभव करने लगा.

विद्या चाय ले आई. वह प्याले में इतना उतरता चाय पी गया. तभी उसे विद्या के चीखने की आवाज सुनाई दी. "तो हरामजादे क्यों गया था बाहर खेलने ?'

चाँद का एक दिन

● हिमांशु जोशी

पानी पर पड़ी छाया भीगकर गीली हो आई है.......छोटे-छोटे रंग-बिरंगे सायों पर पंख फूटने लगे हैं।......अपनी हथेली पर, चांदी के सिक्के की तरह रखकर चाँद को वह अंगूठे से मल-मल कर देख रहा है---यह भी तो सच की तरह खोटा है.......

उसे अहसास होता है--

उसके चारों ओर अब बड़ी-बड़ी घास उग आई है ---कंटीली झाड़ियां !---जिनमें कितने ही कीड़े-मकोड़े, सांप सनसनाते रहते हैं...... ..

वह मिट्टी में से गरदन ऊपर उठाता है ---

उसकी मुर्दा पलकों पर अब कुछ-कुछ दरार आ गई है---धूमकेतु की सी लम्बी लकीर !......और......कोई एक छाया दूर खड़ी, पारे की तरह कांपती मुस्कुरा रही है ---.......

आज किसी ने दूसरा चेहरा पहन रक्खा है दांतों की जगह सच्चे मोती, केंचुल की तरह, शरीर पर पारदर्शी, रंगहीन नसें ? रेखाएं...... ...

न जाने क्यों मुँझलाहट-सी होती है उसे ! वह सोचता है......किसी दिन वह सारे सच्चे मोती, स्वयं ही बीन-बीन कर बटोरेगा और किसी अंधेरी घाटी में, सदा के लिए डुबो देगा.........

यह शायद कोई समझती है.........

फिर भी किसी का जिस्म सिलसिला कर हुस रहा है......किसी की नसों में, पिछले कुछ दिनों से पिघला सोना बहने लगा है......संगमरमर के शरीर में गन्ध फूटने लगी है---उसने कितना चाहा है......अपनी दोनों मुट्ठियों में सारी गन्ध भर-भर कर मसले......उलीचे......और किसी की आंखों पर, अंगुलियों की पट्टियां बांध कर, शहद के सैलाब में, औंधे मुंह धकेल दे.......

किन्तु न जाने क्यों उसे लगता है---जिस दिन वह अपने रक्तमांस के हाथों से

के नीचे रेंग रहे है ......

अब वह देखता है—पत्थर पर बैठे किसी पागल पक्षी ने—अपने पंजों से नोच नोच कर सारे पंख कुतर दिए है. सफेद पंखों का एक टीला सा खड़ा हो गया है......
और अब बिना परों का पंछी आसमान पर उड़ानें भर रहा है......

कुछ गिद्ध उचक-उचक कर चल रहे है—उसे घेरने की घात मे......

• • •————————

वह करवट बदलता है ......उसे लगता है—पिछले कुछ दिनों से हवा का दबाव *बढ़ गया है और उसके भार में वह निरन्तर दबता चला जा रहा है......*

उसकी दृष्टि नुकीली सुई की तरह कुछ दीवारों को बेधती पार हो जाती है... कुहासे की धुंधली किरणें उसके चारो ओर मकड़ी का-सा जाला बुन रही है. उसके सीने पर किसी ने बड़ी-बड़ी सलाखें ठोक दी थी...जिनमे अभी तक भी लहू टपक रहा है......

वह विवश-भाव से चारो ओर देखता है—

दुधमुंहे अबोध बालकों के सिरो के सारे बाल सफेद हो गये है और कोई मां बैठी–अपने शरीर पर के कांटों को तोड़-तोड़ कर, खून के दरिया में डुबोती जा रही है......

मचान मे बैठा कोई सफेद रक्त की स्याही से कुछ लिख रहा है......और समीप ही आग की फसल उग आई है......कुछ हाथों को हल की मुठी थामे, आग का बीज, झोली मे निकाल-निकाल कर, खेतों में बिखरते, उसने अपनी आंखों से देखा है—

उसके खून से सने, पत्थर के अधर, अचरज से खुल जाते है. वह ठण्डे पसीने से बुरी तरह नहा आया है. पसीने की हर बूंद में उसे आदमी की आकृति के असंख्य कीड़े रेंगते दिखाई देते हैं !......

मुर्दा मां, मुर्दा शिशु का हाथ थामे है. दो भूत खड़े है—दोनों चुप......
वह पलकें मलता है. देखता है—*अपने तन पर कालिख पोते छाया की चार काली आकृतियां खड़ी हैं......*राख के आदमियों का मुर्दा-सागर लहरें ले रहा है—अट्टहास करता हुआ......

उसे अपनी हाड़-मास की उंगलियों से घृणा हो आती है......वह बार-बार अपनी हथेलियों को, देखता है. खून से सनी उंगलियों को देखता है. मरे आदमी की दृष्टि—एक वितृष्णा का भाव...

उसे अहसास होता है---सामने दीवार पर, छत पर, मिट्टी-पत्थरों पर अंकुर की तरह हाथ ही हाथ उभर आए हैं---लाल लाल नाखूनों वाले असंख्य हाथ......

कमल पर कांटे हैं......कोई अंगुल-भर का आदमी, जिसकी कुहनियों पर उंगलियां फूट आई हैं--- अंजुलि में भर-भर कर सागर रीता कर रहा है--गेंद की तरह पृथ्वी को आसमान में उछाल कर सीमेण्ट के पक्के फर्श पर बार-बार पटक रहा है......और अंधेरे बिल में घुसा अन्धा सांप अपनी पूंछ मुंह में डाले कुछ सोच रहा है......

सामने पीपल के सूखे पेड़ों की ओट---वह देखता है---भूखे भेड़ियों में मृत्यु-संग्राम छिड़ा है. वे अपना मांस स्वयं नोच-नोच कर खा रहे हैं......

और बहुत से, बिना पांवों के बौने आदमी, अपना कफन स्वयं ओढ़े, मशान की ओर मुंह लटकाए, आज अकेले जा रहे हैं... ...

• •

सड़क की इज़्ज़त

• दुर्गा माहेश्वरी

सुबह की रोशनी से नहाई हुई मा सोये रज्जू को जगाना चाहती है. उसकी हल्की-हल्की आवाज़ों में सूरज सिर पर आने तक के कामों में डूबे रहने के तकाज़े घुले हैं. और रज्जू सुबह के सपने से बोल रहा होता है चेहरे पर कसाव आता है, और उतर जाता है. उसके दाहिने हाथ की मुट्ठी बंध गई है. मा की हल्की-हल्की आवाज़ों को बाहर फेंकते हुए उसके शब्द पूरी कोठरी में भर जाते है. "आज हड़ताल है, आज हड़ताल है, आज की सड़क हमारी है," मां हंस देती है पर रज्जू की मुट्ठी का तनाव नहीं खुलता. कोठरी की कच्ची दीवार पर मुट्ठी की हथौड़ी टकराती है. नन्ही चोट से बेजान दीवार को क्या हो, हां नींद के बंधन अवश्य खुल जाते हैं.

मा ! आज हड़ताल है ना ! आज सारा दिन चौड़ी सड़क पर कबड्डी खेली जाएगी तंग गली में खेल का मज़ा ही नहीं आता. रज्जू के भारी-भारी शब्दों के नीचे नींद का असर दबा रहता है. उसे चाय की याद भी नहीं रहती उसे यह भी याद नहीं आता कि मां के साथ उसे मकान वाले बेबी को खिलाना भी है. पर कोठरी को पूरी तरह देखते ही वह उदास हो जाता है. उसकी चेतना झुक जाती है. सीलन भरी अंधेरी कोठरी जिसमें गरीबी बुरी तरह पसरी बैठी है कि उसे अपनी आज की खुशी को बिठाने के लिए जगह ही नहीं मिल पा रही मा मां अपनी दुनिया पर प्यार बिखेरती हुई रुकती है-बेटा,चाय तो पी ले, खाने-पीने की तो हड़ताल नहीं है ना ?

"आता हूं" हाथ, मुंह धोने के साथ किसी उपाय की खोज में लग जाता है कि आज छुट्टी किस तरह मिल सकती है !

चाय की पहली घूंट के साथ घोषणा करता है-मां ! आज बेबी को खिलाने नहीं जाऊंगा,"

"ना बेटे, वह महीने में से रुपया काट लेगा"

"तो क्या हुआ ! कभी-कभी ही तो ये सड़कें खाली मिलती हैं, आज तो सड़क

पर जी भर खेलूंगा आज नहीं जाऊंगा, नहीं जाऊंगा" आंखों में आया पानी गला भी भर देता है.

'अच्छा, रो मत, न जाना. आज तो मालिक भी घर में ही होंगे, वे ही खिला लेंगे. उन्हें भी तो घर में रहने को ऐसे ही दिन मिलते हैं वरना उन्हें कहां समय रहता है जो व्यापार छोड़ कर खेल बैठलें. हंसी और व्यंग से रज्जू हल्का हो जाता है कुछ समझा कुछ न समझा सा वह आवाजों के साथ बाहर की ओर फिसल जाता है.

"अरे रज्जू! कुछ रोटी तो खाता जा, फिर पता नहीं कब लौटे तू" अनसुनी आवाज़ डूब गई. गली के मोड़ पर खड़ी बच्चों की भीड़ खाली सड़क को बादशाही नजरों से देख रही है. फ़ैसला होने को है कि कौन सा खेल खेला जाय? पसंद-जिरह में कोई किसी से पीछे नहीं रहना चाहता. और दिनों की अपेक्षा साफ कपड़े पहने दरबारी खेल के दरबार में उतरने को छटपटा रहे हैं. गरीब होकर किसी को भी अमीरों की सड़क पर जाना अच्छा नहीं लगा. आज सभी को सड़क अधिक चौड़ी लग रही है. और दिनों ये सड़कें पैसे वालों की होती हैं. मोटरों-ट्रकों की होती हैं इनका खाली तन देखना मुश्किल हो जाता है. न ये बड़े लोगों को छोड़ती है और न बड़े लोग ही इन्हें.

मगर आज इन्हीं बड़े लोगों की सड़क पर रज्जू की उमर को राज करना है. दिन भर खेलने के उत्साह से सारा संकोच भाग गया है. कबड्डी खेलने के निर्णय के साथ टोलियां आमने सामने हो जाती हैं. अलग-अलग दूरियां, अलग-अलग खेल-सभी दर्शक-सभी खिलाड़ी.

रज्जू की टोली केवल दो की है. कभी चोर-चोर कभी कबड्डी. आज इनकी सीमा गली के मोड़ से बाहर के अदृश्य छोर तक फैल गई है बीच बीच में खेल रुक जाता है. टोलियां सहम कर फुटपाथों पर कतारें बन जाती हैं—पुलिस की काली गाड़ियां राक्षस की तरह गुजर जाती हैं. बार बार इन्हीं गाड़ियों की भाग-दौड़ से उनका भय टूट जाता है. शाम होते होते उनका खेल काली गाड़ियों को चिढ़ाने और उस पर हंसने में बदल जाता है गाड़ियों को घेर-घेर कर चिढ़ाने के आनंद से दिन भर के खेलने की थकन धुल गई है.

धूप का बहाव पश्चिम की ओर झुक गया है. सारी गर्मी सूरज में घुल-घुल कर अपना अस्तित्व मिटा रही है. चितरंजन एवेन्यू की चौड़ी सपाट सड़क रंग बिरंगी मोटरों के शृंगार बिना फीकी लग रही है. इस सड़क को भी मानो अपने चाहने वालों की एक दिन की जुदाई भी सहन नहीं हो पा रही. लैम्प-पोस्ट जल गये हैं. हल्की-फीकी रोशनी के साथ कुछ बच्चों के चेहरों पर थकान उभर

आई है. कुछ ताश की चौकड़ियां बनाकर बैठ गये हैं और कुछ थकान के बावजूद भी सड़क के मोहवश खेल को लम्बा किये जा रहे हैं—सड़क क्या हुई—थोड़ी देर के लिए ही बसाई गई बस्ती हो. दूर से पुलिस की एक गाड़ी भर-भराहट के साथ आ रही होती है. बच्चों को सड़क बीच लेट जाने की सनक सूझती है. गाड़ी बचाव करती हुई निकल जाती है लेकिन भीतर बैठे पुलिसवालों की घुड़कियों ने बच्चों के उत्साह को और बढ़ा दिया है. अब यही उनका खेल रह गया है, इन्हें इसी खेल में अधिक मजा आने लगा है. दो तीन बच्चे तो इस तरह पसर गये हैं मानो घर का आंगन हो. दिन भर के आनन्द की खुमारी उनकी आंखों में नीद भर रही है.

पर दूर से आती पुलिस गाड़ियों को चिढ़ाने का उत्साह उनकी नीद पर आ बैठता है. गाड़ियों की रफ्तार तेज़ है. कहीं उपद्रव अवश्य हुआ है, शायद उसे दबाने ही अपनी आवश्यकता सिद्ध करने ही जा रही हैं. महानगर की हड़ताल और शान्ति से बीत जाए यह कैसे हो सकता है ?

काला वातावरण, काली सड़क और आधी आंखें खोले भागती काली गाड़ियां कालेपन को इस छोर से उस छोर तक भरने में व्यस्त है. अलग-अलग खड़ी टोलियां कार्य की गम्भीरता नहीं समझ पाती. आज पूरी रात तक चौड़ी सड़क इनकी अपनी है और ये गाड़िया जो है उनका एक दिन का अधिकार छीनने से बाज नहीं आती.

टूट-टूट कर बनता हुआ गाड़ियों का सिलसिला एक टोली के करीब पहुंचता है. टोली का गुमा इस सिलसिले को तोड़ देना चाहता है. एक बच्चा गाड़ी को घेरने की पहल करता है. गाड़ी बचाव कर निकल जाती है पर दूसरी गाड़ी एक चीख को दबाती हुई निकलती है. चीख आस-पास की टोलियों से टकराती है. सड़क के एक टुकड़े के चारों ओर फटी फटी आंखों का घेरा घूमने लगता है. किसी का चेहरा नहीं दिखता दबाकर लेपा गया मांस एक टुकड़ा हाथ एक पैर और खून ! सड़क की घटना खबर बन कर गलियों में घुस जाती है. बढ़ती भीड़ रज्जू की मां भी है. वह घेरा तोड़ती है. देखती है हाड़-मास-खून का घोल जैसे सड़क पर फेंक दिया हो. इसे अपना रज्जू कैसे कहे ? नहीं नहीं यह रज्जू नहीं है. सड़क के टुकड़े के घेरे खड़ी भीड़ में केवल रज्जू ही नहीं है बूढ़ी आंखों को विश्वास करना ही पड़ता है—यह फटी पिचकी देह उसके रज्जू की ही है. खुली सड़क पर खेलने के सुख का सपना लेकर उठी उसकी दुनिया रात होते ऐसी ही जायगी—"रज्जू रज्जू बेटा" चीख भीड़ की तहों तक खुभ जाती है" खेलने आया था सड़क पर, सड़कें गरीबों के लिए नहीं होती बेटे, वे गाड़ियों लिए होती है, वे अमीरों की होती है, यह हमारी कैसे हो सकती है ? गरीबों एक दिन की अमीरी भी महंगी पड़ती है, इतनी बड़ी सड़क पर अंधेरी रिशों के गरीब खेला करें—सड़क की इज्जत बिगड़ती है, रज्जू ! तू क्यों सड़क पर यह, सड़क हमारी नहीं काली चिकनी गाड़ियों की है, बड़े बड़े की है ।●●

●

एक उदास दोपहरी

○ सागर

वह आई और आकर सीधी चुपचाप कुर्सी में धंस गई. वह दोपहर की नींद से जाग अधखुली आंखों से उसे देखता है और उसकी दृष्टि धूप से नहाये उसके लाल चेहरे से उतर ग्रीवा से फिसल, उसके उभारों पर अटक जाती है. वहां भी उसे कुछ पसीना सा लगता है. अपनी ओर उसकी दृष्टि को पा वह फीके-पन से हल्का सा मुस्करा देती है. सूखी हवा में भी एक वासंती फूल का हिलना, वह इधर उधर अपनी निरर्थक दृष्टि घुमाता है, आंखें चारों तरफ घूम फिर सामने बैठी 'उसके' चेहरे पर अटक जाती है. पंखा चल रहा है, पर लगता है, गर्मी बढ़ रही. वह अधलेटा सा हो पूछता है-'कैसी हो•••तुम'
'अच्छी'

'सुनो' उदास दीखती हो तुम शायद. कई दिनों बाद आई ?
'नहीं तो'

'सच मुझे नहीं बताओगी, इतनी दूर हो ?'

'नहीं, पर•••वह जरा रुकती है-क्या बताऊं ? जैसे आवाज़ रुंध गई हो.
'क्या आज फिर कोई बात हो गई घर में ? वह जैसे अभी भी चुप है. तभी उसे लगता है उसकी नीली झील में गीलापन झांक उठा है. वातावरण जैसे और अधिक बोझिल हो जाता है.

फिर जैसे वह कुछ सोचने सी लगती है. वह उसे टकटकी बांध निहारता है. उसके हाथ कुर्सी पर निर्जीव से पड़े हैं, चूड़ियां नीचे खिसक आई हैं. उसके पांव का अंगूठा मुड़ता है और ज़मीन पर कुछ हरकत करता है. पखे की सरसर— वह आंखें बन्द कर लेती है. वह जैसे ऊब जाता है चुपी से. पूछता है 'जल पिओगी ?'

'तुम्हें भी प्यास लगती है ?'

प्रश्न के उत्तर में प्रश्न सुन उसकी दृष्टि फिर उसकी ग्रीवा में पड़े लॉकेट के

ाथ उतर वही उभारों पर जम जाती है, नजर मिल नहीं पाती, वह उसकी
दृष्टि को महसूस कर, खड़ी हो जाती है.
पानी लाऊं ? पियोगे ?'
'हां, थोड़ा पी लूंगा.'
वह जाने को मुड़ जाती है, वह उसको जाती हुई देखता है, देखता रहता है,
बस बोझिल सा रहता. दिमाग में कोई विचार नहीं—फिर जैसे उसकी दृष्टि अटक
जाती है. मन कहीं ओर···एक चित्र···मृग-शावक की तनाव भरी उछाल मुद्रा···
सामने फैला नीला आकाश. हल्के हल्के वातास के झोंके···फिर···उस पार दूर
केवल संकल्प···संकल्प···जिजीविषा···.

पानी नहीं पीना ?' वह देखता है, वह गिलास लिए खड़ी है. वह बिना कुछ
कहे पानी लेने को हाथ बढ़ाता है, उसकी अंगुलियां छू जाती है एक ठंडा बर्फ सा
उष्णताविहीन स्पर्श. जैसे···जीवन का यथार्थ···बासी गोश्त···ठंडा गोश्त···
निर्जीव···सा. पानी पिलाकर वह जैसे स्वत: ही कुर्सी के बजाय पलंग की
पाटी पर बैठ जाती है. वह स्वयं थोड़ा खिसक उसके लिए स्थान बना लेता है.
बाद में आंखें ढक पड़ जाता है. उसके हाथ जैसे बिस्तर की चद्दर की सलवटें
निकाल रहे है. सलवटें. 'फिर मैं जाऊं ?' वह पास में खिसक आ पूछती है.···
नींद हो लोगे क्या ?' वह आंखें खोल हल्के लाल होंठो की ओर देखता है,
हल्की हल्की पपड़ी युक्त···कगारें सी खींची···सन्नाटे बुझा हुआ सभी कुछ···.
वह सामने कोने की दीवार के सीलन भरे प्लास्टर को देखने लगता है.

इसका हाथ उसके हाथ को अपने में ले लेता है. एक हल्का ठण्डा, बेजान स्पर्श.
पंखा घूम रहा है, बोझिल उमस पसर रही है पसीने की हल्की गन्ध समा
रही है.

तभी वह उठकर उसे बाहों में भर लेता है, उसकी बाहें भी गोल हो जाती हैं.
उसके हाथ जैसे कुछ ढूंढते है, स्थूल यथार्थ को पा रुक जाते है और रुके ही रह
जाते है स्पन्दनहीन. वह उसकी ओर देखता है. उसकी आंखें सामने लगे कलेन्डर
पर टिकी है, खाली खाली सी दो आंखें. वह पूछता है—तुम···मुझे प्यार नहीं
करती जितना···मैं···करता हूं ?'

वह जैसे स्वप्न में जागती है, उसके और अधिक पास सिमट कर आने का प्रयास
करती करती है—'बस जितना प्यार करती हूं तुम्हें.' वह उसे भींच लेता है.
उसके अधर आपस में समझौता करते हैं. वह महसूस करता है उसके पपड़ी युक्त
होंठ बड़े ठंडे है.

तभी वह कहती है—'मुन्नी, कल जो वह रहे थे, मैं उनका कुछ भी ख्याल नहीं

शहतीरों से ऊपर

• श्रीहर्ष

पिछले कई दिनों से वह एक विशेष प्रकार के भय से परेशान है. बात करते समय बार बार अपने चश्मे को उतार कर पोंछता है. उसे बोलने वाले व्यक्ति को सांस में जहरीले कीटाणु उड़ते नज़र आते हैं. अगर चश्मे के गिलास पर कीटाणु बैठ गये तो उसे मोतियाबिंद हो जायेगा. वह मरने के भय से इस तरह भाग रहा है जैसे मौत उसके कन्धों पर ही बैठी हो.

उसे कुर्सी पर बैठने से बड़ा डर लगता है. शायद कुर्सी का बीच वाला हिस्सा टूट जाए और वह उसमें ही फंसा रहे. वह बैठने के पहले कुर्सी को अच्छी तरह ठोक बजाकर जांचता है. कागज पर लिखने के पहले कलम स्याही अपने आस-पास का माहौल, पांच बार चक्कर लगाकर देखता है.

वह जब भी शहर छोड़कर बाहर जाता है अपने पीछे एक वसीयत लिखकर छोड़ देता है. और लौटकर आने पर उस वसीयत को फाड़कर फेंक देता है. वसीयत लिखते वक्त अक्सर 'वह' रोने लगता है. पत्नी को यह चीज, बच्चों को यह चीज, प्रेमिका को......... लिखते लिखते उसकी उंगलियां ठहर जाती हैं. वह उसे एकदम भूल जाना चाहता है. फिर भी उसकी याद आ जाती है. वह तय करता है कि अब उसका नाम कभी भी नहीं लिखेगा. और फिर उसका नाम बदलकर लिख देता है. उसे सन्तोष होता है कि नाम बदलकर लिखा है.

वह भय के मारे तमाम चीज़ों से कटकर अलग हो जाना चाहता है. परिवार में उसे कोई रुचि नहीं है. पत्नी शब्द उसे बहुत ही वाहियात लगता है. उसे नया उपाय ढूंढ़ने के लिए वह घंटों ही बैठकर सोचता है. और जब कुछ भी हाथ नहीं लगता तो थककर पत्नी को लेकर सो जाता है. पत्नी के साथ सोते वक्त भी वह भय से ग्रस्त रहता है. उसे पत्नी कई प्रकार की बीमारियों का घर लगती है. अधिक बच्चे होने का कारण वह पत्नी को ही मानता है. घर उसे कब्रगाह की तरह लगता है.

भय के कारण मजबूर वह किसी एकान्त स्थान में रहना चाहता है. अक्सर अपने

लिखा, लखनऊ अगले सप्ताह आ रहा हूं.

पत्र छोड़ने के बाद 'वह' फिर वसीयत लिखने बैठ गया. पत्नी-बच्चे और प्रे-मि-का! नहीं उसकी बहिन! उसे विश्वास था वह 'इम्पोटेंट' नहीं कहेगी.

वह अगले सप्ताह लखनऊ पहुंच गया. रास्ते में उसे गाड़ी के 'एक्सीडेंट' हो जाने का भय लगा रहा.

लखनऊ उसे अच्छा लगा, लेकिन भीड़ देखकर वह गंभीर हो गया. रास्ते में चलते वक्त 'वह' अपने मित्र से सड़क पर खड़े मकानों की उम्र पूछता रहा. मित्र से बात करते वक्त अपने चश्मे को उतारकर पोंछना 'वह' नहीं भूला था.

जिस कमरे में उसे ठहराया था 'वह' उसके छत की भूगोल जानना चाहता था. वह इतिहास-भूगोल राजनीति—सब मिलाकर मूल्यों पर बोलने लगा 'उसके' मित्र ने कहा 'उसकी' बहिन को बुला लाता हूं. खाना साथ ही खायेंगे.

'वह' कमरे में अकेला बैठा बहुत कुछ ऐसा सोच गया जिसका कोई अर्थ नहीं था. उसे लगा हवा तेज होकर तूफान की तरह दौड़ रही है. सारे शहर के मकान हिल रहे हैं उसके कमरे की दीवारें अपने जोड़ छोड़ कर मिल जाना चाहती हैं छत में लगे शहतीर नीचे उतर रहे हैं वह भूकम्प के घेरे में है और मकान उसके ऊपर गिर रहे हैं उसकी बहिन एक मकान के नीचे दब गई है. वह उसे किसी भी तरह बचा लेना चाहता है वह सरक कर उसके दबे शरीर को खींचकर बाहर निकाल लेना चाहता है उठकर जैसे ही दीवार के पास पहुंचता है उसका मित्र 'उसकी' (प्रेमिका) बहिन के साथ आ जाता है.

उसके शरीर को पसीने से भीगा देखकर मित्र घबरा जाता है. नब्ज टटोलता है. उसके सारे शरीर में मालिश करता है वह 'उसकी' बहिन को देखकर अपने आपको स्वस्थ महसूस करता है. वह उससे सामाजिकता के बारे में बातें करना चाहता था. लेकिन सब कुछ भूल गया. लखनऊ आते वक्त उसने गाड़ी में सोचा था कि उसकी बहिन को लेकर सो जाऊंगा और तीन दिन तक कमरे से बाहर नहीं निकलूंगा लेकिन दूसरे ही क्षण उसे अपने सोचे पर बहुत गुस्सा आया था. वह केवल उसे देखता रहा. फिर उसने पूछा कि क्या तुम बता सकती हो कि मैं 'इम्पोटेंट' लगता हूं 'उसने' उठकर दरवाजा बन्द किया दरवाजा बंद होते ही वह चिल्लाया. उसे लगा 'उसकी' देह से एक ऐसी दुर्गन्ध आती है जो मार डालेगी. वह वहीं बेहोश हो गया.

उसका मित्र उसे हॉस्पिटल ले गया. वह हॉस्पिटल के बिस्तर पर भी डरता रहा. होश आने पर भी अपने आस पास बिछे बिस्तरों को देखकर आंखें बन्द कर लेता. उसने बड़ी मुश्किल से करवट बदली और पास खड़ी नर्स से कहा- 'मुझे भूख लगी है.' धीरे धीरे स्वस्थ होकर वह अपने घर लौट आया.

अपने कमरे में पहुंचकर फिर उसने वसीयत फाड़ कर फेंक दी. इस बार उसने प्रेमिका वाले घेरे को नहीं फाड़ा. उसे 'प्लाण्ट रोटड टूगेदर' पढ़ना बहुत अच्छा लगा. अपनी प्रेमिका को पत्र लिखा— 'मैं स्वस्थ हूं कल तुम गांन पार्क में जरूर मिलना.' ● ●

दो चेहरे

• अशोक आत्रेय

...अब और अधिक मुझे ऐसा नहीं सोचना चाहिए. हर आदमी पूरी तरह से भी तो अच्छा कहां होता है. कोई न कोई कमी, बुराई या और कुछ तो इक्के दुक्कों ही को छोड़कर सब में देखने को मिलता है. फिर चचा ने तो मुझे इतना बड़ा किया है पाल पोसकर ! जाने क्यों मैं यह सब उनके बारे में सोचने को बाध्य हो गया हूं.

मैं यकायक ही चचा के व्यक्तित्व पर आ गया हूँ. उनका गोल गोल मुंह और बड़ी बड़ी आंखें. कितनी प्यारी हैं उनकी तितली-कट मूंछे. ये तितलीकट वैसे कितना गंदा मूँछे काटने का हिसाब है, पर चचा के चेहरे में तो ये खूब खिलती है, चचा के सुर्ख फूल से चेहरे पर. वैसे और लोग, जिन्हें शायद कुछ भी ज्ञान नहीं, जाने क्या सोचकर ऐसा कट पसंद करते हैं. न ये लम्बे चेहरे में जँचती हैं और न गोल चेहरे में ! पर चचा का तो नाक भी कितना मूछों से मेल खाता सा लगता है !

तो क्या मुझे यह समझना चाहिए कि मैं कभी भी अपनी किसी भी बात के एक ही पहलू पर अडिग नहीं रहा ? हो सकता है, बल्कि ऐसा है ही शायद. किन्तु फिर भी ऐसी बातों में मुझे इसके एक ही पहलू पर गौर करना चाहिए. तो फिर इसका मतलब यह है कि मैं चचा से साफ कह दूँ--चचा मुझे आपकी ये आदतें पसन्द नहीं, आप इन्हें सुधारने की कोशिश करें. पर कहीं ऐसा तो नहीं होगा कि शायद चचा इस बात का बुरा मान जायं ! जाने क्या और ही सोचलें. अरे हां तो फिर मैं इसी बात की परीक्षरूप में भी तो उनसे कह सकता हूँ. यहां साफ कह देने की इतनी आवश्यकता भी क्या है ? पर यह तो स्पष्ट मुझे तय कर लेना है कि मुझे किसी न किसी तरह चचा से कहना ही चाहिए !

मैं अपने बिस्तर से उठ कर आँगन की बत्ती जलाता हुआ बाहर आ गया हूं. पास-पड़ोस के सभी लोग सो रहे हैं. ठीक ही [illegible] है, यह भी कोई समय है बाग में चक्कर करने का. पर मैं ही जाने क्यों दू[illegible]रों के लिए इतना चिन्तित हूँ. वैसे

आज के जमाने में कौन किसी का है . पर है भी तो है, पर वह क्या यो रात-रात जगने के लिए, नींद हराम करने के लिए है ?

पर मैं आखिरकार यहां खड़ा भी कब तक रहूंगा. पथा आ जाएंगे तो आ जाएंगे, नहीं तो नहीं. उनका कोई निश्चित ठिकाना भी तो कब रहा है. कहीं अधिक पी ली होगी तो गिर जाने का खतरा उन्हें नहीं हो सकता ? वैसे अभी यही कोई ग्यारह ही बजे होंगे. पुलिस के सिपाही भी तो गश्ती के लिए थोड़े ही है किन्तु उनके आने जाने की क्या कोई निश्चितता है ? उनका क्या, वे चाहे जब आए ? पागली है पागली ! कोई चोरी हो या डाके पड़े, उन्हें क्या ? वे तो बस महीने के महीने तनख्वाह बटोरने के लिए बने है जैसे ! फिर आने भा तो क्या नो की तरह कर लेते है ? कौनसी यहां चोरियां नहीं होती ? उनके आने न आने से फर्क भी क्या पड़ता है ! वे क्या कम हैं, पूरे चोरों से मिले होते हैं.

मैं बाग में पानी देने लग गया हू . क्यारियां सूखी पड़ी है, शायद कल पानी कम मिला हो. पर कल मुझे यों आज की तरह उठे रहना कब पड़ा था ? चचा कल शायद जल्दी आ गए थे ! पर आखिर यह भी कोई आदत है, कभी जल्दी कभी आने का कोई अता-पता ही नहीं ? यो कौन किसके लिए बैठा रहता है ?

सामने ही सूनी सड़क पड़ी है काले स्याह 'बेल्ट' की तरह बस्ती की 'कमर' में पड़ी. सड़क बने हुए करीब दो चार साल हुए है, पर अभी तक कितनी चान्ती पड़ी है. और शहरों मे तो सड़को के बीच बीच में बड़े छोटे आकार के 'डॉमर' के पैबन्द लगे रहते है यहां ऐसा कहीं भी नहीं दिखलाई पड़ता. वैसे यहां की बस्ती भी तो कोई खास बड़ी है नहीं ? फिर इतनी जल्दी सड़क बिगड़ जाने का प्रश्न ही कहां उठता है ? एक कमी जरूर है यहां की सड़को के दोनों ओर छायादार वृक्ष नहीं है, नहीं तो इनका भी एक अलग आनन्द होता !

पानी के पाइप को एक दूसरी क्यारी में खिसका दिया है. गुलाब और मनी-प्लान्ट की कई नई नई कलमें इलाहाबाद से मंगवाई हैं. गुलाब के खिले हुए फूल और मनीप्लान्ट के पत्तों में कितनी समानता है ?···खुरपी करने लग गया हू. क्यारी मे पानी भर आया है. सामने की सड़क से सीटी की आवाज आई है पुलिस शायद गश्ती के लिए आ गई है !

सामने से एक जीप तेजी से निकल गई है. पुलिस इन्सपेक्टर ने सलामी मुझे ठोक दी ही. मेरी गर्दन प्रत्युत्तर में झुक गई है. इतनी गए रात भी मैं कितना स्वच्छन्द हूं. पर ये भी कोई स्वच्छन्दता है ? यहां तो मजबूरी है, आफत है. अपने किसी किए का कोई बाकी रहा भुगतान है, यह तो जैसे !

चौकीदारी करने ही को पैदा हुए हैं. अभी आएंगे---क्या पता आएं ही ? बस आ भी गए तो पूरे नशे में धूंच होंगे. आंखें लाल होंगी---कहेंगे---बेटा. यों क्यों मेरी राह देखता है ? मेरा क्या, मैं तो बुड्ढा हो चला हूं जाकर यों ही सो जाता ! अपने आप ही बिस्तर पर आकर पड़ रहता ! बस जरा कुंडी खोलकर रक्खा कर.

मैं झुंझला गया हूं. बुड्ढा हो चला हूं, कैसे कह देते हैं, शरम भी नहीं आती ! बुढ़ापा क्या उनका मुझे यों परेशान करने को आया है ? फिर यह और कहते हैं-बेटा मेरी परवाह न कर. मैं परवाह न करूं तो कौन करे उनकी परवाह ? खुद ने क्यों नहीं पैदा कर दिया किसी परवाह वाले को, मेरी उन्हें इतनी ही परवाह है तो ? वह क्या शराब के ठेकेवाला करेगा ? उससे तो यहां उन्हें लाते तक नहीं बनता, कभी किसी खराब हालत में! उसने पैसे खींचने के लिये ही तो शराब का ठेका लिया है---उसे शराबी के गिरने पड़ने से क्या मतलब. कोई पिए तो पिए नहीं पिए तो नहीं पिए. वह कौनसा किसी के घर पीले चावल भेजकर किसी को बुलवाता है ? जिए या मरे कोई, उसे अपनी दुकान चलाने से मतलब !

......परवाह न कर आखिर मैं न करूं तो कोई भूत आएगा उन्हें देखने ? परसों क्या कम नशा था. बुरी तरह से टांगें लड़खड़ा रही थीं. ठीक से बोला तक तो जाता न था. मैं न होता तो कहीं दीवारों से टकराते टकराते पागल हो जाते, सिर फोड़ लेते. मैंने ही तो उन्हें खाट में लाकर तरतीब से सुलाया था. उनके पैर दाबे थे. रातभर जागकर उनकी देखरेख की थी. फिर कहते हैं---अपने आप ही बिस्तर पर आकर पड़ रहता! आज ये ही देखता हूं, कौन दूसरा पर्वाह करता है उनकी ?

पूर्ण आवेश की स्थिति में कमरे की चिटकनी लगा अन्दर आ गया हूं. घड़ी में डेढ़ बज गया है.

अब तो मुझे साफ कह देना होगा, चाहे उन्हें बुरा लगे या भला. फिर सच्ची बात तो सभी को बुरी लगती है. ये रोज रोज़ का झमेला आखिर कब तक मैं झेलता रहूं. कल ही अकाउण्टेन्ट ने कह दिया था--- साहब बात का बुरा न लें तो एक बात कहूं--- आपकी सेहत बहुत कमजोर होती चली जा रही है. ठीक भी रहे तो कैसे, आखिर ये रतजगे क्या सेहत बिगड़ने में कम योगदान दे रहे हैं ?

घड़ी के कांटे फिर आगे को खिसक आए हैं - कई छोटे बड़े हिस्सों में जैसे ये रात काटते चले जा रहे हैं.

एकबार को बाहर देख लूं तो ठीक रहेगा. वैसे उनके आने के समय को एक-डेढ़

ज्यादा ही तो शायद अधिक हुआ है. शायद यह अधिक समय उन्होंने वहां सपरावर में बैठे बैठे गुजार दिया होगा.

यकायक ध्यान हो आया है अपने इरादे का. मैं मजबूर हो गया हूं. बस सोच लिया सो सोच लिया. अपना क्या, यहां तो आराम से खाट में पड़ रहे हैं. उनकी देखभाल करने वालों की क्या कोई दुनिया में कमी है ?

मजबूरी में घड़ी के कांटों ने थोड़ी सी आगे की रात और काटी है, पर एक एक क्षण विचित्र सी कसमसाहट में बीत रहा है. सहसा ही मुझे लगा है जैसे चचा लड़खड़ा कर गिर पड़े हैं, चिल्ला रहे हैं—बेटा सुधीर, बेटा सुधीर. उनकी आंखों में आंसू ढुलक आए हैं—मैं वहां नहीं पहुंच रहा हूं——वे रोते जा रहे हैं, उनकी लाल लाल आंखों से आंसू गिर रहे हैं. वे जोर जोर से किवाड़ खड़खड़ाकर वहीं बैठ गए हैं. चचा करीब पन्द्रह मिनट से बैठे हैं बाहर, आज शायद उन्होंने शराब अधिक पी रखी है

चिटखनी हटाकर बाहर आ गया हूं. वही पुरानी वीरान कुर्सी ! कितना अभागा हूं मैं, पर इसका कारण क्या मैं खुद नहीं हूं ? परन्तु अब मैंने फैसला कर लिया है बस ! चचा के आते ही सब कुछ आज ही तय करके रहूंगा. उन्होंने मुझे पाला पोसा है, बड़ा किया है यह उनका कर्तव्य था ऐसा तो होना ही चाहिए था. फिर मुझमें बचपन में ऐसी कौनसी गन्दी आदतें थीं, जिनसे चचा परेशान होते. वे स्वयं ही तो कहा करते हैं—बेटा बचपन ही से तू बड़ा सयाना, समझदार रहा है, वैसे छोटे बच्चों में स्वभावतः शरारत होती ही है, परन्तु तेरे जैसा सुशील लड़का तो मेरी जिन्दगी में कभी न आया.

तो फिर क्या मेरा यह कर्तव्य नहीं कि मैं उनके बुढ़ापे की लकड़ी बनूं ? मुझे अवश्य बनना चाहिये. पर हर चीज की भी कोई तो हद होती ही है. और फिर शराब ? इतनी अधिक शराब पीना तो बहुत ही बुरी आदत है. ऐसी क्या आदत जिसमें खुद के सुख-चैन की तो बात अलग, दूसरों की भी नींद खराब हो.

मैं उनकी इस आदत पर फिर झुंझला आया हूं. फिर चिटखनी लगाकर अन्दर आ गया हूं. 'ड्राइंगरूम की बत्ती अनायास ही जला लेता हूं रेडियो का स्विच ऑन कर देता हूं. पश्चिमी धुनों के बीच अपने आपको भूल जाना चाहता हूं. धुनें मुझे खूब उलझा रही हैं. पश्चिमी उतार चढ़ाव खूब भा रहा है. गौर से सोचने पर लगा है कि नींद अब तक उड़ चुकी है. 'ड्रार' से चाबी लेकर स्टोर में घुसता हूं – सन्दूक खोलकर पुराने पत्रों का ढेर निकाल लेता हूं

पड़ोस से आई घड़ी के अलार्म की आवाज ने मेरा ध्यान भंग कर दिया है चार बज गए हैं मैंने रेडियो बन्द कर दिया है. फिर बाहर आ गया हूं. ताज़गी सा

आनन्द चचा की शराबी आंखें नहीं लेने देतीं. आज तो हद करदी. सुबह के चार बजने को आ गए, उनका कोई पता ठिकाना तक नहीं. जाने कितनी पी होगी ? भय मुझे घोलता है. एक जिज्ञासा भी मन में उठती है,

मैं सीधा ड्राइंगरूम में आ गया हूं. चचा को कुछ हो तो नहीं गया ? पैन्ट कोट पहनकर बाहर आ गया हूं. सड़क रात सी काली स्याह अब नहीं रही. आंधी के पीले धूलकरण चिपक आए हैं. बाग के पौधे खिले पड़े हैं. आसपास के लोग-बाग अपनी एक ही नींद में पड़े हैं. घोड़े बेचकर सोए हों जैसे. अपने स्वास्थ्य का इन्हें कोई ख्याल नहीं. सुबह कितने कम लोग ठण्डी हवा के सेवन के लिए घूमने को निकलते हैं ?

सड़क पर चलने लगा हूं. चचा के प्रति मन में पूर्ण असन्तोष है. कदम शराब के ठेके के तरफ उठ गए हैं. चचाकी यह आदत आखिर कौन बर्दाश्त कर सकता है? आज नहीं तो कल तो उन्हें कुछ कहना ही होगा. फिर क्यों न आज ही इसका फैसला हो जाय ? यहां पूरे मोहल्ले में मेरे शराबी चचा की चर्चा है. कोई बेचारा जबान नहीं खोलता. सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार सभी करते हैं.

किन्तु इसमें 'रैप्युटेशन' कितनी हल्की होती है. अब चचा से साफ कह दूंगा-- चचा आपकी ये आदतें मुझे कतई पसंद नहीं; या तो शराब की मात्रा कम कीजिए अन्यथा किसी और के यहां चले जाइये जिसे यह सब अच्छा लगे.

शराब का ठेका मेरे सामने आ गया है. दो तीन लम्बी लम्बी बैंचें पड़ी हैं. दो कुत्ते 'घुरी' बना कर लेटे पड़े हैं. मिट्टी पर पानी का छिड़काव लगा है. बड़ा एक घड़ा पास ही छोटी तिपाई पर पड़ा है, नीम की छाया में.

मैं अन्दर पहुंच गया हूं. एक नज़र अन्दर के लोगों पर डाल रहा हूं. कोई परि-चित नहीं नजर आ रहा.

"अरे बृजेन्द्र ?" अंधेरे कोने में बैठे व्यक्ति को पहिचान गया हूं. चचा का खास दोस्त है. मेरे कदम उसी ओर बढ़ गए हैं. मैं बृजेन्द्र के सामने खड़ा हूं. बड़ी अजीब परेशानी मुझे घेर रही है. मुंह से निकल गया है-- बृजेन्द्र साहब, मेरे चचा आज घर नहीं लौटे, कहीं चले गए हैं क्या ?

"अरे बेटे तुम यहां ?" हां...हां...हां... तुम्हारे चचा कल ही देहरादून के लिए चढ़ गए थे.

"देहरादून पर क्यों" मुझे बिना कुछ कहे सुने ही चले गए. क्या मुन्ना के पास ? "बड़े अजीब आदमी हैं."

बृजेन्द्र का हाथ अपनी जेब में चला गया है. वह एक मुड़ा-तुड़ा कागज निकाल कर

मुझे थमा देता है, कह रहा है— "अरे बेटे, तुम माफ करना - यह कागज कल शाम तुम्हें देने को था, पर इस साली शराब से ध्यान नहीं रहा."

कमाल है. कोई कहीं जरूरी काम इन शराबियों के हाथ पड़ जाए तो मटियामेट समझो. मैं इस आदत से कतई खिलाफ हो आया हूं.

पत्र पढ़ गया हूं, आश्चर्य हो रहा है.

'स्टेशन पर खड़े खड़े ही मुन्ना की याद सताने लगी. गाड़ी सामने खड़ी थी चढ़ गया."

चचा के कई चित्र मेरे सामने बन बनकर टूट रहे हैं, यों जुड़ रहा हैं उनका एक विशेष व्यक्तित्व मेरी मनःस्थिति में. उनका व्यक्तित्व अपने आप में एक अनूठा व्यक्तित्व है. "शराब—छोटे बच्चों से प्यार' ये दो ही एक दूसरे के पूरक होकर उनके बुढ़ापे का सहारा बन गए हैं जैसे. मुझे प्यार और शराब का एक अजीब मिश्रित गंध आने लगी है—फिर भी मैं इनमें से एक का हल अब भी जाने क्यों. खोज रहा हूं. • •

सलवटें : भीतर-बाहर

• शुभू पटवा

खिड़कियों के रास्ते शिकायतें कोहरे की तरह प्रवेश करती जा रही हैं. तन-मन के सभी रोशनदान बन्द कर चुका हूं, लेकिन यह महज मेरे मन का भ्रम ही सिद्ध हुआ है. रोशनदान खिड़कियों के रूप में बदलते गये हैं और अब खिड़कियां भी दरवाजे बनती जा रही हैं.

मुझे लगता है जीवन की समस्त कटुता इस एक ही बार के जीवन में भुगत लेना है. मैं पुनर्जन्म में विश्वास रखता हूं और सोचता हूं कि मेरा अगला जीवन किसी नकारात्मक रवैये को लेकर ही आयेगा. मैं कारण अब भी नहीं जान पाया हूं, लेकिन इन दिनों शिकायतों का बाजार अधिक गर्म रहा है इसी कारण यह सोच बैठा हूं.

घर के सब व्यक्ति या तो मुझसे डरते हैं या फिर सड़े मांस के टुकड़े की तरह घृणा करते हैं. जिस दिन में किसी से हंस कर बात कर लेता हूं, वह दिन घर के सब लोगों के आश्चर्य का दिन होता है. मैं अपने ही घर में एक अजनबी की तरह रह रहा हूं.

आज मुझे प्रमिला के पास जाना है. मूड ठीक बनाये रखने का यत्न करता हूं. मेरे कमरे की छत के एक कोने में मकड़ी का जाला है. मैं ऊपर देखता हूं, जाले में एक मक्खी झूल रही है. वह मकड़ी का शिकार बन गई है. मैं सोचता हूं—क्या प्रमिला भी मकड़ी है, जाले बुनती है, मुझे अपना शिकार समझ फंसा लिया है और मैं हंस देता हूं. प्रमिला अच्छी लड़की है. वह मेरे पर कितना भरोसा करती है. मैं यही सब गर्दन ऊपर किये सोचता रहता हूं. बेचारी मक्खी पर मुझे तरस आती है, मुझे लगता है मैं स्वयं अपने पर ही तरस खा रहा हूं. आंखों के सहारे एक आंसू ढुलक जाता है. मेरा मुंह गले तक कड़वा जाता है. मैं थूकना चाहता हूं, पर लार सूख गई है. मुझे लगता है—मैं ज्वर से पीड़ित हो गया हूं. अपना ही हाथ सिर पर रख देता हूं. सिर के बाल सण से हो गये हैं. चेहरे पर हाथ फेरता हूं, कुछ खुरदरा सा लगता है. मेरे कमरे में

सीधा नहीं है. वैसे ही अनुभव कर लेता हूं कि दाढ़ी काफी बढ़ गई है. शरीर गर्म नहीं है. क्षण भर को सोचता हूं कि मैं स्वस्थ हूं.

मुझे फिर याद आता है कि मैंने प्रमिला के पास जाने का निश्चय किया है. वह कितनी अच्छी लड़की है. मैं खाट से उठ खड़ा होता हूं. देखता हूं कि धूप सिर तक चढ़ गई है. अपने निश्चय से मैं एक बार फिर विचलित हो जाता हूं. आंखें बिस्तर पर टिक जाती है. मुझे लगता है--बिस्तर पर पड़ी इतनी सारी सलवटें मेरे मन के इर्द-गिर्द भी पड़ गई है. कुम्हासों से भरा मेरा कमरा मुझे अपना नहीं लगता है आंखों के आगे अन्धेरा सा छा जाता है और मैं फिर बिस्तर पर लुढ़क जाता हूं. बिस्तर की दुर्गन्ध से मुझे मिचली सी आती है

घर के सब लोग अब तक सुबह का नाश्ता कर चुके होंगे. मैं किसी को याद नहीं आया. जैसे इन सब लोगों से मेरी अलग ही दुनिया हो. मां सोचने लगी है कि अब मेरे से विशेष लाभ नहीं घर को. भैया ने यह सोच लिया है कि अधिक पढ़ने से इसका दिमाग ठिकाने नहीं रहता. और मैंने यह सोच लिया है कि मैं घर का सबसे निकृष्ट प्राणी हो गया हूं

पढ़ाई के दिनों में मैं होस्टल में रहता था प्रमिला भी होस्टल में रहती थी. देर रात सोना और सुबह टिक-टिक की आवाजें कानों में वे न पड़े तब तक न उठाना, यह मेरा नियम बन गया था. और प्रमिला रोज सुबह मेरे कमरे आती, फाटक तक पर दस्तक देती, तब मैं बिस्तर छोड़ गुसलखाने में घुसता था. बेचारी प्रमिला, रोज मुझे कहती कि सुबह उठकर चाय बना लेना. लेकिन मैं रोज तब तक बिस्तर से बन्धा रहता, जब तक आवाजों के घेरे मेरे कानों के पर्दे को न हथोड़ती.

वह स्वयं भी तब तक नाश्ता नहीं करती, जब तक कि मैं नहीं कर चुकता. शायद मैं उसके प्रति ऐसा करके कोई दोष करता होऊं, लेकिन मेरे बहुत कहने पर भी वह ऐसा करने से नहीं चूकती वह हम दोनों जब मैं उसे कहता "प्रमिला, गैर आदमी के पास इस तरह आना, उसके पास बैठ कर बातें करना, उसके कामों में हाथ बटाना, ठीक है क्या ?" हंसते हुए ही जवाब देती "आपको भय है कि युनिवर्सिटी के लोग क्या कहेंगे, यही न. कुछ नहीं, मुझे डर नहीं है, आप क्यों घबराते है."

उसके इस साहस पर मेरे हृदय के कपाट कांपने लग जाते. मैं ऊपर से उसकी हंसी में सहयोग देता और अन्दर ही अन्दर सोचता कि प्रमिला लड़की है, नादान-भोली लड़की! मुझे तरस आती उसके भोलेपन पर. लेकिन वह मेरे से कुछ इस तरह बात करती कि लगता वह बड़ी समझदार चतुर लड़की है मैं कुछ भी उस

के अनचाहे नहीं करता.

अब भी मेरी यही आदत बनी हुई है कि कोई आकर मेरे फाटक पर टिक–टिक की आवाज लगाये, मगर वह सब कुछ नहीं होता और मैं अलसाया–सा अपने कमरे में पड़ा प्रतीक्षा करता रहता हूं ––टिक टिक की.

कुछ दिन मीनाक्षी–मेरी बहिन, आकर उठा दिया करती. प्रमिला की सहेली है वह. मैं सोचता शायद उसी के कहने से ऐसा करती होगी वह. लेकिन अब तो उसने भी सुध लेनी छोड़ दी है. मैं भी सोचता मीनाक्षी ऐसा क्यों करती है, मुझे कुछ वैसा लगता उसका यह करना ––बड़ा अटपटा सा. वह अब नहीं आती, शायद मेरे लिए अच्छा ही किया होगा उसने.

मेरा ध्यान अचानक दीवाल पर टंगी घड़ी की तरफ चला जाता है. दृष्टि फिसल जाती है और खिड़की से पसरी धूप को देख मैं चौंकता हूं. ग्यारह बज गए हैं आज भी. रोज ही यही होता है, लेकिन रोज तो मेरे हाथ में पुस्तक होती है. सामने टेबिल पर बैठा पाया जाता हूं. मेरा 'आज' निरर्थक गया. मुझे दुःख होता है, दुखित सा मैं कमरे का कपाट खोल देता हूं. ध्यान आता है-मुझे आज प्रमिला से मिलना है. तत्क्षण एक सिहरन सी दौड़ती है मेरे शरीर में. लगता है आज ताज़गी अधिक है, स्फूर्ति का कोई इंजेक्शन लगा हो जैसे.

मैं जल्दी-जल्दी तैयार होने लगता हूं. हमेशा की अपेक्षा आज मैंने काफी शीघ्रता की है. मां, भैया मिनाक्षी सबके चेहरे मुझे आज कुछ उजले प्रतीत होते हैं.

मैं खाने की टेबिल पर बैठता हूं, जल्दी से खाना समाप्त कर बेसिन पर हाथ धोने लगता हूं. मिनाक्षी आजकल मेरे से भागती है. वह साड़ी का पल्लु अंगुली पर लपेटते हुए करीब आकर कहती है– भैया आज तो काफी स्वस्थ प्रतीत हो रहे हो. मैं हंस देता हूं 'हां' में उत्तर टाल कर कमरे में घुस जाता हूं. आज मैंने सबसे अधिक पसन्द का सूट पहना है. यह सूट मेरी और प्रमिला दोनो की पसन्द का है. मैं ड्रेसिंग टेबिल के समक्ष खड़ा हो जाता हूं. लगता है मैं काफी स्वस्थ हूं. 'कल' जो बीत गया वह एक विडम्बना थी, बकवास. सच तो 'आज' है.

मैं सीढ़ियों से नीचे उतर रहा हूं. मिनाक्षी बाहर लान में खड़ी है. उसे देख स्मित मुस्कान फैला देता हूं. वह करीब आता है–कुछ कहना चाहती है–यह सोच मैं रुक जाता हूं.

मैं कहता हूं 'कुछ कहना है'

'हां' वह कहती है.
और फिर एड़ियां घसीटने लगती है. मैं फिर कहता हूं–
'कहो'

'वह पूछती है कहां जा रहे हैं'
मैं कहता हूं 'बता दूं ?'
'नहीं बताना चाहते ? न सही.' प्रत्युत्तर देती है.
'उसके कन्धे झकझोरते हुए कहता हूं प्रमिला ने बुलाया है, उसके पास,
वह मेरा मुंह ताकने लगती है.
मैं हंस देता हूं.
मिनाक्षी थोड़ा पीछे सरक जाती है.
मैं उसे हतप्रभ सा देखता हूं .
वह कहती है 'भैया.........'
मेरे दीमागी तन्तुओं पर हथोड़े की सी चोट होती है . मैं कहता हूं "हां"
वह फिर कहती है प्रमिला का यह पत्र—
वह रुकी फिर रुक कर बोली उसकी शादी परसों थी . पत्र में लिखा है "राजन,
आज जो आवश्यकता है उसे पूरा कर रही हूं, कल जिसे आवश्यक समझकर किया
वह मेरी यादगार बन गई . और क्या ."
मुझे लगा जैसे प्रमिला ने कितने सामान्य ढंग से सोचा है . और उसी पैरों पुनः
सीढ़ियां गिनने लगता हूं ." ●

राहत-राहत

• राजानंद

दुपहर का सूरज भट्टी की तरह तप रहा था. आगे चलकर दूर-दूर तक पीली रेत की पहाड़ियां दिखलाई दे रही थीं. कीकर और झाऊ के सूखे, कांटेदार पेड़, और झाड़ियां इधर-उधर सिर उठाए खड़े थे. इनका ध्यान न किसना को था न लिक्ष्मी को.

किसना अनुभव कर रहा था कि उसके पैरों में कमजोरी आ गई है और वह चल नहीं पा रहा है.

लिक्ष्मी का ध्यान अपने छोड़े हुए घर के आस-पास फिर रहा था. दोनों आधे से ज्यादा रास्ता पार कर आए थे. अभी कसबा फिर भी सात-आठ मील दूर रह रहा था.

लिक्ष्मी की आंखों में उसका बेटा ठहरा हुआ था जो कल ही तीन दिन की सांसों की लड़ाई के बाद छुट्टी पा गया था—यानी वह मर गया था. और तब लिक्ष्मी ने रोते-रोते उसे पति के हाथ में दे दिया था—वह रहा ही क्या था सिर्फ मिट्टी.

'पानी पीले थोड़ा सा लिक्ष्मी, दम आ जाएगा'—चलते चलते किसना ने कहा. वह जान रहा था कि तीन दिन की भूख के बाद जैसी आंतें उसकी खिंच रही है वैसी ही लिक्ष्मी की खिंच रही होंगी.

लिक्ष्मी ने लोटे के पानी को झांका, पौन लोटा पानी था. उसने पिया नहीं, सोचा किसना को जरूरत पड़ेगी तो उसको पिला देगी.

गांव में पड़े अकाल ने लोगों की रीड तोड़ दी थी. इस साल बारिश के नाम आसमान रेगिस्तान बना रहा. नतीजा यह हुआ कि खेत बूढ़े की झुरियों की तरह सूखे रह गये यहां तक कि भेड़-डांगर घास-चारे के लिए भूखे मरने लगे जिनके घर में था वह सम्भल सम्भल कर, हाथ कस कर खाने लगे: जिनके पास इकट्ठा किया हुआ अनाज नहीं था उन्होंने गांव छोड़ दिया. कस्बे तथा शहर की तरफ मजदूरी करने चले गये.

किसना और लिछमी छः साल के कलुवा बेटे की वजह से गांव नहीं छोड़ सके—बीमारी में कैसे ले जाते ? ईश्वर ने उसे उठाकर एक तरह से मुक्ति दे दी, लेकिन लिछमी मां थी; किसना बाप था—हाथ का हीरामन हाथ से फुर्र से उड़ गया था.

लिछमी गुम-सुम काठ की पुतली सी किसना के पीछे-पीछे चल रही थी. हलक प्यास के मारे चिटक रहा था देह थककर ढहने-ढहने को हो रही थी—लेकिन वह चलती जा रही थी.

किसना ने कहने के बाद लौटकर यह नहीं देखा कि लिछमी ने लोटे का पानी पिया नहीं. कड़ी धूप से चेहरा-पसीने-पसीने हो रहा था. बढ़ी हुई दाढ़ी-मूंछ में पसीने की बूंदें फंस सी गई थीं. वह सोच रहा था, और चलता जा रहा था. लिछमी ने देखा किसना उससे काफी आगे हो गया है, और उसके डग जल्दी-जल्दी पड़ रहे हैं— काहे की ताकत आ गई ?

किसना में ताकत नहीं आई थी क्रोध जगा था. उसे गांव के सरपंच का ध्यान आ रहा था—कैसी कैसी लालच दिखाई थी, सपने दिखाये थे जब सरपंच बनना था. कहता था सरकार से यह करवाऊंगा, वह करवाऊंगा. गांव में अस्पताल खुलेगा, स्कूल खुलेगा, अनाज ही अनाज होगा. और बदमाश मुंह छिपाकर शहर भाग गया.

किसना की आंखों में खून उतर आया था और वह सोच रहा था कि सरकार अगर सरपंचियों को कोई रामलीला की सख्ती होती तो उसे मार-मार कर, लातें दे-देकर तोड़ डालता. कहता यह रहा तुम्हारा सुराज, तुम्हारा गांधी राज.

लिछमी के पेट में भूख के थपेड़े पड़ रहे थे और नीचे गरम बालू तलुओं को जला रही थी. लिछमी अपने चेहरे पर आए हुए पसीने को सफेद बुंदकीदार मैली चुनरी से पोंछ पोंछ कर बार-बार रुक रही थी पर जैसे जलती हुई मोमबत्ती से टप-टप मोम गिरता है उस तरह पसीना चू रहा था. उसकी इच्छा हुई कि किसना से कहे कि थोड़ा सा रुक कर आराम कर लें कि तभी उसकी बात आगे जाने किसना ने जोर से चीख कर कहा—'जल्दी-जल्दी चलती है या नहीं, या रास्ते में ही भूख से मरेगी.''

लिछमी सन्न रह गई. बल्कि डर से लड़खड़ा गई. पता हुआ, वह सोच नहीं पाई. अभी तो प्यार से बोल रहे थे अभी मरने जीने की बातें करने लगे. उसकी समझ में आया, भूख लग रही है—इसीलिये टेढ़ा-सीधा बोल रहे, लेकिन उसकी आंखों में आंसू छलक आए. वह थक रही है इस से ज्यादा चल नहीं रही है. और

लिक्ष्मी एक जगह बैठ गई. लेकिन अन्दर से उसे डर लगा. डर से ज्यादा पेट की सलवटें थी जो आंतों को उमेठ रही थीं. किसना स्टेशन की तरफ बढ आया था. उसने पूछ कर सरकारी अनाज बंटने की जगह पता लगाई. वहां डेरे पड़े थे. एक-एक हवलदार तम्बू के आगे खाट पर बैठा था.

"हवलदार साहब. अनाज चाहिए" किसना ने कहा.

"इस वक्त मिलता है क्या ? सुवह मिलेगा."

"मैं भूखा हूं. मेरी औरत भूखी है हवलदार साहब" किसना रिरिया-सा गया.

'यहां पेट भरा कौन आता है ? सुवह आना !" हवलदार ने डांट दिया.

हवलदार की पुकार आई-"कौन है हवलदार ?"

"भिखमंगा है बाबूजी ! इस वक्त मांगता है" बाहर से ही हवलदार ने जवाब दे दिया.

एक बाबू अन्दर से चार रोटी लेकर आया-"यह हमारे में से ले जाओ सुवह आना !"

किसना रोटी लेकर चल दिया. उसको लगा जैसे नियामत मिल गई. दो-दो रोटी खाकर तो दो दिन जिन्दा रह लेंगे दोनों. पैरों में ताकत आ गई थी. जिन्दगी जैसे दुबारा लौटकर मिल गई थी.

लिक्ष्मी के पास पहुंचा और रोटी बढ़ादी-"ले लिक्ष्मी खा; कल सुवह अनाज मिलेगा."

दो रोटी लिक्ष्मी ने ले ली; दो किसना ने. दोनों खाने लगे. लिक्ष्मी ने आधी रोटी खाई थी कि हुबक सी उठी. उसका हाथ आगे किसना की तरफ फैल गया. आंखें वदलने लगीं.

"क्या है लिक्ष्मी !" किसना लिक्ष्मी की तरफ झपटा. उसने उसे सम्भालना चाहा कि लिक्ष्मी निढाल हो गई. किसना ने पकड़ा-लेकिन लिक्ष्मी बेजान हो गई. रोटी जमीन पर गिर पड़ी थी, किसना जड़ रह गया, एक बिना आवाज की चीख उसके अन्दर हुई और आंखों से आंसू टपकने लगे. रोटी पाकर भी उसकी लिक्ष्मी मर गई. भूख ने आखिर तो निगल ही लिया, पहले उसके बेटे को अब उसकी औरत को. और राहत में मिली रोटी वहीं पड़ी थी-सफेद; मटमैली. ०

आवरण

● नित्यानन्द

इन सबसे ऊपर प्रबोध ! कभी-कभी याद मन को माड लगी मछली की तरह तड़फा जाती है .

प्रबोध और मैं . अलग-अलग जिन्दगी के आठ वर्ष बीत चले है .

आखिर आज प्रबोध आ ही गया . धुंधला-धुंधला-सा सूरज मटमैले पश्चिम की ओर खिसकता जा रहा है . धूमिल किरणें खिड़की में उभक उभक कर रह जाती है

"सुना प्रबोध ! तुम मुझ पर बहुत नाराज हो . भुवन कहता था तुम मेरा मुंह भी नहीं देखना चाहते . ..."

'शायद भुवन ठीक ही कहता था ' आंखों पर से चश्मा उतारते हुए प्रबोध कहता है, "मेरे उन पांच पत्रों का उत्तर अभी तक नहीं मिला . दिल्ली आये मुझे चार वर्ष हो गए है. तुमने एक दिन भी मिलने का कष्ट नहीं किया ." वह सांस रोके था . उसकी आंखों की तीखी-तीखी सी पुतलियां मुझे बुरी तरह चुभ रही थी .

"प्रबोध ! तुम सोचते हो ? मैं इतना बदल गया हूं ?"

'सोचता ही नहीं मानता भी हूं आज मुझे कोई पुराना नेह खींचकर ले आया नहीं तो... " वह हंसी का ठहाका लगाता है दीवारें भी ध्वनित हो उठती है . मन कहता है बीते दिनों के पन्ने-पन्ने खोलकर पढ़ दूं लेकिन प्रबोध शायद ही सुने... मैं उसे बांहों में कस लेता हूं

'अच्छा, छोड़ो भी शहरी बातें बनाना बहुत सीख गये हो ! हां . अकेले-अकेले से दीखते हो ! अभी तक सैटिल नहीं हुये ?'

अपने होंठों पर हंसी लाते हुये मैं कहता हूं– 'तुम्हें चाय चाहिये न ! क्यों" मैं स्टोव जलाने लगता हूं . धू धू स्टोव जल उठता है . केतली में पानी रख देता हूं . आग की पीली-पीली सी लपटें ऊपर उठकर नीचे बैठ जाती है . "शहरी बातें

बनाना बहुत सीख गये हो... " प्रबोध की आवाज़ मेरे कानों में गूंजती रहती है. विश्वास पाने में वर्ष बीत जाते हैं, खोने में क्षण भर . शायद प्रबोध कोई स्पष्टीकरण नहीं चाहता . शायद इसीलिए उसने बातें बदल दीं . ...

प्रबोध मेज पर रखी किताबें उलट-पलट रहा है . ...

साधना, प्रबोध के बापू . पुराना घर . दूर दूर तक फैले जगल . चरवाहे . गांव का स्कूल . रविवार . छुट्टियां . एकान्त पढ़ाई के बहाने जंगलों में खरगोशों का पीछा करना . ढेर सी यादें हैं . ढेर से प्रश्न . मुंह नहीं खुलता . कहीं उसने भी पूछ लिया . —इन आठ सालों में क्या किया . ग्रेजुवेशन कहां से किया . कैसे कहूंगा, "मैं आगे न पढ़ सका. और आज... ' पानी उबल रहा है. हाथ डिब्बों को टटोल रहे हैं . नहीं ! नहीं ! प्रबोध क्या सोचेगा . भविष्य की कितनी बड़ी कल्पनाएं हमने साथ-साथ की थीं . आज जब वह सुनेगा . —मैं क्लर्क मात्र हूं सेक्रेटेरियेट का . कितना बड़ा ठहाका लगायेगा वह .

खिड़की की धूप जाने कब खिसक गई थी . हवा धीरे धीरे पर्दों को हिला जाती . मैं चाय की प्याली पकड़ाते हुए पूछता हूं . ...

"तो आजकल क्या कर रहे हो ?"

वह धीरे-धीरे मेज से सिर उठाकर, अधखुली किताब के बीच अंगुली फ़ंसाते हुए उत्तर देता है... ..

"एल. आई सी. में फिल्ड आफिसर हूं." ...

"बड़ा हाथ मारा तुमने ." मैं विस्फारित नयनों से उसकी ओर देखते हुए कहता हूं .

"और तुम ?" जिस प्रश्न के लिए उत्तर न था, वही सामने आ पड़ा . लड़खड़ाती जीभ से पूछता हूं .

"तुम और चाय लोगे ?"

"नो, थैंक्यू . हां बतलाया नहीं तुमने ."

"कुछ नहीं यार ! यही असिस्टेंट हूं कस्टम में ."

"एक्सीलेंट ! प्रमोशन के चान्सेज कैसे हैं ?"

मेरा धीरज बंधता है .

"सो सो, आउट तो मैं नहीं कह सकता . दो तीन साल में राइज कर ही लूंगा . और तुम्हारे ?"

चाय की प्याली मेज पर रखते हुए वह कहता है, "यह सब हमारे यहां वर्क पर

"कहानी को प्यार भी होस्टल में चाहिए है." कहकर वह हाथ किस से अंगुली उलझा लेता है.

कुछ सकुचा कर मैं अपनी ही बात बदलने लग जाता हूं—

"मैंने सोचा था आना मुझे पसंद था नहीं" ...

वह कोई प्रतिवाद नहीं करता. चुपचाप किसी पत्रिका के पन्ने पलटने लगता है. किन्तु यह मौन मुझे किसी अंग में चुभता जा रहा है.

"मुझे माफ करना, मैं तो पानी के लिए बाहर ही आया हूं." बिना कोई प्रत्युत्तर सुने मैं सीढ़ियां उतर जाता हूं.

बाजार से लौटते समय तरह तरह के विचार मेरे मन में उठते हैं. मुझे लुकाव-छिपाव से घृणा है. लेकिन क्यों मैं छिपाये थे बर्तन. क्यों आज यह सब... . क्यों नहीं मैंने यह पिछली की थाली लिया थी. क्यों नहीं मैंने रोज की रोटी-सब्जी परोस दी....

हां, हम दोनों ने मिलकर बहुत बड़े सपने बुने थे. आज मैं उनका एक छोर भी नहीं पकड़ पाया हूं. प्रबोध ऊपर उठ गया. उसने वे घृणास्पद क्षण नहीं देखे, जिनसे मैं गुजर चुका हूं. शायद इसीलिये......

गांव छोड़ते समय उसके बाबा ने मेरी बांह पकड़कर कहा था—

"तुम कहीं भी चले जाओ. लेकिन हमारे प्रबोध को कभी मत छोड़ना. सारे गांव में एक तुम्हें ही अपना कहकर मानता है. ..."

मैं उनकी बात न रख सका. यह मेरी मजबूरी थी. प्रबोध की जिन्दगी का प्रश्न था. वह कालेज मे दाखिल हो गया. उसके बापू के पास पैसा था. मेरे बापू के पास... . हां, अलबत्ता उनका नाम सेठों में था. मैं बेकार था. मैं नहीं कह सकता था कि मेरी पढ़ाई बन्द हो चुकी है. शायद यह मेरी जिन्दगी का सबसे बड़ा अपमान था. मैं कह नहीं सकता था. तब से झूठ बोलता हूं. —प्रबोध के सामने सिर्फ......

वह किसी किताब की तस्वीर पर आंख गड़ाये हुये है. दीवार पर दुबकी दुबकी-सी छिपकली पतंगों के लिए जीभ लपलपा रही है. मैं गुंथे आटे के गोले बनाने लगता हूं.

"मैं मदद करूं ?" वह धीमी-धीमी हंसी बिखेरते हुए पूछता है.

"नहीं." मैं छोटा-सा उत्तर देता हूं.

खिड़की के बाहर नीले आसमान में टिमटिमाते तारे दिखाई देते हैं. पड़ौसी के घर

से रेडियो के स्वर मेरे कमरे में टकरा जाते हैं—"गोरा गोरा गोरा रंग ले ले..."
"क्यों दद्दा, तुमने अभी तक रेडियो नहीं खरीदा ?"

कम्बख्त पड़ोसी को अभी ही गाना रेडियो ऑन करना था, मैं सोचता हूं.

"नहीं प्रबोध ! तुम जानते हो, गानों ज्यादा पढ़ने लिखने को ज्यादा है, इसमें डिस्टरबेन्सेज हो जाते है."

"लेकिन... ."

"खाना खा लो यार, फिर बात करेंगे" ... *मैं उस बात को यहीं छोड़ देना* चाहता था.

"हाय इतनी जल्दी ! क्या यार ! तुमने भी औरतों के सब गुण सीख लिए है."
वह अपने होंठ फैला लेता है.

फिर दोनों के होंठ चलने है कभी घड़ी एक के लिए मौन छा जाता है. मैं उठकर अलिन्द पर टहलने लगता हू.

"बिखरे चौराहो के बिन देखे, टेढ़ी-मेढ़ी राहों पर भटके, और अब जाने क्या होगा इस नील गगन से फैले भविष्य का ?" खिड़की की सीखचों पर मुंह लट-काये वह बड़बड़ा उठता है.

"क्यों प्रबोध क्या कह रहे थे तुम ?" मैं उसकी पीठ पर हाथ रखकर पूछता हूं.

"कुछ नही दद्दा" वह हड़बड़ा उठता है "मैं सोचता हू, आज कितने वर्षों बाद अच्छा खाना मिला."

'वर्षों बाद क्यो ? इस बीच तुम मां के पास नहीं गये क्या ?"

"मां के पास ! यह सब अभी सम्भव नहीं दद्दा. जो सपने जन्म लेते है उन्हें पालने के लिए कुछ छोडना पड़ता है. फिर इज्जत, उसके लिये तो...... ."

"मैं कुछ समझा नही..."

"अभी सब कुछ अनबूझा रहने दो... हां तुमने अपने बाप और मा के बारे में कुछ नही बतलाया."

"कल ही पत्र आया था." मैं सिर के बालों को नोचते हुये कहता हूं "लिखा है अगले माह तक वे सब यहीं आ जाएंगे." ...

बिजली गुल, अन्धेरा ! घुप्प अंधेरा छा जाता है —

मुझे नींद नहीं आती है, मैं खिड़की पर खड़ा हो जाता हूं. लैम्पपोस्ट की रोशनी मे पतंगे मंडरा रहे है. सड़कों पर मुर्दनी छाई है. आंगन की सीढ़ी पर चौकीदार

की लाठी बज उठती है.

"दद्दा, सो क्यों नहीं जाते ?"

मैं प्रत्युत्तर दिये बिना चारपाई पर लेट जाता हूं.

"दद्दा ?"

"हूं..."

"एक बात पूछूं ?"

मैं चुप रहता हूं.

"तुम इन्श्योरेन्स क्यों नहीं करा लेते ?"

"मेरा इस पर विश्वास नहीं प्रबोध."

"यह एक तो प्रोफिटेबल स्कीम है. मेरा भी थोड़ा बहुत स्वार्थ है ?"

मैं फिर चुप रहता हूं. वह उचककर कहता है–

"तुम दो हजार का इन्श्योरेंश करा लो तो मेरी पोस्ट कनफर्म हो जाय. एक लाख की पालिसी देने में इतनी ही रकम रह गई है.

"तो करा लूंगा." ...

प्रबोध गहरी सांस लेते हुए करवट बदल लेता है. थाने की घंटी चार बार टनटना उठती है. बाहर मजदूरों के चलने-बोलने के स्वर सुनाई पड़ते हैं.

० ० ●

फिर वही चिल्ल-पों मच उठी है. चिलचिलाती धूप सीढ़ियों से उतर गई है. मन थका-थका-सा, शरीर भारी-भारी-सा है. मैं दफ्तर न जा सका. प्रबोध प्रात: ही चला गया. उसके पोर्टफोलियो से एक पत्र यहीं रह गया. लिखा है—

"फिल्ड ग्राफिसर के पद के लिये उसका आवेदन-पत्र स्वीकृत न किया जा सका. ...

हंसी भी आती है, रोना भी. ● ०

बंगला			
	जरासंध	मुन्नी की मेम साब	७७
असमीया			
	लक्ष्मीनाथ बेजबरुवा	जल-अप्सरा	८३
उड़िया			
	बसन्तकुमारी पट्टनायक	समाधान	८५
गुजराती			
	सुरेश ह० जोशी	चकती	९०
मराठी			
	मंगेश पदकी	कमली और चन्द्र	९७
पंजाबी			
	कुलवन्तसिंह विरक	बन्द खिड़कियां	१०५
सिन्धी			
	सुन्दरी उत्तमचन्दानी	काश्मीरी साड़ी, ताजमहल और कुतुबमीनार	१०९
उर्दू			
	मसऊदअली मुफ्ती	दुआ	११५
कन्नड़			
	श्रीकान्त	नये प्रकाश की लोरी	१२२
तेलगु			
	आचंट शारदा देवी	उस रात नींद ही न आई	१२८
तमिल			
	अखिलन	नना व रिम्ना	१३३
मलयालम			
	केशवदेव	यमुना बहती है	१३८

डेढ़ गज लम्बी फर्दों पर फिर एक
लिख कर दस्तख़त कर दिए . पिछ
काम चल रहा था . चार्ज दाता
माली सरकार और चार्ज गृहीता
शुरू से ही उन्होंने मुझे सावधान कर
मिला कर देख लेना . इसके बाद
पिछले तीन दिनों से देख रहा था,
था . कैदियों से लेकर राशन-पानी,
गिन-गिन कर नोट कर रहा था .
एवं अपने-अपने विभाग का सम्पूर्ण
इस विशाल जेल-सम्पत्ति पर जेनर
पात्र का स्टोक वजन किया गया,
गिने गए.

फर्दों की एक कापी अपनी पाकिट में
अपनी चीज तो आपको दी ही नहीं
"रतिकान्त !" आवाज सुन कर आफिस
पूर्ण-छाया-मूर्ति भी कहा जा सकता है .
चढ़ाने के लिए थोड़ा-सा मांस भी लगाना
गढ़ते समय इस तथ्य को भूल गया था
उन्होंने, उसकी पीठ पर एक बड़ा-सा
ओर झुका कर सलाम किया रतिकान्त ने .
बैरा, बॉय, वाहन, सब कुछ है . टेबुल
और भी सारे छोटे-मोटे काम कर देगा .
अधिक काम का हो जाता है . जिस
यह आलमारी में बन्द करके रख देगा
डाल देगा ."

प्रशंसा सुनकर रतिकान्त के चेहरे पर
"तुम्हारा नाम तो बड़ा अच्छा है

बंगला-कहानी

मुन्नी की मेम साब

● जरासंध

डेढ़ गज लम्बी फर्दों पर फिर एक बार नज़र घुमाकर 'अब कुछ सम्हाल लिया' लिख कर दस्तख़त कर दिए. पिछले तीन दिनों से चार्ज आदान-प्रदान का यही काम चल रहा था. चार्ज दाता हैं—अभिज्ञ एवं सिनियर जेलर रायसाहब बनमाली सरकार और चार्ज ग्रहीता है—उनका यह सहकारी बाबू मलय चौधरी. शुरू से ही उन्होंने मुझे सावधान कर दिया था कि सब कुछ देख कर, गुन कर, मिला कर देख लेना. इसके बाद फिर मत कहना कि वह चीज नहीं मिली. अतः पिछले तीन दिनों से देख रहा था, गुन रहा था और मिला-मिला कर रख रहा था. कैदियों से लेकर राशन-पानी, डेरी के सांड और पोल्ट्री के अंडे-सब कुछ गिन-गिन कर नोट कर रहा था. प्रत्येक विभाग के अलग-अलग इन्चार्ज होते हैं एवं अपने-अपने विभाग का सम्पूर्ण दायित्व उन पर ही होता है. किन्तु फिर भी इस विशाल जेल-सम्पत्ति पर जेलर का ही सर्वोपरि दायित्व रहता है. अतः प्याज का स्टोक वजन किया गया, रसोई घर के बर्तन और गुसलखाने के मग गिने गए.

फर्दों की एक कापी अपनी पाकिट में रख कर रायसाहब अकस्मात् बोले—"ओ हो, असली चीज तो आपको दी ही नहीं." कह कर उन्होंने आवाज लगाई—"रतिकान्त !" आवाज सुन कर आफिस के पिछवाड़े से निकलकर आई एक कृष्ण-मूर्ति-छाया-मूर्ति भी कहा जा सकता है. हड्डियों की फ्रेम पर चमड़ी का आवरण चढ़ाने के लिए थोड़ा-सा मांस भी लगाना जरूरी है, सम्भवतः विधाता रतिकान्त को गढ़ते समय इस तथ्य को भूल गया था. किन्तु मांस की अभावपूर्ति कर दी थी उन्होंने, उसकी पीठ पर एक बड़ा-सा कूबड़ लगा कर. झुकी हुई देह को थोड़ी और झुका कर सलाम किया रतिकान्त ने. रायसाहब बोले—"यह आपका खास बेयारा, चॉप, वाहन, सब कुछ है. टेबुल पोंछ देगा, फाइलें सम्हाल कर रख देगा और भी सारे छोटे-मोटे काम कर देगा. काम का आदमी है, पर बीच-बीच में कुछ अधिक काम का हो जाता है. जिस चिट्ठी को आप पोस्ट करने लिए देंगे, उसे यह आलमारी में बन्द करके रख देगा और नीली स्याही की दवात में लाल स्याही डाल देगा."

स्वयं की प्रशंसा सुनकर रतिकान्त के चेहरे पर लज्जापूर्ण मुस्कराहट फैल गई. मैंने कहा—"तुम्हारा नाम तो बड़ा अच्छा है."

सुन कर रतिकान्त की मुस्कराहट कानों तक फैल गई. फिर विगलित-कंठ से बोला—"जी ! मेरा यह नाम मेरे गुरुदेव का दिया हुआ है. पहले मेरा नाम भजहरि था ."

उसके गुरुदेव के रस-ज्ञान की तारीफ की, फिर कहा—"जेल में कैसे आए ?"

—"३७९ के कारण, और क्या होगा !" उत्तर दिया रायसाहब ने. रतिकान्त ने सिर झुका लिया. मैंने पूछा—"क्या चुराया था ?"

मृदु कण्ठ से कुण्ठित उत्तर सुनाई दिया—"गाय ."

जेलवासियों का भी अपना एक अलग समाज होता है. उसके भी विभिन्न स्तर होते हैं. स्तर भेद का मापदण्ड होता है उनके अपराध का महत्व एवं गुरुत्व. खूनी, डाकू, बलात्कारी, ठंडा प्रभृति उच्च श्रेणी के माने जाते हैं. चोरों का स्तर इससे बहुत नीचे का होता है. किन्तु सबसे नीचे जिनका नाम आता है, वे होते हैं गाय चोरी करने वाले. चोर होते हुए भी ये होते हैं चोर जाति का कलंक. स्वजाति की महफिल में भी इनका हुक्का-पानी बन्द रहता है. इसीलिए जेल में आकर ये लोग चुपचाप रहते हैं. मेरे एक सहकर्मी थे, हाजिरी के समय वे प्रत्येक कैदी से पूछते—"क्या किया था ?" जिनका अपराध चोरी नहीं होता, वे सगर्व उतर देते—खून, डकैती अथवा छोकरी को भगा लाया था. चोर कहते—रुपए चुराए थे, तिजोरी तोड़ी थी, सेंद लगाई थी. किन्तु ३७९ के कैदी—वे चुप रहते. किन्तु मेरे सहकर्मी बिना पूछे नहीं रहते. अतः बाध्य होकर वे कहते—"हुजूर, गाय की चोरी." सुन कर मेरे सहकर्मी हो-हो कर हँसते.

किन्तु मैंने देखा, रतिकान्त एक विरल व्यतिक्रम है इस नियम का. वह तो बल्कि दूसरे कैदियों से कहता—"तुम लोगों से तो हमारा काम अच्छा है. इसमें झमेला भी नहीं है. सेंद नहीं लगानी पड़ती, ताले तोड़ने नहीं पड़ते, घर में घुस कर जान हथेली पर रख कर इष्ट-देवी का स्मरण करना नहीं पड़ता. सीधे गाय-घर में जाकर रस्सी खोलो और ले चलो. किसी तरह रात कट जाने के बाद फिर भला तुम्हें कौन पकड़ सकता है ? फिर भी मैं कैसे पकड़ा गया, पूछना चाहते हो ? वह सब तकदीर की बात है. शास्त्र में लिखा है—दस दिन चोर के एक दिन पहरेदार का."

किन्तु इन्हीं सब बातों के कारण रतिकान्त को कोई भी कैदी अपने पास फटकने नहीं देता. एक बार का किस्सा है. रायसाहब दफ्तर में बैठे-बैठे फाइलों में सर खपा रहे थे कि एक कैदी ने आकर सलाम ठोंकी, कहा—"नालिश है, हुजूर."

"क्या हुआ ?"

"सर, मुझे तेरह नम्बर कमरे से किसी दूसरे कमरे में ट्रान्सफर कर दीजिए."

"क्यों ?"

"यह तो सब चोरों का अड्डा हो रहा है ." कहकर टेढ़ी नज़र से उसने रतिकान्त की ओर देखा .

रायसाहब बोले—"तुमने क्या किया था ?"

—हुज़ूर, मालिक ने तनख्वाह नहीं दी थी, इसलिए मैं उसकी हाथ-घड़ी लेकर भाग गया था ."

"तो तुम क्या हो ? चोर नहीं हो क्या ?"

हुज़ूर चोर हो सकता हूँ, पर गाय चुरानेवाला तो नहीं हूँ ."

रायसाहब ने उसकी प्रार्थना मंजूर नहीं की थी . यद्यपि वे जानते थे कि शिकायत साधारण नहीं है तथा इसके साथ जनमत का समर्थन भी है , किन्तु इसके कुछ दिन बाद ही रतिकान्त ने प्रार्थना की—"हुज़ूर, मुझे किसी दूसरी जेल में भिजवा दीजिए ." बेचारे की हालत पर विचार करके रायसाहब ने उसे जेलर साहब के विशेष बेयरे का पद देकर दफ्तर में बुला लिया था .

●————————

चार्ज सम्हालने के तीन-चार दिन बाद की बात है . आफिस में बैठा था कि अकस्मात पैरों पर शीतल-स्पर्श पाकर चमक गया . कहीं साँप तो नहीं है ? किन्तु टेबुल के नीचे से आवाज आई—"मैं हूँ हुज़ूर, रतिकान्त ."

"वहाँ क्या कर रहे हो ?"

"पद सेवा कर रहा हूँ, हुज़ूर . उस हुज़ूर के रोज करता था ."

"रहने दो, इस हुज़ूर के नहीं करनी होगी . बाहर निकलो ."

●————————

कुछ दिन पहले ही रतिकान्त ने अपनी सज़ा की आधी अवधि समाप्त की है . बीच-बीच में वह आकर कहता—"हुज़ूर, 'मेट' बनने की योग्यता प्राप्त कर चुका हूँ . अब मुझे 'मेट' बना दीजिए ."

कैदियों के जीवन में 'मेट' का पद लाभ करना सौभाग्य की बात है . मैंने पूछा—"मेट बनना चाहते हो ?"

रतिकान्त ने सिर हिलाकर कहा—"हाँ."

—"तुम्हारा जैसा चेहरा है ! कैदी तुम्हारी बात बिल्कुल नहीं मानेंगे."

—"कौन नहीं मानेगा, हुज़ूर ?" रतिकान्त उत्तेजित हो उठा.

रतिकान्त को मेट के पद पर प्रोमोट कर दिया गया. डिप्टी जेलर विनयबाबू एक दिन बोले—"आपके रतिकान्त का कुबड़ शायद अब नहीं रहा, सर.".

"क्या मतलब ?"

"मेट बनने के बाद से ही वह तनकर सीधा होकर चलने की कोशिश कर रहा है,"

मैंने भी लक्ष्य किया था. देखा, बेल्ट कमर में ढ़ीला रहता है इसलिए कमर में गमछा बांध कर, उस पर पेंट पहन कर रतिकान्त बेल्ट लगाता है. प्रति दिन पालिश करने के कारण उसका पीतल का तकमा चमकता रहता है.

●————————

मेरे क्वार्टर के सामने एक बगीचा है. उसकी रखवाली तथा उसे उन्नत करने का भार भी मैंने रतिकान्त को ही दिया था क्योंकि सिनियरिटी के हिसाब से जेलखाने मे बाहर जा सकने वाले मेटों में से रतिकान्त सर्वाधिक सिनियर था. मेट का चेहरा देखकर मेरी पत्नी तो हंसती-हसती जैसे पागल ही हो गई थी. बोली थी—"इस घी में तले हुए कुवड़े से काम नहीं चलेगा." मैंने प्रत्युत्तर में कहा था—"रस में डुबा हुआ कुबड़ा जब तक नहीं मिलता है तब तक घी में तले हुए से ही किसी तरह काम चलाओ."

पहले ही दिन रतिकान्त कुदाली, खुरपी और साबल लेकर बगीचे की उन्नति करने के महान कार्य में जुट गया. किन्तु उसकी कुदाली का नाच देखने के लिए राह चलते चलते हुए लोग इकठ्टे होने लगे और देखते ही देखते थोड़ी देर में वहां अच्छी-खासी भीड़ इकट्ठी हो गई. अतः बाध्य होकर रतिकान्त को बगीचे की निगरानी और उन्नति साधन के महान कार्य से निराश करना पड़ा. मैंने पत्नी को बुलाकर कहा—"बगीचे का काम इसके वश का नहीं है. घर का जो कुछ काम हो करवा लिया करो."

पत्नी श्लेषमिश्रित भाव से बोली—"उसको बरामदे में बिठलादो ताकि राह चलते आदमियों को बैठा-बैठा गिनता रहे, मेरे पास उसके लायक कोई काम नहीं है."

अतः बाध्य होकर रतिकान्त को बरामदे का सहारा ही लेना पड़ा और इसी मौके का फायदा उठा कर मेरी सात वर्षीया बेटी मंजु उस पर अधिकार जमा बैठी. मां की दुनियां मे बेकार का आदमी होते हुए भी बेटी की दुनियां में रतिकान्त विभिन्न कार्य-अकार्य में व्यस्त रहने लगा.

महीने भर बाद एक योग्य मेट मिल जाने के कारण रतिकान्त को फिर दफ्तर के भीतर का काम सम्हालना पड़ा. किन्तु सम्हाल नहीं पाया. दफ्तर के उसी पुराने कोने में एक स्टूल पर आकर बैठा, स्वयं को पुरानी ड्यूटी से बांधने का प्रयत्न भी

किया. किन्तु न जाने कहां कोई मोगमुन टूट गया था, इसलिए पग-पग पर वह गलती करने लगा. दफ्तर के काम मे लापरवाही करने लगा. टेबुल कभी पोंछता, कभी नहीं, सुराही खाली पड़ी रहती. एक दिन बोला—"मेरी तबियत ठीक नहीं है." मैंने अस्पताल की पर्ची उसे दी और अस्पताल भेज दिया. किन्तु वहां से भी दो दिन बाद लौट आया, बोला—"अच्छा नही लगता." डाक्टर को कह कर उसके लिए थोड़े दूध का इन्तजाम करा दिया. किन्तु बाद मे मुझे मालूम हुआ कि दूध पीना भी वह कभी-कभी भूल जाता है.

एक दिन देखा, मेरे दफ्तर में चुपचाप खड़ा है .

"क्या चाहते हो ?"

" एक चिट्ठी लिखनी है हुजूर. लड़की की कोई खबर नही है."

रतिकान्त के परिवार का झमेला नही है, अब तक मैं यही समझता था. आज पहली बार मालूम हुआ कि उसके एक लड़की है—सात-आठ वर्ष की. अपने मामा के घर रहती है. उसकी फाइल खोल कर देखी—चिट्ठी पत्री का आदान-प्रदान कभी नहीं हुआ था. पूछा—"वे लोग तुम्हें तुम्हारी लड़की की खबर नहीं भेजते?"

"कहाँ भेजते है ?"

"तुम भी कभी पत्र नहीं लिखते ?"

उसने कोई जवाब नही दिया मैंने एक पर्ची लिख कर उसे दे दी—चिट्ठी लिखने का अनुमति-पत्र !

इसके पन्द्रह दिन बाद ही रतिकान्त की छुट्टी का दिन आ गया .

उस दिन दफ्तर से घर लौट कर सुना, मजु की नाचने वाली मेम गायब है . लड़की रो-रो कर घर को सिर पर उठा रही है और उसकी मा जिस तरह पैर पटक-पटक कर चल रही है, मुझे लगा कि यह घर किसी भी क्षण हमारे सर पर गिर सकता है . सुन कर मेरा मन भी खराब हो गया . अच्छा खिलौना था . एक छोटी-सी चेयर पर एक प्यारी-सी मेम थी, चाबी भरते ही वह नाचने लगती और उसके साथ-साथ ही दिशु-दर्शक का सम्पूर्ण हृदय नाचने लगता . मंजु का दुःख जो कितना तीव्र है, मैंने अनुमान करने की कोशिश की . घर मे कैदियो का आना-जाना लगा रहता है . अतः साधारण नियमानुसार सर्वप्रथम सन्देह उन्ही लोगों पर किया जाता है . बड़े जमादार ने सबो की भरपेट पिटाई की किन्तु मेम साहब का उद्धार नही किया जा सका . मजु की मा बोली—"यह जरूर तुम्हारे उस कुबड़े का काम है ."

मैंने प्रतिवाद के स्वर मे कहा—"यह कैसे हो सकता है ? वह तो काफी दिनों से घर पर आया ही नहीं ."

"उसने जरूर उस खिलौने को पहले ही पार कर दिया था . इतने दिनों मे तो

तुम्हारी वेटी को उस खिलौने की याद ही नहीं आई . आज हठात् मेम साहव की याद आई है तो रोने लगी है ." कह कर पत्नी ने मंजु को धमकी दी और इसके फलस्वरूप मंजु का रोना तीव्र गति से हो गया . फिर उसने रुक कर कहा—"नहीं . कुवड़ा मेट वहुत अच्छा है . वह कभी मेरी मेम को नहीं लेगा ."
अन्त में संन्देह के कारण दो कैदी और वर्तमान मेट को वापस दूसरे काम पर लगा दिया'.
निश्चित तारीख को सुवह आठ वजे रतिकान्त खलास हो गया . उसको जाते समय एक दिन की खुशकी के छः आने तथा अच्छा काम करने के पुरस्कार-स्वरूप दो रुपये दिए गये . जाते समय मेरी नज़र उसके पेटेन्ट प्रणाम और कपड़े-लत्तों की एक पोटली पर पड़ी .
उस समय दिन के करीव दस वजे होंगे , दफ्तर में काम की भीड़ थी . दम मारने की भी फुर्सत नहीं थी . अचानक गेट के पास शोर हुआ . मेरे नये चपरासी ने आकर सूचना दी—"पुलिस रतिकांत को पकड़ कर लाई है ."
—"क्यों ?"
—"उसकी पोटली से चोरी का माल वरामद हुआ है ."
वाहर आकर देखा, रतिकान्त मुँह लटकाये खड़ा है और एक पहलवान सिपाही ने उसका हाथ पकड़ रखा है . जमादार के हाथ में खिलौना है. मुझे देख कर गर्वीली चाल से चल कर मेरे पास आकर खिलौने को मेरी ओर वढ़ाते हुए वोला—"उसकी गठड़ी से निकला—मुन्नी का मेम साहव ."
पूरी घटना सुनी . गेट से निकल कर रतिकान्त जव रास्ते की ओर न जाकर मेरे वगीचे की ओर चला,तभी सिपाही को संदेह हो गया था . सिपाही ने उसका पीछा किया. वगीचे में जाकर एक पेड़ के नीचे से मिट्टी हटा कर ज्योंही रतिकान्त ने इस खिलौने को अपनी गंठड़ी में रखा, सिपाही ने झटपट उसे रंगे हाथ पकड़ लिया .
मेरे सहकारी विनयवावू वोले—"मैंने आपको पहले ही कह दिया था कि सर इसकी कुवड़ में शैतान का खजाना भरा है . अव इसको अच्छा-खासा पाठ पढ़ाना होगा ." मेरे आस-पास खड़े अन्य व्यक्तियों की राय भी यही है, मुझे महसूस हुआ अव प्रतीक्षा सिर्फ मेरे हुक्म की थी . हठात् भीड़ में चांचल्य की सृष्टि हुई . भीड़ को ठेल कर मेरी वेटी मंजु मेरे पास आई . उसने एक वार चारों ओर नज़र घुमाई. फिर जमादार के हाथ से मेम साहव को लेकर रतिकान्त के हाथ में देकर वोली—"इसे टुनि को देना और कहना, मंजु ने भेजी है . समझ गए ?" इसके वाद किसी भी प्रकार के प्रत्युत्तर की प्रतीक्षा किये विना ही वह वापस भीड़ को चीर कर चली गई . निर्विकार खड़े रतिकान्त की आंखों से आंसूओं की धारा निकल पड़ी .

—अनु० : डॉ० श्री गोपाल माहेश्वरी 'प्रताप'

जल-अप्सरा

● लक्ष्मीनाथ बेजबरुवा

लोग इसे कहते रुपही, अर्थात् रूपसी—सुन्दरी. यह है एक छोटी नदी. गहरी. किन्तु सूखे मौसम में यह एक पतली धार रह जाती. पानी शीशे-सा चमकने लगता. बरसात में पुनः मटमैली हो जाती. शरद ऋतु की रुपही हो उठती लम्बी लजीली-शर्मीली. ग्रीष्मान्त में यह पुनः तटों तक उमड़ आती और निर्जन में नाचती—गरजती बहती रहती.

रुपही के एक सुनसान तट पर गूलर का पेड़ था इसके नीचे प्रत्येक सांझ-सवेरे एक कन्या बैठी मिलती. कन्या की आंखें धार के बीच भवर पर टिकी रहतीं. भवर में यह रुपही का मुंह था. क्योंकि घास, उखड़ी हुई लकड़ी, नरकुल जो कुछ भी बह कर आता, नदी के गर्भ में समा जाता

नित्य ही कन्या नरकुल एकत्र करती, एक-एक कर भवर में फेंकती और व्यग्र नेत्रों से देखती कि प्रत्येक नरकुल पहले धीरे-धीरे फिर तेजी से चक्कर लगाता हुआ खड़ा हो जाता और फिर सिर के बल भवर में गोता लगा जाता. लड़की रुपही से बातें करती हुई कुछ ऐसी विचित्र पंक्तियाँ गाती—

> तुम सुन्दर हो मैं भी सुन्दर,
> दोनों बने और भी सुन्दर।
> नरकुल की मैं नाव खे रही,
> बीच धार में डूब गयी, वह।

१६ साल की लड़की को ऐसे बचकाने खेलों में क्या रस मिलता था, यह केवल वह जानती थी या ईश्वर ही जानता था.

समय का उसके साथ मेल नहीं हुआ. जैसे वह पेड़ के नीचे बैठी समय का अपव्यय करती रहती, समय वैसा नहीं कर सका. अतएव वह उसे पीछे छोड़ आगे खिसक गया. समयानुसार उसका वर और विवाह-दिवस उपस्थित हुए. वर दो बीसी दो वर्ष का लड़का था—सुन्दर प्रतिष्ठित और कुलीन. लड़की के पिता-माता ने स्वीकृति दे दी और विवाह निश्चित हो गया. लड़का और लड़की भी मिले और उन्होंने बातें कीं. विवाह के लिए केवल एक सप्ताह रह गया. अभी भी कन्या अपने भावी वर की अपेक्षा रुपही को लेकर अधिक भूली रहती. उसके मन में कोई विचार आकर उसे परेशान नहीं करता. पहले की तरह वह दिन के अधिक

भाग में नदी-तट पर ही बैठी रहती. वर उसके ढंग देखकर दुःखी होता.

एक शाम नदी-तट से लौट कर उसे ज्ञात हुआ कि वर उससे विवाह न कर दूर चला जाएगा. यह समाचार उसे चुभ गया. उसने सोचा, वह इसी समय उसके पास दौड़ी जाएगी और उससे न जाने की प्रार्थना करेगी. किन्तु उससे अपने से पूछा, थोड़ा सा भी लज्जा-बोध होते हुए वह ऐसा कैसे कर सकेगी. चिताओं ने उसकी नींद छीन ली. बाहर स्वच्छ चाँदनी छिटकी थी. अपना बिछौना छोड़ वह छिप कर नदी-तट की ओर चल पड़ी. वहां पहुंची ही थी कि एक क्षण में उसकी चिताएँ रूपहो में समा गयीं. पहले की तरह उसने नरकुल एकत्र किये और उन्हें एक-एक कर भंवर में फेंकने लगी.

तब अकस्मात् उसने अपनी आंखों पर पीछे से दो गरम हाथ महसूस किये . उसने अपने को छुड़ा लिया और घूम कर देखा—यह उसका वर था.

दोनों जोर से खिलखिला पड़े. नदी के उस पार प्रतिध्वनि भी उनके हर्ष में सम्मिलित हुई यहां तक कि गूलर के पेड़ पर बैठा उलूक दम्पति भी हर्ष संवरण न कर सका और जोर से हूक उठा.

जो थोड़े से नरकुल उसके हाथ में रह गये थे, उन्हें भी उसने एक साथ ही भंवर में फेंक दिया. उसने तीन बार ताली बजायी.

'तुमने यह क्या किया ?'—वर ने पूछा.

'सिर्फ एक लड़की अभी-अभी उस भंवर में डूब गयी. किन्तु मैं तो एक चिड़िया हूं. आओ और मुझे पिंजरे में बन्द कर दो. ●

—अनु० डॉ० रमानाथ त्रिपाठी

समाधान

● वसन्तकुमारी पट्टनायक

दिन बीत गया. एक-एक कर सभी चिड़िया दल बांध कर किचिर-मिचिर करती हुई लौट रही हैं. अंधेरा होने के पहले ही उन्हें अपना-अपना आश्रय खोज लेना होगा. बंगले के बरामदे में अकेली बैठ-बैठी एमिली उसी तरह रास्ता देख रही है—इतना समय हो गया—कहां गया वह ? भूख नहीं प्यास नहीं⋯सवेरे से निकला है, सांझ हो गयी. न, इस बार इसे उचित शासन की आवश्यकता है, कोई दंड न देने से यह एकदम मुंह लाल हो गया है⋯दुष्ट⋯प्यार का मूल्य नहीं समझता⋯वह निर्बोध है—क्रोध मिश्रित अभिमान से एमिली का मुख लाल दिखायी देने लगा.

नॉटी. एमिली के लिए प्राण से भी बढ़ कर है यह पिल्ला—यह बात सभी जानते हैं. पहले जिस दिन मि० राबर्ट ब्राउन उड़ीसा के इस पहाड़ी अंचल में आये, उस दिन उनके साथ केवल एमिली ब्राउन थी.दीर्घ साढ़े छः फुट ऊंचे राबर्ट साहब-बलिष्ठ गठन, लाल मुंह. गंभीर चेहरा. और उनकी बगल में हाथ में हाथ बांधे समान गति से पैर मिला कर चल रही थी एमिली ब्राउन.

देसी लोग एवं देसी जलवायु के मध्य जीवन-यापन पहले इस साहब-दंपति को अवश्य ही कुछ असुविधाजनक प्रतीत हुआ था. राबर्ट साहब ने आफिस के काम में अपने को अति शीघ्र व्यस्त कर लिया, किंतु एमिली का समय कैसे कटे ? यहां उनकी भाषा समझने वाले लोगों की संख्या कम है. और जो समझते हैं वे सभी दिन के समय आफिस चले जाते हैं. इधर घर में कोई बच्चे-अच्चे नहीं कि जिनके पीछे कुछ समय देकर एमिली निःसंग क्षणों को भूल सके. दिन के समय उन्हें एक-एक पल बिताना कठिन होता.

उसी समय उनकी भेंट हुई इस आवारा देसी कुत्ते नॉटी के साथ. दो मास का गुल गुला पिल्ला⋯काली काली आंखों से मुटुर मुटुर उनकी ओर देख रहा था. उसकी आंखों की चितवन में न जाने क्या था, कि एमिली ने उसे पास बुलाया—गोद में खींच लिया. इसके पश्चात् धीरे-धीरे उनके अंतर का समस्त अवसाद मिट गया. पत्नीभक्त राबर्ट साहब से उन्होंने जो नहीं पाया, वह सब क्या नॉटी से पाया ?—यह प्रश्न आज भी उनके मन में क्षण-प्रतिक्षण उठता है, वे नॉटी को क्यों इतना प्यार करती हैं ? हो सकता है नॉटी अत्यन्त उन्हें प्यार करता हो⋯

अथवा इसका सम्पूर्ण विपरीत हो सकता है—उसे पाकर उनके हृदय को आघात देने वाले रुद्ध मातृत्व का द्वार अकस्मात् खुल गया.

वे नॉटी को बांध कर न रख पातीं. बांधने पर वह कूँ कूँ कर मुक्त होने के लिए अनुरोध करता. और-खुला रहने पर भी वह सभी समय घर में रहने के लिए राजी नहीं होता. एमिली के समस्त स्नेह-आदर को पीछे फेंक कर झट बाहर भाग जाता. दूसरों के घर में घुस कर जो पाता छिप कर खा जाता. फलस्वरूप उन लोगों के घरों से मार खा कर अनुनय-विनय के लिए लौट आता एमिली के पास. दोष करता किसी के पास और आकर क्षमा माँगता एमिली से. नॉटी का मुँह देख कर एमिली सब समझ जाती. उनके मन पर आघात लगता—किंतु आज्ञाहीन नॉटी को अपने प्राण की व्यथा कैसे समझाए ?

जिस दिन नॉटी को घर लौटने में देर हो जाती, एमिली घर-घर बुलाती हुई खोज करती. किसी दिन मार खाती हुई अवस्था में पकड़ा जाता, किसी दिन किसी के घर में बांध लिया जाता. नॉटी को देखकर उनके मन में कष्ट होता शायद खूब अधिक कष्ट होता—तथापि वे सब सह लेती.

जिस समय पड़ोस के बाबूलोग घर में न होते, एमिली को चिढ़ाने के लिए बाबुओं के नौकरों को सुविधा मिल जाती. वे जानते कि नॉटी को कष्ट देने से एमिली को कष्ट होगा. उसे मार लगाने से यह मार एमिली की देह पर पड़ेगी. इसलिए उन्होंने जितनी भी गालियां एमिली से सुनी होती, सुविधा मिलने पर मूल-सूद सहित उनका शोध कर दिया जाता. नॉटी को किसी के घर में प्रवेश करता देखते ही उसका रास्ता बन्द कर जी भर कर पीटने के लिए वे चल पड़ते. इधर वह भी जानता कि उसका चीत्कार सुनकर एमिली निश्चय ही दौड़ी आएगी. अतएव उसे छूने मात्र से वह ऐसी चीत्कार छोड़ता कि अंत में एमिली आकर घटनास्थल पहुंच जाती. बिजली की चमक के साथ कड़क ध्वनि के समान ही जहां नॉटी को मार पड़ती एमिली का स्वर सुनाई पड़ता. वे कहती—"मनुष्य ऐसा निर्दय कैसे हो जाता है ?...पशुओं में तुम लोगों की अपेक्षा अधिक दया माया है... जरा सा खा लेने मे इतनी निष्ठुरता से मार रहे हो...तुम लोगों को यदि कोई इस तरह मारे, तो तुम लोग सह सकोगे ?" इस तरह सब प्रकार की बातें कह कर नॉटी को छुड़ा लातीं. छूट जाने पर मालकिन का पक्ष पाकर उसका साहस बढ़ जाता और उनकी टांगों के पास खड़ा होकर नौकरों की ओर देखता हुआ खूब जोर से भूंकने लगता,

इस नॉटी को लेकर उन्हें कितनी चिंता है. एक तो आज्ञाहीन उस पर दुष्ट. इसका क्या किया जाय ? कहीं जाने पर साथ ले जाए बिना नहीं बनता—

लौटकर देखेंगी कि उनका गाउन, न मिलने पर मोजा अथवा जूता, कुछ न मिलने पर उनका रुमाल दांत से चीर फाड़कर टुकड़े-टुकड़े कर रख देगा. घर के भीतर बन्द कर देने पर भी निस्तार नहीं—कुछ न मिलने पर मेज-कुर्सी की टांगों को मुंह में भर दांतों से काट कर रख देगा. इसके अत्याचार से सभी चीजों को रखाते रखाते वे परेशान हो गयी थी.

एमिली रह-रह कर हाथ घड़ी देख रही है—ठीक छः बजे यदि न लौटा तो वे स्वयं जाएंगी. इसी समय हवा से अकस्मात नाटी की कातरध्वनि तिरती आ पहुंची. एमिली चौंक उठी. तब कान लगा कर भली प्रकार सुनने की चेष्टा की—हूं यह तो उसी का स्वर है"'कूं कूं स्वर मे जैसे कोई किसी से विनती कर रहा है. एमिली क्या अब और बैठी रह सकती. आंधी के वेग से रास्ते की ओर दौड़ पड़ी. शब्द के अनुसार एक घर में प्रवेश कर उन्होंने देखा, नाटी की चारों टांगें एकत्र कर बांध दी गयी है और वह घिसट घिसट व्याकुल होकर कूं कूं कर रहा है. उसे घेर कर कुछ छोटे बच्चे और नौकर हाथ मे एक-एक छड़ी लिए हुए मजा देख रहे है.

यह दृश्य देख एमिली स्तम्भित रह गयी—क्या करें समझ न सकी. क्रोध और घृणा से उनका मुख लाल हो गया दोनों ओंठ थर-थर कांप उठे. वे अपनी भाषा मे चीत्कार करने लगी—तुम सब को मैं गोली मार दूंगी'''जानवर कहीं के''' इस बर्बर देश मे मनुष्य रहते है ऐसा मुझे विश्वास नहीं होता'''तुम सबके विरुद्ध पुलिस स्टेशन में रिपोर्ट करूंगी. मैं कहती हूं उसे शीघ्र खोल दो

एमिली की धमकी से कोई नही डरा. घर मे कोई बड़ी आयु का नहीं है. सभी बाहर चले गये है. घर में मालिक न होने से—चाकर और बच्चों का राज्य—उन्हें डांटने वाला कोई नहीं. नौकरों ने भी दूने जोर के साथ इशारों से बता दिया कि कुत्ता उनकी रसोई में घुस कर सब जलपान खा गया है—बाबू लौट कर क्या खाएंगे.

एमिली ने देखा धमकी का कोई फल नहीं तो नम्र होकर बोली—यदि तुम्हें कोई इसी तरह बांध दे, तो तुम भी क्या नहीं रोओगे ? कुत्ता होने पर भी उसमें जीवन है. केवल मैं ही उसकी बात जानती हूं, क्योंकि मैं उसे प्यार करती हूं. मैं अनुरोध करती हूं उसे दयाकर छोड़ दो.

एमिली के स्वर की नम्रता लक्ष्य कर चाकरों ने नाटी को खोल दिया.

नाटी खोल दिया गया. एमिली उसे गोद मे भीच कर जैसी आंधी की तरह आयी थी वैसी ही लौट गयीं.

इस बीच कुछ दिन बीत गये. राबर्ट साहब अपने देश को लौट जाना चाह रहे है वे अत्यन्त चंचल प्रकृति के मनुष्य है. किसी नौकरी में दो वर्ष से अधिक नहीं

रह पाते. एक बन्धु के अनुरोध पर भारत आये थे. भारत के विभिन्न स्थलों पर चार-पांच वर्ष बिता कर पुनः उनकी इच्छा हुई कि अपने देश वापिस जाकर वहीं नौकरी करे. उनके चरित्र में एक विशेषता है—उनके मन में जो बात एक बार समा जाए उसे पूरा किये बिना उन्हें शान्ति नहीं मिलती.

राबर्ट साहब ने एमिली से अपने मन की बात स्पष्ट कह दी. एमिली भी यही चाहती थीं. यह देश उन्हें और अच्छा नहीं लगा—वे भी वापिस जाना चाहती थीं. एक मास के पश्चात् चले जाने का उन्होंने निश्चय किया.

मास बीत गया. एक मास के भीतर एमिली ने नॉटी के विषय में बहुत सोचा, उसके लिए बहुत रोयीं, किन्तु कोई कूल-किनारा नहीं पा सकीं. राबर्ट साहब ने स्पष्ट मना कर दिया. नॉटी को साथ नहीं ले जाएगें तो उसे किसके पास छोड़ जाएं ?

सांझ हो गयी. एमिली बाहर बरामदे में पड़ी आराम कुर्सी पर आकर बैठ गयी. आकाश के अगणित तारों की ओर देखती हुई उपाय खोजने लगी. बीच बीच में एक-एक उल्का तारा टूट टूट कर गिरने लगा—ठीक उसी तरह जैसे कि उसके मन में नॉटी की एक-एक स्मृति रेखा खींच कर टूट जाती. अनजाने ही उनके नेत्रों से आंसुओं की झड़ी लग गयी. नॉटी को साथ नहीं ले जा सकेंगी. ... तो उसे किसके पास छोड़ जाएं ? कौन इस आशा हीन जीव की शरारतें (दुष्टामि) सहेगा ?

उन्होंने अपने जीवन में अनेक अच्छे कुत्ते देखे हैं किन्तु नॉटी के समान कोई भी उनके मन पर गंभीर रेखापात न कर सका. अपने बेटे के नाम पर यही नॉटी है—[illegible] दोष किये हैं कितने कष्ट दिये हैं. यह देशी पिल्ला है— तथापि इसने [illegible] ने एमिली के प्राण का स्पर्श किया है. उसके जीवन ने एमिली के जीवन के साथ [illegible] मिला कर चलने का दावा किया है. एमिली ने सामने देखा. धुंधले अंधेरे में नॉटी पूंछ हिला रहा है. नॉटी का यह आनन्द देखकर उन्हें [illegible] [illegible] सचमुच वे विश्वासघातक हैं.

[illegible] छोड़ कर नॉटी को देख उन्होंने अत्यन्त अस्पष्ट स्वर में कहा, [illegible] [illegible] दिया जाएगा. उस धुंधले अंधकार में उन्होंने देखा जैसे नॉटी का मुंह [illegible] रहा है— इसने स्नेह, इसकी ममता की क्या यह सीमा है, [illegible] प्रतिवाद करती उसे न मारने के लिए, [illegible] पीछे छोड़ जाने के लिए. [illegible] अपने धर्म के विरोध में [illegible] [illegible]

शेष दर्शन के लिए आने वाले बाबुओं का प्रथम प्रश्न होता – नॉटी का क्या करेंगी ? वे लोग जानना चाहते जिस देशी कुत्ते को एमिली ने इतना स्नेह दिया उसकी शेष परिणति क्या होगी ?

एमिली कहती – उसको मार कर जाऊँगी , पूछने वाले बाबू चकित होते . वे लोग बाहर छोड़ जाने का परामर्श देते – जैसे आया था वैसे ही चला जाएगा . यह बात सुन कर एमिली विरक्त हो जाती – वे नॉटी को शान्ति से रखना चाहती हैं – उसे मार कर स्वयं शान्ति से रहना चाहती है . नॉटी के विषय में वे सोच सोच कर स्वयं नहीं रोएँगी और उसको भी याद में छटपटा कर नहीं मरने देंगी . सब चकित होते —

कुत्ते के लिये जो इतना रोयी है, वही उसे जान से मार डालने की व्यवस्था कर रही है ! यह क्या शान्ति से रखने का उपाय है !! ये लोग बड़े अद्भुत हैं, सच-मुच.........इस समय जिसके लिये प्राण दे देने के लिए पीछे नहीं होते, दूसरे क्षण उसका जीवन समाप्त करने लिये उसी प्रकार आगे बढ़ जाते है .

एमिली ने फिर सोचा—सोचने का जैसे अन्त ही नहीं इस पूरे मास भर वे नॉटी को जितना ही दूर रखने की चेष्टा करती रही, वह उतना ही उनके पास बना रहा . अपने कष्ट के समय उन्होंने नॉटी को अपने पास रखा था, आज नॉटी की विपत्ति के समय उसने उन्हें नहीं छोड़ा .

इसके दूसरे दिन . सूर्य डूब गया . नॉटी जो सब खाना पसन्द करता—उसे जी भर कर खिला कर एक क्षण के लिये उसे दोनों हाथों से उठा कर चिपटा लिया . उस समय उत्तेजना से उनका सारा शरीर काँप रहा था .

नॉटी को गोली मारी जायेगी वह चली गयी . घर के सामने ऊबड़-खाबड़ जमीन का एक खण्ड है . उसके भीतर राबर्ट साहब ने उसे गोली मारने का स्थान चुन लिया .

बंगले के सभी किवाड़-खिड़की बन्द कर सुनसान घर के भीतर एमिली अकेली घुटने के बल बैठ कर ईश्वर की प्रार्थना कर रही थी . अत्यन्त व्याकुल होकर नॉटी की आत्मा की मुक्ति-भिक्षा माँग रही थीं .
तीन बार गोली चलने का शब्द हुआ सच में जैसे तीनों गोलियाँ आकर लगीं एमिली की छाती में . ●

—अनु० : डॉ० रमानाथ त्रिपाठी

(उड़िया साहित्यिक त्रैमासिक 'दिगन्त' से साभार)